श्री पुंगलिया सरदार जैन ग्रन्थमाला का पुष्प नं० ५

प्रखरवक्ता आत्मार्थी मुनिश्री मोहनऋषिजी महाराज साहब के घाटकोपर (बम्बई) और नागपुर में दिए हुए व्याख्यानों का

शुभ संग्रह

व्याख्यान वाटिका

संग्राहक

उत्तमचन्द कीरचन्द गोसालिया

लाल बंगला, घाटकोपर
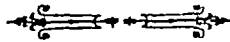
अनुवादक

पं० नटवरलाल के० शाह, न्यायतीर्थ

स्नातक, श्री जैन गुरुकुल, ब्यावर
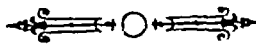
वीर संवत् २४६४ | विक्रम संवत् १९९४

प्रथमावृत्ति | प्रति १०००

प्रकाशक—
श्री पुंगलिया सरदार जैनग्रन्थमाला,
इतवारी बाजार, नागपुर सिटी.

श्री शम्भूसिंह भाटी, द्वारा
आदर्श प्रेस, केसरगंज, अजमे
में मुद्रित।

समर्पण

आचार्य श्री होते हुए जो विनय-विभूति है ।
पूज्य श्री होते हुए जो प्रभुता से पर है ॥
शिरोमणी होते हुए जो संत के सेवक हैं ।
गुरुवर्य होते हुए जो शिष्य के भी शिष्य हैं ॥
ज्ञान मूर्ति होते हुए जो नम्रता की मूर्ति हैं ।
तपो मूर्ति होते हुए जो क्षमा के अवतार हैं ॥

ऐसे

परम करुणासागर, दयालुदेव, जैनाचार्य, तपोधनी, तपस्वीदेव, तपोमूर्ति

पूज्य श्री १०८ श्री देवजी ऋषिजी महाराज श्रीजी की

पुनीत सेवा में त्रिकाल वंदन !

श्रीजी के प्रभावक प्रवचन से पुनीत, पुन्य प्रभावक,

श्रावक शिरोमणी, साधुभक्त,

दानवीर श्री सरदारमलजी पुँगलिया (नागपुर) की प्रेरणा से

श्रीजी की छत्र-छाया में

ग्रथित आगम-वाटिका के पुष्पों की माला स्वरूप

यह सेवक की पामर सेवा रूप लघु पुस्तिका

सविनय समर्पण

महावीर भवन, नागपुर] —लेखक

दानवीर

श्रीमान् सेठ नेमीचंदजी सरदारमलजी पुँगलिया

की

अ० सौ० धर्मप्रेमी श्रीमती मगनदेवी की तरफ से

अपनी स्वर्गीया पुत्री

श्री जमनाबाई की पुण्य स्मृति में

सादर सप्रेम भेंट।

श्री० दानवीर पुंगलियाजी की सुपुत्री
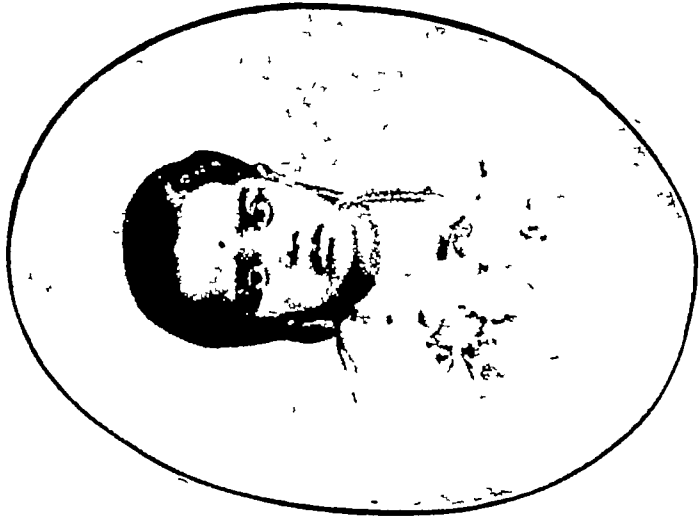
स्वर्गीया जमनाबाई, नागपुर

श्री० पुंगलियाजी के नेक सलाहकार

प्राइवेट सेक्रेटरी श्री० मूलजीभाई शाह

श्री० पुंगलियाजी की सुपुत्री की अमर यादगार
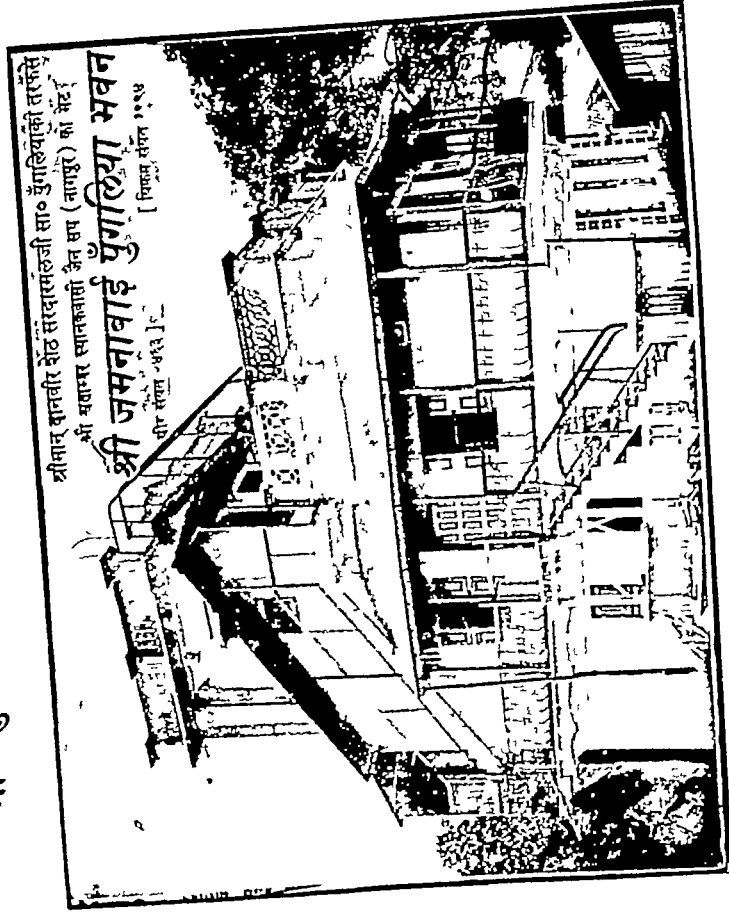
श्री० जमनाबाई पुंगलिया भवन, नागपुर

यत-किञ्चित्

एक समय था, जब जैन लेखकों ने अपने प्रचंड पाण्डित्य, अगाध अध्ययन और तीव्र लगन के फलस्वरूप उच्च श्रेणि के साहित्य का निर्माण कर भारतीय-साहित्य के भण्डार को अनमोल बनाया था। व्याकरण, साहित्य, काव्य, कोश, अलंकार, दर्शन, नीति, धर्म, अध्यात्म, वैद्यक, ज्योतिष, गणित, विषय के अनुपम ग्रंथ आज भी विद्वत्समाज की आदर की चीज़ बने हुए हैं। एक अजैन विद्वान ने कहा था, कि यदि जैन साहित्य को जुदा कर दिया जाय तो भारतीय संस्कृत साहित्य फीका दिखाई देगा। प्राकृत भाषा को तो जीवन ही जैन साहित्यकारों ने दिया और उन्होंने ही उसका पालन-पोषण कर के उसे आदरणीय बना कर जगत् के समक्ष रखा। जैन लेखकों ने यदि प्राकृत भाषा को उपेक्षा की दृष्टि से देखा होता तो हिन्दी भाषा का इतिहास ही शायद अन्धकार में विलीन होता।

साहित्य का रूप अब पहले से बहुत अधिक विशाल हो गया है। साहित्य-संसार में विज्ञान के आविष्कारों के साथ-साथ साहित्य के अंगोपांगों का भी विकास हुआ है और प्राचीन अंगों की पद्धति में भी आमूल परिवर्तन हो गया है। कुछ गिने-चुने अपवादों को छोड़ कर जैन साहित्य कारों ने या तो इस परिवर्तन पर पूरा लक्ष्य ही नहीं दिया या उपेक्षा का भाव दिखलाया है। यही कारण है कि जैन साहित्यकारों का युग के अनुरूप साहित्य का निर्माण करने की ओर ध्यान नहीं गया है। हमारे यहाँ क्या नहीं है? सभी कुछ है, पर वह विशाल संस्कृत-प्राकृत साहित्य में यत्र तत्र बिखरा पड़ा है। उसे खोज निकालने की और आधुनिक प्रणाली से सुसंस्कृत रूप में रखने की आवश्यकता है।

प्रस्तुत व्याख्यान संग्रह के व्याख्याता आत्मार्थी मुनिराज श्री मोहन ऋषिजी स्वामी और इसके संपादक महोदय अवश्य ही धन्यवाद के पात्र हैं। जिन्होंने एक ऐसी चीज सर्वसाधारण के सामने रखी है, जिसमें रूढ़ विचारों के स्थान पर मौलिक विचारों को बड़ी सुन्दरता से व्यक्त किया

है। और जैन साहित्य में कुछ नये विचारों का समावेश किया गया है।

इस संग्रह में कुछ भाग तो ऐसा है जो विशेषतः जैन-समाज के लिए उपयोगी है और अधिक भाग ऐसा जो सर्व साधारण के लिए एक-सा विचारणीय और आचरणीय है। इस प्रकार पुस्तक यदि दो विभागों में अलग अलग छपती तो अच्छा होता।

आत्मार्थी मुनिजी की एक विशिष्ट शैली है। वे अध्यात्मरसिक हैं, बहुत थोड़ा बोलते हैं, चिन्तन में ही प्रायः सारा समय विताते हैं और बड़ी ही नुकीली नजरों से प्रकृति का पर्यवेक्षण करते हैं। इनके इस स्वभाव का असर प्रस्तुत पुस्तक में स्पष्ट दिखाई देता है। किसी छोटी से छोटी घटना से, या रोजमर्रा काम आने वाली किसी चीज को लेकर वे अपने भाव व्यक्त करते हैं। और इस खूबी के साथ कि पढ़-सुन कर दंग रह जाना पड़ता है। उनके यह सीधे सादे सहज उदाहरण मन में कमाल का प्रभाव डालते हैं। इसीलिए प्रस्तुत पुस्तक सर्वसाधारण की चीज है। फिर भी उसमें विचारों की गहराई है और समाज में घुसी हुई अनेकानेक भ्रान्त धारणाओं का संहार करने का सामर्थ्य भी है।

पुस्तक पढ़ने से, एक परिणाम जो सर्व प्रथम निकाला जा सकता है वह यह है, कि मुनिजी की आत्मा समाज को आर्थिक विषमता के कारण अत्यंत विषण्ण हो रही है। स्थान-स्थान पर वे उसका उल्लेख करते हैं और इस विषमता को जन्म देने वाले आधुनिक यन्त्रों को वे समाज में फैले हुए तमाम पापों का प्रचारक मानते हैं। दीनों, भुखमरों, नन्गों अधनंगों की आह से उनका मन क्लान्त है, उनकी बिलबिलाहट को देख कर वे तड़फ रहे हैं। उसे दूर करने को उन्होंने मुख्य दो उपाय बताये हैं, (१) यन्त्रों का अन्त और (२) समाज में श्रीमानों को—सिर्फ श्रीमान् होने के कारण प्रतिष्ठा न मिलना।

हमारे यहाँ आज पैसे का प्रभुत्व है। जहां-तहां पैसे को प्रधानता दी जाती है। विवाह-शादियों में, सभा सोसाइटियों में, उपाश्रयों में, मंदिरों

में, पचायतों में, सर्वत्र श्रीमतों का बोलबाला है। 'सर्वे गुणाः काञ्चन माश्रयन्ति' यह कहावत जैसी हमारे समाज को लागू होती है वैसी शायद किसी और को नहीं। सेठ करोड़ीमल अमुक विद्यालय के अध्यक्ष हैं क्योंकि वे धनवान् हैं, सेठ लखपतराय महासभा के सभापति चुने गये हैं, क्योंकि उन पर दामदेव का अनुग्रह है, इसीलिए सेठ घनीरामजी सर पंच है और इसीलिए रूपचंदजी बुढ़ापे में चौथी शादी कर रहे हैं। निस्संदेह यह सब व्यवस्था समाज के श्रेय को शीघ्र ही रसातल पहुँचाने वाली है और लेखक के मत से घोर पातक है। अपरिग्रहवाद के पुजारी किस दिल और दिमाग से उसे अपनी छाती से चिपकाए हुए हैं?

मुनि श्री ने इस सम्बन्ध में अपने विचार जिस स्पष्टता और निर्भीकता के साथ प्रकट किए हैं, वे अवश्य ही उनके अनुरूप हैं और साथ ही धन के सामने नतमस्तक हो जाने वाले अनगार-वर्ग को एक नया मार्ग बतलाते हैं। साम्यवाद की विचार-सरणि को ले कर उन्होंने जो कुछ कहा है वह टालसटॉय आदि विचारकों के विचारों से कम प्रभावक नहीं है।

इस संग्रह में इतने अधिक मौलिक विचार सुंदरता से निविष्ट किये गये हैं कि भूमिका में उन सबका परिचय देने और आलोचना करना संभव नहीं है। यह कार्य पाठकों के ही सुपुर्द है। वे इसे आदि से अन्त तक पढ़ें, इसका मनन करें और अपने जीवन को वास्तविक मानव-जीवन बनाएँ। पुस्तक के ऊपरी रूप में न अटक कर उसके भीतरी सौन्दर्य का आनन्द उठाने वाले सत्य और शिव की ओर अग्रसर होंगे, ऐसी मेरी आशा है।

ब्यावर गुरुकुल के स्नातक पं० नटवरलाल के० शाह न्यायतीर्थ यद्यपि काठियावाड़ी हैं— उनकी मातृ भाषा हिन्दी नहीं है, तथापि हिन्दी लिखने का उनका उत्साह सराहनीय है।

ब्यावर
ज्ञान पंचमी, १९९४. } शोभाचन्द्र भारिल्ल, न्यायतीर्थ

कृतज्ञता प्रगट

इस व्याख्यान वाटिका को पुस्तकाकार छपवाने के लिए आत्मार्थी मुनि श्री ने घाटकोपर में दिए हुए व्याख्यानों का संपादन करने में भाई श्री उत्तमचंदजी कीरचंदजी गोसलिया ने जो सेवा दी है इसके लिये हम आपका आभार मानते हैं।

बम्बई समाचार दैनिक, जैन प्रकाश, स्थानकवासी जैन, और झलक तथा जीवदया, गौग्रास, नवचेतन आदि पत्रों में व्याख्यानों को छापने के लिये इन पत्रों के संचालकों का आभार मानते हैं।

यह व्याख्यान-संग्रह गुजराती भाषा में था इसका हिंदी अनुवाद करने के लिये श्री प० नटवरलालजी के० शाह न्यायतीर्थ ने और प्रूफ सुधारने में पं० शोभाचंद्रजी भारिल्ल न्यायतीर्थ ने जो योग दिया है उनका भी आभार मानने का भूल नहीं सकते।

श्रीमान् दानवीर सेठ नेमीचंदजी सरदारमलजी पुंगलिया नागपुर निवासी ने यह पुस्तक छपाने का सारा खर्चा अपनी ग्रंथमाला की तरफ से दिया है अतः आपका धन्यवाद पूर्वक आभार मानते हैं।

इस पुस्तक छपवाने की प्रेरणा और धर्म दलाली करने वाले भाई श्री मूलजीभाई नागरदास का भी आभार मानना हम भूल नहीं सकते।

आत्मार्थी मुनिश्री प्रायः करके अपना समय मौन और एकान्त में व्यतीत करते हैं और व्याख्यान आदि प्रवृत्तियों में बहुत कम भाग लेते हैं, तदपि घाटकोपर श्री संघ और नागपुर श्री संघ ने अपनी विनीतभाव से नम्र प्रार्थना करके आत्मार्थी मुनि श्री को व्याख्यान फरमाने के लिये विनती की और जिस विनती को स्वीकार करके आपने पर्युषण आदि पर्व के खास २ दिनों में व्याख्यान दिया, जिसका यह संग्रह है। हम आत्मार्थी मुनि श्री और घाटकोपर (बम्बई) तथा नागपुर श्री संघ का अंतःकरण पूर्वक आभार मानते हैं।

ब्यावर
कार्तिक पूर्णिमा
सं० १९९४

धीरजलाल के. तुरखिया
मंत्री, श्री ऋषिश्रावक समिति.

विषय सूची

रुपया सवा लाख जितना दान करने वाले
दानवीर सेठ सरदारमलजी साहब पुङ्गलिया (नागपुर)

आपने श्री जैन गुरुकुल, ब्यावर को 'देवभवन' निर्माण हेतु
१८०००) रुपये की उदार भेट जाहिर की है।

F A P Press, Ajmer

दानवीर श्रीमान्

सेठ श्री सरदारमलजी पुगलिया

का

संक्षिप्त परिचय
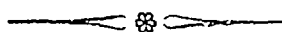
विश्व असीम और अनादि है। उसमें अनगिनते मनुष्य प्राणी समय २ पर जन्म धारण करते रहते हैं, मगर बहुत कम को छोड़ कर अधिकांश मनुष्य प्राप्त हुए सर्वोत्कृष्ट मानव जीवन को उस जीवन की रक्षा में ही व्यतीत कर देते हैं। वे जीवन रूपी पूंजी को जरा भी नहीं बढ़ाते, बल्कि उस पूंजी का उपयोग कर के अगले जीवन को और अधिक दरिद्र बना लेते हैं। कई प्राणी अपनी दिव्य शक्तियों का उल्टा उपयोग कर के सर्वश्रेष्ठ मानव जीवन को सर्व निकृष्ट जीवन बना डालते हैं। इनके जीवन का मुख्य ध्येय सांसारिक आमोद प्रमोदों को अधिक से अधिक प्राप्त करना होता है। और वे व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ती में ही संलग्न रहते हैं। ऐसे मनुष्यों का जीवन या तो निष्फल हो जाता है या विपरीत फलदायी सिद्ध होता है। समाज देश या संसार की उपयोगीता की दृष्टि से उनका अस्तित्व नहीं के समान है।

इससे विपरीत कुछ मनुष्य ऐसे होते है, जो परलोक से एक अच्छी पूञ्जी लेकर आते हैं, और इस लोक मे अपने सदनुष्टानों के द्वारा धर्म और समाज की बहुमूल्य सेवा कर के परोपकार में अपनी समस्त शक्तियों का व्यय कर के, सब प्रकार से अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं से विमुख होकर समाज और धर्म की आवश्यकताओं की पूर्ती को ही सदा सन्मुख

रखते हैं। ऐसे महानुभावों का जीवन धारण करना सार्थक होता है और वे प्राप्त पूञ्जी अधिक बढ़ाते हैं।

इन पंक्तियों में जिनके जीवन की रूप रेखा अङ्कित करने का प्रयत्न किया जा रहा है, वे दूसरी श्रेणी के महानुभावों में अग्रगण्य धर्मपरायण पुरुष हैं। जैन समाज में और विशेषतः स्थानकवासी समाज में सेठ सरदारमलजी पुङ्गलिया से कौन अपरिचित है? सेठ साहब का अन्तः करण आकाश की तरह विशाल, हिमकी भान्ति स्वच्छ और अमृत-बेल की नाई उदार हैं। आपके विद्या प्रेम के ज्वलन्त प्रमाण स्थानकवासी सम्प्रदाय में यत्र तत्र सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं। ऐसे विद्यारसिक और दानवीर सज्जन का जीवन चरित्र श्रीमानों के लिये एक अच्छा आदर्श है और इसलिये उसे यहाँ अंकित करने का प्रयत्न किया गया है।

हमारे चरित्र नायक के पूर्वजों का मूल निवास स्थान बीकानेर है। बीकानेर में आपके पूर्वजों की बड़ी प्रतिष्ठा थी। आपका परिवार वहां के उंगलियों पर गिने जाने वाले प्रतिष्ठित परिवारों में से एक था। सुनते हैं बीकानेर शहर में जब अनेक धन कुबेरों के होते हुए भी किसी के यहां भी तांगा न था तब सबसे प्रथम आपके पूर्वजों ने तांगा लाकर मुसाफिरी की सुविधा का मार्ग सबके सामने प्रगट किया था। बीकानेर में आज भी पुंगलियों का विशाल प्रासाद अपना मस्तक ऊंचा किये खड़ा है और आपके परिवार की कीर्ति का परिचय करा रहा है। परन्तु व्यापारिक कारणों से आपके पूर्वज मध्य प्रान्त के मुख्य नगर नागपुर में आ बसे और वहीं हमारे चरित्रनायकजी का जन्म हुआ। आपका जन्म दिवस भी वही है, जो श्री जैन गुरुकुल व्यावर के अष्टम वार्षिक महोत्सव का, जिसके आप माननीय प्रमुख निर्वाचित किये गये थे। आपके पधारने की पूर्ण अभिलाषा होने पर भी, दुर्भाग्य से आपकी सुपुत्री का अवसान होजाने से नहीं पधार सके। विक्रम सम्वत् १९४४ की मार्गशीर्ष शुक्ला १० को आपने अपने पुण्य जन्म से अपने कुटुम्ब को आमोदित किया था।

आरम्भ से ही आप कुशाग्र बुद्धि थे। तत्कालीन वातावरण के अनुसार आपकी शिक्षा-दीक्षा सम्पन्न हुई और तदन्तर आपने अपना परम्परागत व्यवसाय में पड़ जाने पर भी अन्य क्षेत्रों से सर्वथा उदासीन न रहे और सच्चे श्रावक की भांति अपना जीवन यापन कर रहे हैं। ऐसे सच्चे जैन श्रावक का यह कर्तव्य होता है, कि वह परस्पर विरुद्ध रूप से धर्म अर्थ और काम पुरुषार्थ का सेवन करे। जो इस प्रकार का अपना जीवन बना लेता है, वह क्रमशः चतुर्थ पुरुषार्थ (मोक्ष) को भी प्राप्त कर लेता है। श्री पुँगलियाजी में यह वास्तविकता भली भांति देखी जाती है। वे धनोपार्जन करते अवश्य है, पर शुद्ध संग्रह शील नहीं। दान देने में उनका हाथ कभी कुंठित नहीं होता ! दीन-हीन की सेवा, समाज की विधवा बहिनों की शुद्ध सहायता, शिक्षा-संस्था और साहित्य प्रकाशन के लिये दान देना आपका व्यसन सा होगया है। आप द्वारा दान दी गई रकम का ठीक ठीक पता नहीं लग सकता। आपका दान कीर्ति की कामना से नहीं, बल्कि शुद्ध कर्तव्य पालन के उद्देश्य से होता है। अतएव आप बहुतसी रकमें गुप्त रूप से ही प्रदान करते हैं। उन रकमों का पता पुँगलियाजी के समीपवर्ती उनके प्रायवेट सेक्रेटरी तक को नहीं है। ऐसी हालत में उनके दान का ठीक अंदाज ही नहीं लगाया जा सकता।

स्थानकवासी सम्प्रदाय का पूर्ण आधार मुनिराज हैं। वही सम्प्रदाय के रक्षक, विकासक और धर्मोपदेशक हैं। मुनिराजों की शिक्षा पर समस्त सम्प्रदाय की शिक्षा निर्भर है। अतएव मुनिराजों को उच्चातिउच्च शिक्षा का साज देना मानों वृक्षों के मूल को सीचना है। मूल को सीचने से सारा दरख्त आप ही आप सिंच जाता है, इसी प्रकार मुनिराजों की शिक्षा से सारा सम्प्रदाय सुशिक्षित होता है। इस तथ्य को श्री पुंगलिया जी भली भांति समझते हैं और इसी कारण आप मुनिराजों की शिक्षा पर खासी रकम खरचते हैं।

साधर्मी भाइयों के प्रति आपका अनुपम वत्सलभाव है। उन्हें हर

प्रकार से सहायता पहुंचाना आप अपना कर्त्तव्य समझते हैं। अनेकों भाइयों को आपने अपनी उदारता का परिचय दिया है। जिनके मकान न थे उन्हें मकान दान दिया। जो अर्थाभाव के कारण अपनी संतान का विवाह न कर सकते थे, उन्हें यथोचित सहायता पहुंचाई। नागपुर विश्वविद्यालय मे भी आपने अच्छी रकम प्रदान की है।

आपने नासली में, सूखेड़ा में, रतलाम (नीम चौक तथा साहू बावड़ी) के दो स्थानक आदि का जीर्णोद्धार कराया तथा धर्म स्थानक के लिये नये मकान दिलाए। नागपुर इतवारी का विशाल धर्म स्थानक और व्यायामशाला वनवाने में भी आपका बडा हिस्सा है। प्रायः भारत की कोई भी जैन संस्था ऐसी न होगी, जिसमें श्री पुंगलियाजी का दान न पहुँचा हो। आपका प्रकट दान जितना ज्ञात हो सकता है उससे मालूम होता है कि आपने एक लाख रुपयों से भी अधिक दान दिया है।

साहित्य प्रकाशन के लिये आपने रुपये १००००) निकाले हैं जिसमें से "श्री सरदार ग्रंथमाला" चल रही है। इसी समय आपने अपने श्रद्धेय तपोधनी पूज्य श्री देवजी ऋषिजी के नाम से 'देव भवन' निर्माण करने के लिए श्री जैन गुरुकुल व्यावर को १८०००) रुपये की उदार रकम जाहिर की है।

आपके गुप्त दान की तो कोई गिनती ही नहीं है।

आपकी दानशीलता का प्रभाव आपके सारे कुटुम्ब पर पड़ा है। यही कारण है कि आपकी धर्मपत्नी भी दान देने में शूरा है। व्यावर गुरुकुल को दी हुई १८०००) की रकम आप ही की है। इसके अतिरिक्त बहुत सा गुप्त दान दिया है। आपकी सुपुत्री स्व० मूलीबाई ने भी रु० ५०००) धर्मार्थ प्रदान किये हैं। अभी ही आपने रु० १५०००) की कीमत का भवन अपनी स्व० पुत्री जमनाबाई के नाम पर नागपुर श्री संघ को अर्पण किया है।

सच तो यह है कि स्थानकवासी सम्प्रदाय में आपकी कोटि के उदार

कर्त्तव्यनिष्ठ दानवीर सज्जन बहुत नहीं है। आपका दान विवेकयुक्त और समयानुकूल होता है। शिक्षा प्रेम आपकी नस-नस में कूट कूट कर भरा हुआ है। हमें ऐसे धर्मपरायण पुरुष रत्न पर पूर्ण गौरव है। और शासन देव से प्रार्थना है, कि यह अभिमान चिरकाल तक इसी प्रकार कायम रहे।

आपकी धर्म भावना, उदारता, सरलता, निरभिमानता, स्वधर्म सेवा एवं दानवीरता खानदेश, बिरार, सी० पी० आदि प्रान्तों में प्रसिद्ध है। नागपुर में मुनिवरों के चातुर्मास होने में आपकी दृढ़ भावना और मुनि भक्ति प्रधान है। नागपुर क्षेत्र आपकी धर्म भावना के कारण ही सविशेष प्रसिद्ध हुआ है। आप में ऐसे बाल्यवय के सुसंस्कार परम प्रतापी, तपोधनी तपस्वी देव पूज्य श्री १००८ श्री देवजी ऋषीजी म० सा० के धर्मोपदेश व परिचय से सुदृढ़ हुए हैं। श्वेताम्बर, दिगम्बर, स्थानकवासी आदि सब जैन समाज आपको सन्मान दृष्टि से देखती है। आपकी लोकप्रियता नागपुर में ही नहीं, परन्तु पवनवेग से दूर दूर फैल रही है। जैन संसार में इतनी लोकप्रियता प्राप्त करने वाले बहुत कम होंगे।

प्रखर वक्ता आत्मार्थी मुनि श्री मोहनऋषिजी
म. सा. के घाटकोपर (बम्बई) में दिये हुए

जाहिर-व्याख्यान
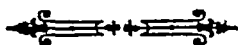
१—हम कहाँ खड़े हैं ?

जिनवाणी का महत्व—प्रभु महावीर ने साड़े बारह वर्ष तक घोर तपश्चर्या की और तपश्चर्या में जो जो अनुभव प्राप्त किये, जो अनन्तज्ञान प्रगट हुआ, वह ज्ञान और वे अनुभव प्रभु ने सर्व जीवों के कल्याण के लिए संसार के सामने उपस्थित किये।

वह दिव्यज्ञान वह दिव्यवाणी कितनी मूल्यवान् होगी ? उस वाणी का अधिकारी कौन हो सकता है ?

प्रभु महावीर ने अनेक गुफाओं मे, पहाड़ों में, जंगलों में विहार कर ये अनुभव प्राप्त किये। उन गुफाओं मे उत्पन्न हुआ ज्ञान तो कोई गुफावासी ही पचा सकता है। सिंहनी का दूध तो कोई सिंह जात शिशु ही पी सकता है !

पशु संसार की अज्ञानता—पशु पक्षी जब छोटे होते हैं तब उनके माता पिता उनकी बहुत परवाह करते हैं, परन्तु पशुओं के दाँत और पक्षिओं के पंख आते ही वे परवाह करना छोड़ देते हैं। वे माता पिता को भूल जाते हैं। और अन्त में वह

पुत्र माता को मातारूप से न समझता हुआ अपनी स्त्री समझने लगता है। यह क्या ? कहां तो वह माता का सबंध ? और कहां स्त्री का ? गरज थी तभी तक वह माता थी। इससे विशेष आश्चर्य और क्या हो सकता है ?

अधोगति का मूल कारण—आज हमारी भी यही स्थिति होने लगी है। धर्मरूपी माता को आज हम भूल गये हैं। और यहां तक कि उसका नाम सुनना भी हमारे कानों को नहीं सुहाता। हम उस धर्मरूपी माता को—धर्मतत्त्व को—दुःख और विपत्ति के समय में ही याद करते हैं। भय और संकट के समय मरणासन्न के अवसर पर उसका स्मरण करते हैं। यही है हमारी अधोगति का मूल कारण। हम धर्मतत्त्व को भूल गये हैं। धर्म रूपी माता का स्मरण छोड़ दिया है।

जीवन पर दृष्टिपात कीजिये—आप कौन हैं ? कहाँ स्थित हैं ? मनुष्यता के गुण हैं या नहीं ? हृदय में पाशविकता है या मानवता ? कभी विचार भी किया ? एक भाई को एक सप्ताह पहिले एक या दो आने दिये हों और यदि वह भाई आपको स्थानक के बाहर मिल गये तो आप फौरन् ही उन से उगाई करेंगे क्यों सही है न ? कितना धैर्य है ? अपने जीवन को कैसा ढ़ाला है ? इसका जरा गहराई से विचार कीजिये।

आप भोजन कर रहे हैं। एक ही चीज मे यदि नमकमसाला कम है तो क्या होगा ? इतनी बड़ी अवस्था हुई। इतनी कीर्त्ति और इतना यश प्राप्त किया। और खूब माल मिल्कत धन दौलत एकत्रित की, लेकिन हृदय पटल पर जरा दृष्टिपात तो कीजिये कि कितना असत्याचरण किया ? हृदयको कितना मलीन बनाया ?

कितना कपट, कितनी दगाबाजी, जालसाजी और किन-किन प्रपंचों की रचना की ?

विकास का क्रम—एक छोटे बच्चे को पाठशाला में भेजते हैं। पहिले तो वह स्कूल जाते हुए रोता है, घबराता है। हम उसे कुछ देकर राजी करते हैं तब वह इच्छा या अनिच्छा से स्कूल जाने लगता है। परन्तु उसका मन खेल कूद ही में लगा रहता है। तीन महिने बाद वह बाल कुछ सीख पायेगा। चारवर्ष बाद वह अनुभवी बन जायेगा। फिर तो आपके इन्कार करने पर भी वह स्कूल जाया करेगा। बाद में तो वह मेट्रीक भी पास कर लेगा। कहिये इस बालक का कितना विकास !

यह धर्मस्थान भी एक पाठशाला है। और हम शिक्षक या अध्यापक हैं; जो कुछ समझिये। आप हैं स्कूल के विद्यार्थी। हम को पढ़ाते हुए और आपको पढ़ते हुए कितने वर्ष हुए ! आपने उस बालक जितना भी विकास किया ? आपने अपने जीवन को थोड़ा सा भी उन्नत बनाया ? किसी एक सद्गुण की भी वृद्धि की ? '०' से '१' अंक को भी सीख पाये ? कहिये क्या उत्तर है ? कुछ नहीं।

विजाति पशुओं में भी विश्वास—आप के नौकर से कोई गलती हो जाय तो आप उसे उपालम्भ न देंगे ऐसा विश्वास आपने पैदा करवाया है ?

एक वार उपवन में मेरा चातुर्मास था। वहाँ पर कुत्ते, बिल्लियाँ और मुर्गियाँ थीं। मेरे सामने कुत्ते खेल रहे थे। वहाँ एक मुर्गी ने प्रसव किया था। वह अपने दस बारह बच्चों को लेकर मेरे सामने से निर्भयता पूर्वक चली गई। कुत्तों से जरा भी भय-

भीत न हुई क्योंकि उसे विश्वास था कि यह मेरे स्वामी का प्राणी है मुझे हरगिज नुकशान न पहुँचायेगा।

किसीने कुत्ते को उपदेश नहीं दिया था। उसे स्वाभाविक संज्ञा थी। उन प्राणियों में कितनी निर्भयता! कितना विश्वास! यह दृश्य देखकर मैं कुछ लज्जित हुआ। मुझे विचार आया कि हम पशु जितनी भी निर्भयता और विश्वास पैदा नहीं कर सके।

दूध जैसे उज्ज्वल बनिये—इतने वर्षों में आपने मणों दूध पिया। यदि दूध स्वच्छ न हो तो नहीं चल सकता। कचरा निकाल फेंकते हैं, परन्तु हृदय को दूध जैसा स्वच्छ और पवित्र बनाया या नहीं? अंदर का कचरा—आंतरिक मलीनता यदि दूर न कर पाये तो क्या दूध को कलंकित न किया?

उस दूध के लिए आपने अनेक बछड़ों को अपनी माता से अलग किया। उन्हे दूध भी न दिया। ऐसा दूध पीकर यदि आप खुद उज्ज्वल और पवित्र बने होते तो दूध पीना सार्थक होता।

बगुलाभक्ति—ठगवृत्ति—नदी के किनारे या समुद्र तट पर बगुले साधुवृत्ति धारण कर लेते हैं। ध्यानस्थ योगीराज का चित्र खड़ा कर देते है। उसकी वह साधुवृत्ति, वह एकाग्रता शिकार ही के लिए होती है। उसी प्रकार आप दुकान खोलते हुए नवकार मंत्र का स्मरण करते हैं। आपका वह स्मरण भी जाल में ग्राहकरूप मानव शिकार पकड़ने के लिए ही होता है। आप यही विचार करते हैं कि अच्छी तादाद में ग्राहक आवें और मैं अच्छे प्रमाण में धनोपार्जन करूं। आपके प्रत्येक कार्यों में वही भावना, वही बगुला भक्ति और ठगवृत्ति नहीं होती क्या?

शक्कर की मिठास को शोभित कीजिये— अनेक मण दूध पीकर भी हृदय दूध जैसा स्वच्छ और पवित्र न बनाया, लेकिन अनेक मण गुड़ और शक्कर खायी तो वैसी मिठास और मधुरता क्या आपकी वाणी में आयी? यदि नहीं तो क्या आपने गुड़ और शक्कर को लज्जित न किया? उसका अपव्यय या दुरुपयोग न किया?

इन हवेलियों में रहना सार्थक कब?—बड़ी बड़ी हवेलियों में और बंगलों में रहते हैं लेकिन क्या मन कभी बड़ा किया? यदि ऐसा न किया तो क्या ये हवेलियां और विशाल बंगले आपसे अपवित्र न हुए?

वह महेतरानो थीं या श्राविका? मैं एक गांव में गोचरी के लिए गया साथ में एक श्रीमन्त श्रावक भी थे। हमारे सामने से एक महेतराणी चली जा रही थी। रास्ता सकड़ा था। गोचरी की दलाली कर पुण्योपार्जन के लिए आये हुए श्रावकजी बोले" चल हठ! दूर हठ!" महेतराणी ने पीछे देखकर कहा—"मालूम न था मा बाप, कि महाराज साहब पधार रहे हैं, माफ करो माबाप" किसका हृदय दूधसा स्वच्छ और किसकी वाणी में शक्कर का मीठापन।

मैंने कहा—"भाई! मैं आपको श्रावक मानूं या उसको श्राविका? मैं आपको श्रावक मानूं या महेतर से भी अधिक नीच?"

आपकी मानी हुई शूद्र कौममें जितनी मात्रामें नम्रता, सरलता, प्रेम और दया आदि होते है। उतनी मात्रा में आप लोगों में है या नहीं? इस बात का जरा एकान्त में विचार कीजिए।

आप एकदम नरम-नरम फलके चाहते हैं, यदि जरा भी करड़ा हो जाय तो नहीं चल सकता। परन्तु नरम फलके खाकर आप कितने नरम और नम्र हुए? नरम हुए या करड़े ही बने रहे?

मांसाहारी कौन?—शराब पीने वाले को हम व्यसनी कहते हैं, नशेबाज कहते हैं। उसका नशा तो २-३ घण्टे ही रहता है तो फिर अहंकार और अभिमान का आप पर चढ़ा हुआ नशा उस नशे से बढ़ कर नहो है क्या? आप पशु का तो मांस नहीं खाते, परन्तु क्या मनुष्य के मांस रूप ईर्षा, द्वेष, कलहवृत्ति, राक्षसवृत्ति आदि का त्याग किया है?

चक्की पीसने वाली और सामायक करनेवाली—आपको स्थिति तो वैसी ही बनी रही। बालक स्कूल में जाकर १४-१५ वर्ष के बाद B A. बना, परन्तु आपने जिन्दगीभर धर्मशाला में आकर क्या सीखा? बहुत सुना परन्तु वहीं के वहीं रहे या कुछ कदम आगे भी बढ़ाये? ऐसी हालत में हमारा सुनाना किस काम का?

एक बाई एक घंटे तक सामायक करती है दूसरी बाई एक घंटे तक चक्की चलाती है। चक्की चलाने वाली बाई ने घंटेभर में ५-७ सेर गेहूँ पीस डाले लेकिन सामायक करने वाली ने क्या पाया?

सामायक करने वाली बहन अपने घर गई। आटा न था। पड़ोस में जाकर एक कटोरी आटा उधार मांगा। पड़ोसिन ने न दिया। तो शुरू हुई लड़ाई और न बोलने लायक अनेक वचन सामायक करने वाली बहन बोल गई तो कहिये उसने सामायक

करके क्या कमाया ? वह यह न समझती कि आज मैंने समभाव रूपी चक्की चलाई है तो मुझमें कितनी शान्ति होनी चाहिए ? एक घंटा चक्की चलाने वाली बहन का आटा पन्द्रह दिन तक चलेगा, इसी न्याय से एक घंटा सामायक करने वाले भाई या बहन की शान्ति पन्द्रह दिन तक बनी रहे तभी सामायक सार्थक समझी जा सकती है।

पालणपुर से बम्बई—गतवर्ष (१९९२) इन दिनों में मैं पालणपुर था। आज मैं यहां (बम्बई) हूँ। इतना अंतर कैसे हुआ ? चारसौ मील पार किये तभी न ? तेली के बैल की तरह यदि पालणपुर में ही इतना चक्कर काटा होता तो कहां होते ? वही न ? आपकी धार्मिक क्रियाएं पन्द्रह वर्ष पूर्व कैसी थीं और आज कैसी है ? आपके हृदय पन्द्रह वर्ष पहिले कितने मलीन थे और अब कितने शुद्ध हुए हैं ? जरा विचार तो कीजिये ! तेली के बैल सरीखी ही आपकी स्थिति है या कुछ अच्छी ? ये बातें बिचारने के लिए अवकाश भी है ?

प्रतिवर्ष केवल एक गुण ग्रहण करते तो ?— इतने वर्षों से मालारूपी घट्टी फिराई, फिर भी कुछ प्राप्त किया ? एक सद्गुण भी ग्रहण कर पाये ? यदि प्रतिवर्ष एक ही प्रकृति का अभ्यास कर एक ही सद्गुण जीवन मे उतारा होता तो ? क्या इतने वर्षों में आप "सद्गुण गण आगार" न बने होते ?

आत्म निरीक्षण किया?–व्यवहारिक कार्यों में तो आप नौकर को सौंपे हुए कार्य का हिसाब लेंगे, उसमें कितनी प्रगति हुई यह भी देखेंगे, लेकिन आपने स्वयं कितनी प्रगति की

इसका विचार किया ? यदि जो प्रगति पहिले थी वही अब भी दृष्टिगोचर होती है, लेशमात्र परिवर्तन बिना वे ही दुर्गुण अब भी पाये जाते हैं तो इतनी धार्मिक क्रियाओं का और इतनी सामायकों का क्या फल ?

सरबत और आईस्क्रीम खाना कब सार्थक होगा ?

उनाले की ऋतु में आई क्रीम खाया, बरफ का ठंडा पानी पिया। सोडा लेमन आदि तरह तरह के सीतोत्पादक पदार्थों का पान किया, लेकिन अपने मगज़ को ठंडा और शान्त न किया। क्रोध का उपशमन न किया। क्रोध के प्रसंग पर क्षमा न धारण की तो क्या आईस्क्रीम को व्यर्थ बिगाड़ना न हुआ ?

सोना पहिनने का अधिकारी कौन ? सोना सच्चा है पीत्तल कच्चा है। सोने में बिकार नही है, पित्तल में विकार है। सोना गेरंटी नहीं करता है, पित्तल गेरंटी करता है। पित्तल थोड़े समय में खराब हो जायगा। सोने का कैसा भी उपयोग करो सदैव वही स्वरूप बना रहेगा। इसीलिए आप सोनापसंद करते हैं। आप सुवर्णालंकार धारण करते हैं। परन्तु क्या आप सुवर्ण जैसे निर्मल बने? सोने से प्रेम किया परन्तु क्या सोने जैसी आप की वृत्ति हुई ?

आपने चौमासे के चार महिने के लिए रात्रि भोजन का त्याग किया परन्तु साथ ही तवीयत खराव होने पर बाहर गांव जाने पर-आदि के-अपवाद रख लिये। अव कहिये आपकी वृत्ति पित्तल जैसी या सोने जैसी मानी जावे ?

आप अपने जीवन का नाप लीजिये। एक वहिन ने नव वर्ष से लेकर नव्वे वर्ष की उम्र तक चक्की चलाई तो चक्की ने कितना

फासला पार किया ? क्या आप की भी ऐसी (चक्की जैसी) स्थिति नहीं मानी जा सकती ?

किसकी चलणी अच्छी और कौन विशेष अपराधी?

एक गोवालिया चलणी लेकर दूने बैठा। वह मूर्ख या बुद्धिमान ? उस चलणी में थोड़े ही छिद्र हैं, उससे भी अनन्त गुणे छिद्र मनुष्य की हृदयरूपी चलणी में हैं। इस अनत छिद्र वाली हृदय रूपी चलणी में से जिन वाणी रूपी दूध ढुल रहा है तो कहिये कौन विशेष मूर्ख है ? आप हमें पाव भर दूध बहराते हैं उसी को यदि हम आप के घर के सामने आपकी आँखों के आगे ढोल दें तो आपको बुरा लगे या नहीं ? हम आपका दिया हुआ पाव भर दूध नहीं ढोल सकते, उसका सदुपयोग हमें करना चाहिये। आप के दूध की एक बूंद भी हम से नहीं फेंकी जा सकती। आपको आप के दिये हुए दूध के लिए इतना भाव है। आप उसका सदुपयोग देखना चाहते हैं उसी प्रकार हम आप को जिनवाणी का दूध नित्य परोसा करते हैं, तो उसका सदुपयोग हो ऐसी आशा हम न करें? आपका दिया हुआ दूध हम ढोल दें तो हम अपराधी, हमें आप साधु भी न गिनें तो जो व्यक्ति जिनवाणी रूपी दूध को ढोलदे उसे कैसा समझना चाहिये ? जिनवाणी के दूध को ढोल डालनेके अपराधमे से क्या आप अपने को मुक्त और निरपराधी मान सकते हैं ?

आपके गुड़ की दुकान है। वहाँ एक आदमी गुड़ देखने के लिए आवे और आप उसे गुड़ बतावें। वह दूसरे दिन भी गुड़ देखने के लिए आवे और आप उसे दिखा दें। परन्तु यदि इसी प्रकार २-४ दिन तक देखने के लिए आता रहे और कुछ न खरीदे

तो आप क्या कहेगे ? आप कहेगे कि भाई हमें गरज नहीं है या हमें क्या पड़ी है। तब आप हमें नित्यप्रति सुनाने का कहते हैं, खरीदी कभी करते नहीं। जीवन में कभी उतारते भी नहीं। तो हम आपको क्या कहे? और आप के साथ कैसा संबंध रक्खें?

व्याख्यान सुनाना या बंद करना? किसान एक वर्ष तक जमीन मे बोता है हल चलाता है। अच्छी फसल होती है। फिर एक दो वर्ष वह खेती नहीं करता। क्योंकि जमीन को विश्राम देने की आवश्यक्ता है। विश्राम देने पर ही फसल अच्छी हो सकती है? इतने वर्षों से व्याख्यान सुनाते चले आरहे हैं। अब आराम की जरूरत है या नही? जिससे हृदय रूपी जमीन विशेष सत्त्वरहित होने से रुके।

ज्ञानी और सेठ की सत्ता—आपका नौकर यदि आज्ञा उलंघन करे तो क्या आप उसे रक्खेंगे? तो इस प्रकार अनंतज्ञानी का आपने कितना अपमान किया? उनकी कितनी आज्ञाएँ आपने पालीं?

आपके प्रत्येक कार्य में उनकी आज्ञा का पालन दृष्टिगोचर होता है और घोरातिघोर विरोध प्रकट होता है?

बुद्धि पाणी की स्याही और हृदय अग्नि की स्याही है—आपको लगन है लेकिन उसमें शुष्कता है। आप काँच में देखेंगे तो जैसे आप हैं वैसा ही प्रतिबिम्ब दिखाई देगा। यदि आभूषण युक्त प्रतिबिम्ब आप बेचना चाहें तो उसका मूल्य क्या होगा? असली और नकली वस्तु में कितना अन्तर? साक्षात् मूल वस्तु की ही कीमत है, उसी का ही मूल्य है।

"धर्म बिना न सद्गति है, न सुख है और न शान्ति है" ये शब्द आप बोलते हैं परन्तु ये शब्द मात्र आन्तरिक प्रतिबिम्ब तुल्य ही है। बुद्धि की स्याही पाणी की है। लिखते ही सूख जाती है। आप सुनते जाते हैं और भूलते जाते हैं। बुद्धि के अक्षर लोप हो जाते हैं। आप यहाँ आते हैं बुद्धि की प्रेरणा से, न कि हृदय की प्रेरणा से। हृदय की स्याही अग्नि की है। और उसके अक्षर जिस प्रकार दिन में पढ़े जा सकते हैं उसी प्रकार रात्रि में भी पढ़े जा सकते हैं।

श्रोता के तीन प्रकार—रोग तीन प्रकार के होते हैं। सुसाध्य, कष्ट साध्य और असाध्य। उसी प्रकार श्रोता भी तीन प्रकार के होते हैं। जो लाखों की हानि करके भी धर्माराधन करते हैं वे सुसाध्य रोगी। और जो अनुकूलता होने पर धर्माराधन करते हैं वे कष्ट साध्य रोगी और जो अनकूलता होने पर भी नहीं कर पाते वे असाध्य रोगी हैं। आज की अपनी इस सभा मे किस प्रकार के रोगी-श्रोता—एकत्र हुए हैं? इसका स्वयं निर्णय करें।

फोनोग्राफ की रेकार्ड और मानव हृदय—टेलीफोन या लाउड स्पीकर के आगे बोले या उसे कुछ सुनावें तो वे भी शब्दों को पकड़ सकते हैं। लेकिन वे उसे समझ कर धारण नहीं कर सकते। क्या उसी प्रकार आपके कर्ण पट नहीं माने जा सकते? फोनोग्राफ की रेकर्ड मे यदि उतारा गया हो तो रेकर्ड चढ़ाते ही आप सुन पायेंगे, परन्तु मनुष्यो की इस जागृत रेकर्डों में वर्षों से उतार रहे हैं—वर्षों से यह रेकर्ड भरे जा रहे हैं, परन्तु उसकी कॉपी (नकल) शायद ही किसी के पास मिलेगी और शायद ही वे किसी स्मृति पटल पर चित्रित होगी।

धन के लिये आँसुओं का समुद्र—किसी को दो आने देते हुए पास में यदि कागज नहीं तो कोट पर लिख लेते हैं ! या धोती की गांठ बांधते हैं। इतनी लगन ज्ञानी के वचनों को न भूलने के लिये रक्खी है? दो आने जितनी भी कीमत क्या आपको जिनवाणी की है? धन के लिये अनेक समुद्र भर जाँय उतने आंसू बहाये और स्त्री पुत्र और धन के लिए नित्य घड़े भर आँसू बहा रहे हैं तब क्या धर्माराधन के अभाव में मूल्यवान मोती से भी महँगा एक भी आँसू गिराया है ? आप मुझे सुनना चाहते हैं पर मैं क्या सुनाऊँ ? आप अपनी हृदय भूमिका का निरीक्षण कीजिये कि आप इस तत्त्व को झेलने में समर्थ हैं ? रात दिन किन विचारों में संलग्न रहते हैं, धर्म के या धन के ? क्या एक म्यान में दो तलवार रह सकती हैं ?

मज़ाक नहीं की जाती—माता पिता की मजाक नहीं की जाती है। कभी किसी समय भाई या मित्र की हँसी कर सकते हैं। तब प्रभु की आज्ञा को न मानना जिनवाणी माता की हँसी उड़ाना है। क्या ऐसी हँसी आप सरीखे सज्जनों को शोभा देगी ?

प्रतिदिन एक वचन ग्रहण कर यदि उसके अनुकूल अपना जीवन बनायेंगे तो आप अपने आपको पहिचान पायेंगे। और जीवन को सफल बना सकेंगे। आज के शब्दों को स्मरण में रख कर अपने जीवन का विचार कीजिये और हम खुद किस स्थिति में स्थित हैं उसका विचार करेंगे तो आपका और हमारा श्रम सार्थक और सफल माना जा सकता है।

२—धार्मिक पर्वों की सफलता

धार्मिक पर्व सफल कब होंगे ?

आज अपना महापर्व है। इस पर्व का नाम मासखमन है। पर्व दो प्रकार के होते हैं। एक तो लौकिक पर्व, दूसरा अलौकिक। सभी पर्वों का निर्माण बाह्य और अन्तशुद्धि के लिये हुआ है।

लौकिक और अलौकिक पर्व—लौकिक पर्व में होली दिवाली आदि और अलौकिक पर्व में मासखमन, पर्युषन और सम्वत्सरी आदि का समावेश होता है। इन सभी पर्वों का ध्येय केवल जन समाज में जागृति पैदा करना है।

आज का मासखमन का पर्व यह सूचित करता है कि एक महिने के बाद सम्वत्सरी महापर्व— पर्वाधिराज-पधारने वाले हैं। यह पर्व हमें जागृत होने की आगाही देता है। पर्वाधिराज के आगमन की सूचना देते हुए उनके स्वागत के लिए तैयार होने का आदेश का करता है। एक मास पूर्व ही से नोटिस देता है सम्राट् का संदेश वायसराय सुनाता है, वैसे आज विश्ववन्द्य प्रभु महावीर का आदेश मुनिराज सुनाते हैं।

एक महिने का समय, फिर भी इस सन्देश को सुनने के लिए कौन आये हैं ? पर्व को कौन मानता है ? और कौन जानता है कि यह हमारा अलौकिक पर्व है।

दिवाली और होली लौकिक पर्व हैं। दिवाली आने से पहिले आप अपना घर, चौक आदि को रंग, रोगन लगा कर स्वच्छ

और साफ सुथरा करने में खूब दिल लगाते हैं। अपनी पित्तल की दवात को घिस-घिस कर सोने की तरह चमका देते हैं, जर्मन-सिलवर की दवात को घिस-घिस कर चाँदी के जैसी बना देंगे। बहियों पर सुनहरी कागज लगायंगे, घर के बर्तन माँज कर खूब चमकते हो इसका पूरा ख्याल रक्खेंगे। यह सब किस लिए? इतनी तकलीफ, इतना कष्ट क्यों? भोजन में भी एक सप्ताह पहिले से माल खायंगे। यह सब प्रपंच, ढोंग किस लिए? दिवाली आने वाली है, इसीलिए न?

दिवाली आने से पहिले घर दुकान वस्त्र और दवात कलम का मैल दूर किया। होली आने पर सब गन्दगी का नाश होली जला कर उष्ण ज्वाला द्वारा किया।

आज लौकिक नहीं, किन्तु अलौकिक महापर्व है। एक मास पूर्व ही से नोटिस दी गई है। दिवाली और होली में बाह्य मलीनता दूर कर स्वच्छता करने के लिये तत्पर होते हैं, उसी प्रकार इस अलौकिक महापर्व के आगमन के पूर्व इस मास में काम, क्रोध, मद, मोह, माया, लोभ, द्वेष और ईर्षा रूपी जो मैल आपके अन्तर में रहा हुआ है उसको दूर करेंगे। उस मैल को साफ करने के लिए-उस मलीन आत्मा को धोने के लिए, यह पर्व आगाही करता है। सम्वत्सरी आने से पहिले आन्तरिक मैल दूर कीजिये। लौकिक पर्व के लिए आप कितनी तैयारियाँ करते हैं यह पहिले बता दिया गया है। तो फिर इस अलौकिक पर्व के लिये कितनी महान् तैयारियाँ की जानी चाहिये? लेकिन कौन करेंगे? क्योंकि लौकिक पर्व दिवाली और होली का प्रकाश आप को सूर्यवत ज्वलंत दिख पड़ता है। सूर्योदय के पहिले उलूक भाग-

दौड़ मचाते हैं, उसी प्रकार आप भी भाग-दौड़ करते हैं। लेकिन इस अलौकिक पर्व का प्रकाश आप जुगनू के समान अनुभव करते हैं। सूर्य के प्रकाश के सामने जुगनू के प्रकाश का अस्तित्व नहीं समझा जाता। उसी प्रकार आप की दृष्टि से भी अलौकिक पर्व का अस्तित्व भी अस्तगत समझा जाता है; अन्यथा दिवाली जैसी रमक-झमक और रौनक तथा धर्म-भावना के फल आज धर्म-स्थानकों में उमड़ते हुए हम अनुभव कर सके होते।

हमारी स्थिति—आज कइयों को यह भी न मालूम होगा कि आज क्या है? बंबई में करीब पचास प्रतिशत लोग ऐसे होंगे, जिनको इस पर्व का ख्याल भी न होगा। पचीस प्रतिशत लोगों को इस बात का ज्ञान घर में उनकी माता या स्त्री से होता है, शेष पचीस प्रतिशत में से बीस प्रतिशत लोग अपना समय प्रमाद मे व्यतीत करते हैं। बाकी के पांच प्रतिशत जितनी निर्माल्य संख्या के लोगों की उपस्थिति, आज हम यहां पर देखते हैं। क्या हमारी यह स्थिति दयाजनक नहीं है?

धार्मिक पर्वों का मूल्य आज घट गया है। दिवाली आने वाली हो तो अपने बूंटों पर पालिश करवायेंगे। उसकी बहुत सम्भाल रक्खेंगे। एक धब्बा भी न लगने देंगे। इस प्रकार जितनी चिन्ता लौकिक पर्व के लिये रखते हैं उतना ही खयाल यदि अलौकिक पर्व के लिये करें तो हमारी क्या स्थिति हो! इस बात का जरा विचार तो कीजिये! बूंट साफ करने जितना लक्ष्य भी यदि आपमे इन आध्यात्मिक पर्वों के लिये होता, तो आज यह हॉल खचा-खच भर जाता।

बूट साफ करने के लिये काबरा पालिश और ब्रुश खरीद

कर उन्हें चमकीले बनाये, लेकिन इस पर्व के निमित्त आत्मा को उज्वल करने के लिये केवल ज्ञानी के ज्ञान रूप कावरा पालिश और निर्जरा रूपी ब्रुश किसीने लिया ? क्या बूट पालिश जितनी लगन आत्मा को पालिश करने के लिये किसी के हृदय में है ? लगन वाले पतंगिये की तरह अग्नि को भी परवाह नहीं करते; और उसके लिये फना हो जाते हैं।

मानव मानवता का भान भूल गया है, ऐसा नहीं है और न तो मानवता सो गई है; परन्तु दुःख ! मानव में से मानवता का सर्वथा विनाश ही हो गया है। सुसुप्त मनुष्य को जगाया जा सकता है, परन्तु मुर्दों को कैसे जीवित किया जाय ? आप में मानवता सोयी नहीं है परन्तु मृत प्रायः हो गई है। यदि मुर्दे पर असर हो सकता है तो आज के मृत प्रायः मानव समुदाय पर भी हो सकता है। इस स्थिति में मृत और जीवित अवस्था में जरा भी अन्तर नहीं प्रतीत होता।

आज का पर्व अलौकिक है। आज कई भाई हरी का त्याग करेंगे; स्नान भी न करेंगे। कई आयंबिल, उपवास, सामायिक, प्रतिक्रमण, नवकारसी आदि अनेक प्रकार की क्रियाएँ करेंगे।

इस प्रकार की अनेक उच्च और पवित्र क्रियाएँ आप करते चले आ रहे हैं और कर भी रहे है। उसके लिये आपके हृदय में मान भी है। इस ऋतु में हरी का त्याग वैदिक दृष्टि से भी उत्तम है। स्नानादि में विवेक रखना अच्छा ही है, लेकिन आपने कभी इस बात का भी विचार किया है कि उपरोक्त सामायिक पौषधादि उच्च और पवित्र क्रियाएँ करने के आप अधिकारी हैं या नहीं ?

आन्तरिक चोरों को ढूंढ लीजिये—एक शहर में चोरों का बहुत उपद्रव था, बहुत त्रास था। उस शहर के लोगों ने राजा को शिकायत की। शिकायत सुन कर राजा ने नगर के द्वार बन्द करा दिये। परन्तु दूसरे रोज भी वही शिकायत जारी रही। विचार करने पर राजा को ख्याल आया कि द्वार बन्द करने से हुआ क्या? चोर तो अन्दर ही थे, बाहिर थोड़े ही थे जो न आते।

हमारे शरीर रूपी नगर मे भी ऐसे महान् चोरों का त्रास है; और ये सामायक आदि क्रियाये बाहर के द्वार बन्द करने के समान है। जब तक इस शरीर रूपी नगर के भीतर रहे हुए काम क्रोध आदि आन्तरिक चोरों को ढूंढ कर अलग न करेंगे तब तक सभी प्रयत्न व्यर्थ हैं। बाह्य क्रियायें भले ही करते रहे, जब तक आन्तरिक वृत्तियों में परिवर्तन न हो तब तक सब निरर्थक है।

लीलोती और लड़ाई—हरी का त्याग किया, परन्तु क्या कलह का त्याग किया?

कभी ऐसा भी विचार किया कि आज अलौकिक पर्व है। मासखमण का दिन है। आज हरी वनस्पति का त्याग किया परन्तु क्लेश–कलह का भी त्याग करूं? आपका ध्यान हरी की ओर तो आकर्षित हुआ परन्तु क्लेश आदि दुर्गुणों की ओर नहीं। कितनी बेदरकारी! विचार-शक्ति की कितनी न्यूनता!

बम्बई शहर में एक सुखी कुटुम्ब रहता था। पुत्र बड़ा हुआ। उसका विवाह हुआ। शादी होने के बाद सास बहू के

बनती नहीं थी। प्रतिदिन झगड़ा होता था। पिता पुत्र ने विचार करने के बाद अलग-अलग रहने का निश्चय किया।

पुत्र माटुंगा में रहने लगा। पिता और पुत्र की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। दोनो के वहां टेलीफोन थे। जब कभी एक दूसरे को क्रोध आता, पुराणी बातों का स्मरण हो आता, तब टेलीफोन मे "एलाऊ" "एलाऊ" कर लड़ाई शुरु करती थीं। दोनो अलग हुए। बम्बई छोड़ कर पुत्र माटुंगा रहने लगा, परन्तु झगडा न निपटा। इस लड़ाई का कारण कौन ? टटाखोर टेलीफोन ही न ? यह आप श्रीमंतो की सम्पत्ति का प्रदर्शन और सुख का साधन गिना जाता है। इसी में अपनी श्रीमंताई समझी जाती है। लीलोती और हरी का त्याग करने पर भी लड़ाई तो चालू ही है। वह पर्व के दिनों में लीलोती न खाने पर भी लड़ाई की बात याद आते ही टेलीफोन की शरण लेकर अपनी वासना की पूर्ति करेगी।

विज्ञान के साधन कितने दुःखप्रद है ? इसका आपने गहराई से विचार ही नहीं किया है। इस विषय पर फिर किसी दिन विचार करेंगे।

स्नान और श्रृंगार—पर्व के दिन स्नान करने का त्याग कर दिया। जल को शरीर से दूर रक्खा, परन्तु अंगों पर श्रृँगार करने की भावना, सोने के आभूषण और चरबी तथा रेशम के कपड़ों को दूर न किया। आज रेशम या चरबी के वस्त्र नहीं पहने जा सकते, सोने का स्पर्श नहीं किया जासकता, इसका कभी स्मरण भी हुआ है ? स्नानादि छोड़ सकते है, परन्तु चटकीले-मटकीले श्रृंगारमय वस्त्रों का त्याग नहीं कर सकते।

सुवर्ण का मोह सर्व पापों का बाप है—मेतारज मुनिवर का दृष्टान्त आप ने सुना होगा। परन्तु जब सुना हुआ, सुना हुआ ही रह जावे तो सुनना निरर्थक है। जीवन में उतारने का प्रयत्न जब तक न किया जाय तब तक यह व्यर्थ है। मैं आप को फिर से वह दृष्टान्त सुनाता हूँ।

एक बार मेतारज मुनिवर एक सोनी के घर पर गोचरी के लिए पधारे। उस समय वह सोनी राजा श्रेणिकके लिए हार बना रहा था। मुनिराज को अपने घर आते देखकर सोनी हर्षित होता है। सोनी अपने आप को कृतकृत्य समझता है। सब कार्य छोड़ कर सोनी मुनिवर को रसोई-घर की ओर ले जाता है और भक्तिभाव से भोजन बहोराता है।

इस बीच में हार के लिए बनाये हुए सोने के दाणो को धान्य के दाने समझ कर मुर्गा चुग लेता है। मुनिराज गोचरी लेकर लौटते हैं। सोनी भी फिर अपने काम में लग जाता है। उसे मालूम पड़ता है कि सोने के दाने गुम गये। राजा को हार शाम को ही देने का था। अब क्या हो ?

सोनी को शंका हुई, कि जब मैं रसोईघर मे गया तब मुनिराज ही ने सोने के दाणे ले लिये होगे। वह मुनिराज के पीछे जाता है और कहता है कि "महाराज महाराज, खड़े रहिये!" मुनिराज खड़े रहते हैं। सोनी क्रुद्ध होता है। वे सहन कर लेते हैं और कहते हैं कि, "भाई! देख ले, मेरे पास कुछ नही है।" सोनी का क्रोध बढ़ता ही जाता है। वहाँ से मुनिराज को अपने यहां ले जाकर कोटड़ी में बद कर देता है। नया गिला चमड़ा मुनि-

राज के मस्तक पर बांध कर धूप मे खड़ा करता है। चमड़ा सूखता जाता है। और अन्त में अपने प्राण छोड़ देते है। इतने ही में सोने के दाणों को चुग गया हुआ मुर्गा बींट करता है और उसकी बींट मे वे दाणे सोनी की नजर मे आते हैं। सोनी बहुत भयभीत होता है। सोनी के पश्चाताप का ठिकाना नहीं रहता।

सोनी के विचारों में अचानक ही परिवर्तन होता है। वह मुनिराज के वस्त्र धारण कर लेता है। और दीक्षा ले लेता है। आप उसे पापी कहेंगे, परन्तु एक पलड़े में सोनी की धर्म भावना और दूसरी ओर आज के धार्मिक कहलाने वालों की धर्म-भावना को रखिये तो सोनी का पलड़ा ही झुकेगा।

सोनी के विचारों के परिवर्तन पर विचार कीजिये। आध घंटे के पहिले ही वह पापी था। वही पापी क्या आध घंटे के बाद दीक्षा लेने के लिए तैयार हो सकता है? पापी कौन सोना, या सोनी? अलबत्तां, सुवर्ण का मोह ही पाप है।

मुनिराज का घात करने वाला सोना आपके घर में आप के शरीर पर शोभा देता है। किसी के बच्चे को साँप काटे तो क्या उस साँप को वह पालेगा? सांप को दूध पिला कर कोई अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारेगा? जो नौकर आप का अपमान करे, आप उसे रखेंगे? सोने से आप को प्रेम है या नहीं? आज घर मे और शरीर पर मुनि का घात करने वाला ऐसा पापी सोना नही रखने वाला कोई महावीर का भक्त होगा क्या?

स्पार्टा देश के राजा की सादगी—स्पार्टा देश के राजा लाइकरगस ने अपने राज्य मे ऐसा क़ानून जारी किया था, कि अपने देश मे कोई सोना नहीं पहन सकता। सोने का उपयोग

केवल चोर या शत्रुओं के पैरों में बेड़ी डालने के ही काम में लाया जाता था। हीरे और मोती के वजनदार आभूषण चोर के कानों और नाकों में लगवा कर दुख दिया जाता था।

उस राजा ने, अपने राज्य की प्रजा में सुलह शान्ति और प्रेम बना रहे इसलिए, सोने का इतना अनादर किया था। वह राजा सुवर्ण के रत्नजड़ित सिहासन के स्थान पर लकड़े के सिंहासन पर घास बिछाकर बैठता था।

पुत्र से भी प्यारा पैसा—किसी भाई के पांच पुत्र हों। पांचो विवाहित हो। रोग फैले और पांचों पुत्र और पुत्रवधु प्लेग का भोग बन कर मर जावें तो थोड़ी देर बहुत ही पश्चाताप करेगा। दूसरे दिन दूध या चाय पीयेगा या नहीं? शक्कर बिना या शक्कर डाल कर? ऐसा पुत्र और पुत्रवधु का शोक है। दो चार महीने में वह सब भूल जावेगा।

एक और दृष्टान्त पर हम विचार करें। एक व्यक्ति है जिसके पांच पुत्र और पुत्रवधु है। उसे व्यापार में लाख रुपयों का नुक़सान रहा। दुख किसको अधिक होगा? जिसके लाख का नुकशान हुआ उसे या जिसके पुत्र या पुत्रबधु को मृत्यु हो गई है उसे? लाख रुपये का नुकसान हुआ है उसी को दुख होगा, क्योंकि उसके पैसे रूपी पुत्रों का विनाश हुआ है। पुत्रों को तो चार पांच महिने में ही भूल जावेगा परन्तु पैसे रूपी पुत्रों को जीवन पर्यन्त नहीं भूलेगा। पुत्रों की मृत्यु का घाव तो मिट जायगा, परन्तु पैसों के विनाश का लगा हुआ घाव कभी नहीं मिटेगा।

आपको यदि हमेशा के लिए सोने का त्याग करने के लिए

कहा जाय तो शायद वैसा आप नहीं कर सकेंगे, परन्तु आज पर्व के दिन तो अवश्य त्याग कर सकेंगे। आपमें स्वतः यह भावना जागृत होनी चाहिए कि "आज मास खमण का पर्व है तो सोना और विलायती या विदेशी वस्त्र न पहिनने चाहिए।"

सोना पापी नहीं परन्तु सोने का मोह ही पापी है। आज स्नान का त्याग करने से पहिले शृंगार और आभूषण का भी त्याग करना चाहिए। आज शुद्ध खादी पहिनना चाहिए। आपको खादी की पोशाक में देखकर कोई प्रश्न करे कि आज ऐसा कैसे? तो आप कहना कि आज धार्मिक पर्व है। आज चर्बी वाले या रेशम वाले वस्त्र नहीं पहिने जा सकते।

धर्म-स्थान को अपवित्र न कीजिये— पर्व के दिन उपाश्रय मे आप चटकीले वस्त्र पहिन कर उपाश्रय में आते हैं। एक बाई पांच सौ रुपये की साड़ी पहिन कर आती है। तो दूसरी बाई तीन चार बड़ी बड़ी कारियां लगी हुई साड़ी पहिन कर आती है। तो यह स्वाभाविक है कि दूसरी बाई की नजर उसी साड़ी की ओर ही होगी। उसका ध्यान उधर ही रहेगा धार्मिक व्याख्यान की ओर नही। कहिये इसमें धर्म या अधर्म?

एक श्रीमत शीखड पूरी खाता है। पड़ोस वालों का बालक खट्टी छाछ और रोटी खाता है। उसकी दृष्टि श्रीमंत की थाली पर पड़ते ही उसकी आंखो में आंसु की धारा बह चलेगी। हा! उसके भाग्य मे खट्टी छाछ और सूखी रोटी है। उसी प्रकार उपाश्रय में आने वाले श्रीमंत-पुत्रों की चीजें देख कर गरीब बालक रुदन करते है। धर्म स्थानक मे शान्ति की प्राप्ति के लिए आते है, परन्तु उनकी शान्ति का भंग होता है। उनका खून सूख जाता है।

अपने भाग्यों को कोसने लगते है। यदि सभी सादे वस्त्र धारण कर आवें तो क्या किसी को आंसु बहाने पड़ें या किसी की शांति का भंग हो ? कभी नहीं।

चर्बी वाले व त्र पहिन कर आने वाले स्थानक को अपवित्र करते हैं। खुद अपवित्र बनते हैं दूसरो का भी बनाते है। उपाश्रय में बिराजित मुनिराजों को चक्षुओं को भी अपवित्र बनाते हैं। अपनी इस सभा मे शुद्ध खादी धारी और चर्बी वस्त्र धारी दो विभाग कर दिये जावें तो अपवित्र होने के प्रश्न का हल सहज ही में हो सकता है। आज यदि सच्चा मास खमण समझते हैं तो अन्तर आत्मा को शुद्ध कीजिये। आत्मा के शृंगार में सभी शक्तियो का उपयोग कीजिये।

जिस स्थान मे आने पर मनुष्य में तप, त्याग, वैराग्य और संयम की भावना जागृत होनी चाहिये, उस स्थान में आप अपने वस्त्र द्वारा तथा आभूषणों द्वारा विलासी और शृङ्गारी भावनाएं और उसके परमाणु बिखेर रहे हैं।

गुड़ और शक्कर दोनों मे मीठापन है। आप इन दोनो वस्तुओं को साथ रक्खेंगे या अलग अलग ? शक्कर और नमक दोनों सफेद वस्तु हैं, उन्हे सम्मिलित रक्खेंगे या पृथक् ? आप नमक को अलग ही रक्खेंगे, नहीं तो शक्कर बिगड़ जायेगी। दूसरी बात नमक से शक्कर की कीमत अधिक है। शक्कर की कीमत आप जान सकते हैं, परन्तु खादी के वस्त्र की पवित्रता की कीमत आप नहीं जान सके। यदि खादी की कीमत आप जान पाये होते तो समझ सकते, कि चर्बी के वस्त्रो से धर्मस्थानक अपवित्र होते हैं। साथ में बैठने वाले भी अपवित्र बनते हैं। और समझ

लेने पर गुड़ और शक्कर तथा शक्कर और नमक की भांति खद्दर धारी और विलायती वस्त्रधारी, इस प्रकार के दो विभाग इस सभा में भी दृष्टिगोचर होते।

लग्न प्रसंग पर यदि आप काला वस्त्र धारण करें तो चल सकता है ? स्मशान यात्रा में लालवस्त्र पहिनकर जा सकते हैं ? हरगिज नहीं ! लौकिक प्रसंगों पर तो आप अपनी तीक्ष्ण बुद्धि का उपयोग करते हैं, परन्तु अलौकिकप्रसंगों पर आपकी तलवार की धार के समान तीक्ष्ण बुद्धि कुण्ठित बन जाती है। क्यों ठीक है न ? धर्म स्थानक में जाते समय अमुक प्रकार के ही वस्त्र चाहिये, इस बात पर भी कभी विचार किया ? आपको धर्म के प्रति मान ही कहां है ! लौकिक प्रसंग पर यदि आप रिवाज के अनुसार वस्त्र न पहिनें तो उसमें आप अपनी इज्जत की रक्षा नहीं होने का मानते हैं, परन्तु इन अलौकिक अवसरों पर आपको अपनी इज्जत का मान ही नहीं होता ! यही सिद्ध करता है कि आपकी धार्मिक भावना कितने अंशों में सत्य है।

आपको अमुक प्रकार के वस्त्र धारण किये हुए देखकर कोई भी यह समझ जाता है कि आप विवाह प्रसंग में सम्मिलित होने जा रहे हैं। उसी प्रकार यदि उपाश्रय में जाते हुए भी आप किसी खास प्रकार के पवित्र वस्त्र धारण करें तो दूसरे भी यह सहज ही मे जान सकते हैं, कि आप उपाश्रय में पधार रहे हैं।

विलासी वस्त्रों के प्रेमी, लीवरपूल और मानचेस्टर की मीलों के विज्ञापन करने वाले औनरेरी नौकर या दलाल हैं। धर्मस्थान मे उन फेशनेबुल वस्त्रों को शरीर पर धारण कर पधारने वाले वचन से नहीं, परन्तु वर्तन से दूसरों को उन वस्त्रों को धारण

करने का उपदेश करते हैं और वहां के माल को प्रोत्साहन देते हैं।

आप अपनी दूकान की ओर जा रहे हैं। रास्ते ही मे कोई मुसलमान का लड़का आपसे कहे कि "भाई मुझे कुछ दीजिये, मैं भूखा हूँ, खुदा तुम्हारा भला करेगा।" उस समय आपको एक पैसा देने की भी इच्छा नहीं होती। आप विचारते हैं कि इसको कुछ भी दिया वह अंडे मांस आदि अखाद्य पदार्थ खायेगा और उसका पाप मुझे लगेगा।

वहां आप अपनी बुद्धिरूपी तीक्ष्ण तलवार का उपयोग करते हैं परन्तु जब आप खुद हजारों रुपयो के चरबी और रेशम के विलायती वस्त्र खरीदते हैं, लाखों का व्यापार और दलाली करते हैं, तब लेशमात्र भी विचार नहीं करते हैं कि इनके उत्पादक कौन हैं? कैसे इनको तैयार किया जाता है? सब जगह आपकी बुद्धि पहुँचती है, परन्तु यहां नहीं।

एकासन और एक भाव—(Fixed Rate) आज आप एकासन तो कर लेंगे परन्तु आज पर्व के दिन दुकान पर एक ही भाव रखना ऐसा विचार आपको कभी नहीं आता।

Honesty is the best policy प्रमाणिकता यह उत्तमोत्तम तरीक़ा है। सत्य और प्रमाणिकता से अधिक कमाई हो सकती है ऐसा युरोपवासी समझ सके हैं।

युरोप मे एक भाई किताब खरीदने गये। पुस्तक की कीमत पूछने पर एक रुपया बताई गई। दुबारा पूछने पर सवा रुपया और फिर तीसरी बार पूछने पर डेढ़ रुपया बताई गई। उस आदमी ने जाकर फर्म के मैनेजर से तहकीकात की, तो मैनेजर ने

उस पुस्तक की कीमत पौने दो रुपये बताई। उस भाई ने पुस्तक की कीमत मे इतने अतर का कारण पूछा तब मैनेजर ने कहा कि आपने तीन बार कीमत पूछी उसके चार चार आने बढ़ गये। यदि हमारे यहां ऐसा हो तो एक रुपये का माल तेरह आने में बेचा जावे। आप ही विचार कीजिये इसमें झूंठ बोलने वाला जीता या सच बोलने वाले को लाभ हुआ ?

पौषध में भी पैसे की लालसा—आप कई पौषध कर सकेंगे परन्तु वे ऐसा कभी न सोचेंगे कि आज दुकान में जो नफ़ा होगा इसे घर मे न रखकर परोपकार में लगा दूंगा। सेठ ने पौषध किया है, नौकर दुकान चला रहे हैं। दुकान खुली है अतः सेठ का मन उधर ही दौड़ता है। पौषध भ्रष्ट होता है। यदि दुकान बंद हो या लाभ को परोपकार मे लगाने का निश्चय किया हो तो शायद ही मन दुकान की ओर दौड़े। परन्तु पौषध करने वाला समझे कि आज मै दुकान के पाप से बरी हूँ, तो यह मान्यता कुछ अंशो मे ठीक हो सकती है; परन्तु सम्यग् प्रकार से विचार किया जाय तो जिस प्रकार मील का बोइलर एक स्थान पर स्थित होते हुए भी हजारो मशीने मील में जोरो से चलती हैं। सज्जनों उन मशीनों को चलाने वाला कौन ? बोइलर ही न ? उसी प्रकार यदि पौषध करने वाला भले ही एक स्थान पर स्थिर है, परन्तु यदि उसकी मनोवृत्ति अस्थिर है तो वह पूर्णांश में पाप से नहीं बच सकता।

पर्व के दिनों मे पौषध का विचार होता है, परन्तु पैसों का ममत्व घटाने का विचार नहीं आता। यही समझाने का मेरा

आशय है, पौषध की धर्म भावना को बदनाम करने का नही। पर्व के दिन उपवास करने वाले बहुत हैं, परन्तु मृषावाद का त्याग करने वाले बहुत अल्प ! नवकारसी करेंगे परन्तु नम्रता धारण नहीं कर सकते। पौरसी करेंगे परोपकार नहीं। प्रतिक्रमण करेंगे पर प्रमाणिकता ग्रहण नहीं करेंगे। सामायक करेंगे परन्तु सत्ता का त्याग करना शक्य नही।

पर्वाराधन—पर्वों का सत्य आराधन तभी माना जा सकता है, जब कि पर्व के दिनों में जिस प्रकार नवकारसी, पौरसी एकासन, उपवास, पौषध, प्रतिक्रमण आदि क्रियाएँ करने की स्वाभाविक इच्छा होती है उसी प्रकार उन दिनों में नम्रता, परोपकार, प्रमाणिकता, सत्यता, शान्ति आदि आन्तरिक गुणों की आराधना भी स्वतः हो। और इसी प्रकार यदि पर्वाराधन हो तभी पर्व सफल माने जा सकते है। नहीं तो वर्तमान समाज की कार्य-गति ठीक वैसी ही समझी जा सकती है; जैसी कि चौमासे में नालो पर डाटे लगाना और दरवाजे खुल्ले रखने की प्रवृत्ति।

श्रोता और वक्ता की सफलता—आप जंगल जाते हैं उस में पांच ही मिनिट लगते हैं, परन्तु जिस दिन पेट साफ नही होता उस दिन फौरन चूर्ण ले लेंगे। अपने पेट की सफाई के लिए अथवा पांच मिनिट का समय निरर्थक न जाय इसलिए। इसकी भी आप को इतनी चिन्ता रहती है तो आज आप उपाश्रय में आये हैं। आप का आना, सुनना और हमारा बोलना निरर्थक न हो ऐसा कीजिये। आप का हमारा बोलना हम तभी सार्थक समझेंगे जब कि श्रावकगण इन महापर्व के दिनों में उपाश्रय मे

सुवर्ण आभूषण या चरबी के अपवित्र वस्त्रों के स्थान पर दूध जैसे खादी के उज्ज्वल वस्त्रों से और वैसे ही पवित्र गुण रूपी आभूषणों से सुसज्जित होकर इस सभा में हमारे सन्मुख बैठे हुए दृष्टिगोचर हों।

३—जीवन के साथ जकड़ा हुआ जड़वाद

प्रथम दिन—प्रथम व्याख्यान में मैंने समझाया था कि दूध, दही, घी, मेवा, मिठाई, खाते हो तथा महलों में निवास करते हो तो अपना जीवन भी दूध के समान स्वच्छ; प्रकृति दही के समान शीतल; वाणी शक्कर के समान मधुर और मन भव्य महलों के समान विशाल रक्खो और उदार दिल बनो।

द्वितीय दिन—दूसरे दिन पर्व के प्रसंग पर व्याख्यान मे आपको पर्व की आराधना के लिये समझाया था कि धार्मिक पर्वों में लीलोत्री का त्याग; स्नान की मर्यादा; नवकारसी, पोरसी, एकाशन, उपवास, सामायिक, पौषध और प्रतिक्रमणादि क्रिया करते हो और धार्मिक क्रिया की जागृति के साथ उन क्रियाओं का नंबरानुसार अनुक्रम से त्याग, नम्रता, प्रमाणिकता, असत्य का त्याग, समभाव तथा परोपकारादि गुणों की आराधना करो तभी सत्य पर्व का सम्मान रक्षित है ऐसा गिना जा सकता है।

तृतीय दिन—आज व्याख्यान का तीसरा प्रसंग है। आज अष्टमी और रवीवार है अतः स्वर्ण और सुगन्ध का योग भी है। धार्मिक पर्व है और बैंक होलीडे भी है।

महिने मे चार होलीडे आते हैं। उन दिनों में ट्रेने भी कम चलती हैं और ऐंजिन को भी आराम मिलता है। मिलें भी बन्द

रहती हैं, जिससे बोइलरो को भी विश्राम मिलता है तो मानव को तो विश्राम मिलना ही चाहिये !

HOLY-DAY या होली डे—रवीवार को बैंक होली डे कहते हो। Holy शब्द अंगरेजी का है उसका अर्थ पवित्रता सूचक है। इस दिन को पिछले दिनों शनि, शुक्र, गुरु, बुद्ध, मंगल और सोमवार की दिनचर्या को देखो।

खाते, पीते, सोते, बैठते, व्यापार में, व्यवहार मे नौकर और सेठ के साथ कैसा व्यवहार रक्खा ? पिछले दिनो मे आत्मा का पतन हो ऐसी कोई प्रवृति तो नहीं हो पाई न ! ऐसा विचार करने मे और जीवन शुद्धि के पंथ में अग्रसर होवे तभी Holy day (पर्वदिन) गिना जा सकता है।

मेरे अनुभव के अनुसार तो 'हॉली डे' के बजाय होलीडे होना अच्छा। होली के दिन पटाखे छोड़ने मे आते हैं, धूल उड़ाने मे आती है, विकार वर्द्धक वचन की प्रवृति पोषण करने में आती है उसी प्रकार छुट्टी के दिन नाटक, सिनेमा, नाच, गान आदि विषय विलास वर्धक प्रोग्राम रखने में आते है, तथा दोस्तों को अपने यहाँ निमंत्रण दे कर, दूधपाक, शिखंड, बासुन्दी तथा पूरी आदि जिमाते हैं और विषय वासनाओ का पोषण करते है। ऐसी कार्यवाही 'हॉली डे' के लायक नहीं होलीडे होली के दिन) के लायक है।

जीवन का प्रवाह—चातुर्मास के समय में से लगभग चौथाई भाग समाप्त होने आया। काल अविरल वेग से प्रयाण कर रहा है। नदी में जितना पानी इस समय है एक मिनट बाद

उतना नहीं रहेगा। प्रत्येक मिनट में नया जल आता जाता है और पुराना पानी सागर मे मिल कर खारा होता जाता है। ऐसे ही प्रत्येक मिनट में शरीर में से परमाणु का प्रवाह जाता रहता है और काल उसे भस्मीभूत करता जाता है। जिससे बाल्यावस्था मे से यौवनावस्था तथा वृद्धावस्था आती है, और चौथी अवस्था मरण के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं है।

शरीर भी ३ मंजिल का एक मकान है। बाल्यावस्था और युवावस्था; ये दो मंजिल तो ढह गई है तथा तीसरी मंजिल भी गिरने ही को है। उसे गिरते क्या देर लगेगी? अतः ऐसे जीर्ण-शीर्ण शरीर से जो भी बन सके अच्छा काम करे, यही जीवन की सार्थकता है।

मानव शरीर पुस्तकाकार है। उसमें तीन भाग है। तथा पुस्तक में मे नित्य जीवन पृष्ठ बांचे जाते हैं। एक एक पृष्ठ २४ घंटों मे पढ़ा जाकर समाप्त होता है। फिर दूसरा पृष्ठ निकलता है। ऐसे पुराने पृष्ठ के समाप्त होते ही नया पृष्ठ निकलता है और इसी प्रकार बाल्यावस्था का बालखण्ड तथा युवावस्था का युवक खंड पढ़ा जाकर पूर्ण हो गया। अब वृद्धावस्था के अब शेष पृष्ठ भी समाप्त होने को है। अब शेष पृष्ठ पढ़े जाने पर पुस्तक पूर्ण होगी और अन्य जीवायोनि की अन्य पुस्तक हाथ में लेनी पड़ेगी।

इस नियम से जीवन पृष्ठ निन्य पढ़े जाते है और पूर्ण होते हैं। अब थोड़े ही पृष्ठ अवशेप हैं तो भी मानव घी के घड़े वाले शेख चिल्ली की तरह हँस कर खुद विशेष दयापात्र बन रहा है या नहीं? यह विचारिये।

शेख चिल्ली तथा तुम—घी के घड़े वाले ने तो एक ही स्थान पर खड़े हो कर, घी के घड़े के चार आना आयेंगे और उसकी मैं मुर्गी लेऊँगा, उसके परिवार को बेच कर बकरी लेऊँगा, उसके परिवार को बेच कर गाय लेऊँगा, तथा गाय के परिवार को बेच कर शादी करूँगा। मेरे पुत्र होगा, वह मुझे भोजन करने के लिये दुकान पर बुलाने आवेगा, तब मैं काम में लगा होने से बालक को लात मारूँगा। इस तरह मनो सृष्टी के संसार में विचरते हुये शेखचिल्ली ने अपने पुत्र को मारने के लिये पैर उठाया कि उसका घी का घड़ा लुढ़क गया। घी के मालिक ने उसको उपालम्भ दिया तब उसने कहा, कि सेठ तुम्हारा तो घड़ा फूटा और मेरा सारा घर टूटा। उसकी मूर्खता पर सब को हँसी आयगी परन्तु आज की सभा मे से कोई विवेकी विचारेगा तो उसको मालुम पड़ेगा, कि धन का उपार्जन करने के लिए हम गुजरात, काठियावाड़ से मां बाप तथा सगे सम्बन्धियों को छोड़ कर बम्बई आये। काले बाल सफेद हो गये। साठ वर्ष की उमर हो गई तो भी तीन वर्ष मे लाख रुपये के लाभ की आशा से कोई विलायत ले जावे तो बाबाजी लकड़ी के शहारे भी जाने को तैयार होते हैं। और समुद्री तूफान तथा विदेशी आवहवा आदि सभी कठिनाइयों को कुछ भी नहीं गिनते हुये जाते है। आकर के लाख रु० की कमाई की खुशी मे हर्षोन्मत्त हो हृदय की गति रुक जाने से मरण पाता है। ऐसे अनेक प्रकार के साहस धन के लिये करने को मनुष्य तैयार हो जाता है।

धर्माधिकारी कौन?— पैसे के साथ मानव का अत्यन्त प्रेम है। शास्त्रकारों ने १८ पापस्थान फरमाये हैं। उनमें पैसे का

मोह रखना यह ५वां पाप है। और जब तक मानव से पैसे का मोह नहीं घटता तब तक धर्मस्थान में पैर रखने के योग्य नहीं है ऐसा शास्त्रकारों ने कहा ही है।

पाप का बाप—सारे पापों का उत्पादक पैसे का मोह ही है। हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, ईर्षा, निंदा आदि १७ पापों को मानव केवल पैसे के लिए ही करता है।

सारे पापो का मूल पैसा है, ऐसा मनुष्य नहीं समझ पाया है। रूस और जापान, जर्मन और अंग्रेज, इटली और अबीसीनिया का वर्तमान में संहारक संघर्ष हो रहा है, किसलिए? इसी पैसे के लिए।

मानव को प्रत्येक मिनिट में एक २ लाख की आमदनी हो तो भी वह आत्माराधना या परलोक के सुख के लिए लेशमात्र भी सहायक नहीं परन्तु परम दुःखदायक है।

अंतःकरण को खोजो—आप सब अपने अंतःकरण को खोजिये। अगर आप अपने अंतःकरण को चीर कर देखेंगे तो उसमें से आपको कौआ, कुत्ता और सांप की लाश से भी अधिक दुर्गन्ध मालूम पड़ेगी।

तुम्हारे पास जीभी, दियासलाई, सुपारी का टुकड़ा या हाथ धोने की मिट्टी कोई पड़ौसी मांगे तो तुम एक दो दफा तो हिच-किचाते हुये दे दोगे पर यदि वह और मांगे तो तुम साफ जवाब दे दोगे कि रोज २ यह क्या! एक लखपती भी पड़ौसी का धर्म समझकर उसे जीभी या दियासलाईके लिए मना करता है। जिसे

इतनी तुच्छ वस्तु में भी इतना मोह है वह मानव मृत्यु के समय बाग, बगला, गाड़ी घोड़ा, मोटर और हीरा मोती; स्त्री, विनीत पुत्र तथा पुत्रवधुओं का मोह कैसे छोड़ सकेगा। इन सबको छोड़ते समय उसे कितना दुःख होगा? जैसे किसी की छाती पर चोर बैठ कर तथा हाथ में छुरी लेकर तिजोरी की चाबी तथा गाड़ा हुआ धन मांगे तो वह दांत पीस कर, हाथ जोड़कर भयातुर दशा से उस चोर को देता है। वैसे ही ममत्व बुद्धि वाले मानवों को मृत्यु के समय अपार दुःख होता है। वे मक्खी की तरह हाथ घिसते हुये परलोक सिधारते हैं।

पाप को पाप मानो—बन्धुओ! हिंसा, झूठ, चोरी तथा व्यभिचार में तुम जैसे पाप मानते हो वैसाही पाप पैसे के ममत्व में भी मानो। कोई ६० वर्ष का वृद्ध पुरुष जिसके ५ लड़के पुत्रवधुये, पौत्र तथा पौत्रियां हैं ऐसा मनुष्य शादी करने के लिये जाता है तो तुम उसे सहकार दोगे? उसकी प्रवृत्ति को योग्य मानोगे या उस पर थूकोगे? नहीं माने तो पिकेटिंग करोगे? उसे समाचार पत्रों में छपवाओगे? ऐसे भी नहीं माने तो क्या तुम गाँवो गाँव पत्र लिख कर उसे गधे पर चढ़ाओगे? या उस कन्या को अन्य स्थान पर ले जाने की प्रेरणा करोगे?

कोई युवक २५ वर्ष की उम्र का या उससे ऊपर का है उसकी शादी गुणी और खानदानी कुटुम्ब की कन्या से हुई है तो भी वह पैसे के घमण्डमें एक ऊपर दूसरी करनेके लिये तैयारी करेगा तो क्या तुम युवक को सहकार दोगे? नहीं दे सकोगे।

विषय वासना चौथा पाप है तो धन की वासना पाँचवां पाप है।

शादी करने वाले वृद्ध का भले ही वह लखपती हो—एक कन्या के जीवन धन का हरण करने के कारण तुम बहिष्कार करते हो परन्तु बाजार में यंत्र तथा अपनी कपट कलामय बुद्धि की मदद से हजारों ग़रीबो का जीवन धन हरण करने वालो का भी बहिष्कार कर सकोगे ? उसके साथ असहकार कर सकोगे ? उनको समझा सकोगे कि दादाजी तुम्हारी उमर ६० वर्ष की हो गई है, बहुत कमाया है, तो अब इस बेकारी के जमाने में अन्य युवकों के लिये कमाने का क्षेत्र खाली करदो, तथा तुम अन्य परोपकार के कार्य में जुट कर जाति समाज तथा देश की सेवा करो और धन के ममत्व के महापाप से बचो। धनवान युवक धनकी लालसासे विशेष कमाने का यत्न करता हो तो तुम उसे भी समझा सकते हो कि तुम भी तुम्हारा जीवन देश सेवामें बलिदान करदो।

मेरे शब्द आपको अव्यवहार्य लगेंगे, परन्तु शास्त्रीय तत्त्व के रहस्य को समझने के लिये यत्न करोगे तो ज्ञानी के शब्द सम्पूर्ण व्यवहार समझा देंगे। तत्त्वों को समझनेके लिये, उतनी योग्यता प्राप्त करने के लिये अनेक युग तथा अनेक वर्षों के तात्त्विक वाचन तथा मनन की आवश्यकता है।

जोहरी का जवाहरात—थोड़े वर्ष पहले मैं जयपुर गया था। वहाँ के एक जोहरी ने मुझे रत्न-जटित स्वर्ण की एक लकड़ी बताई और उसकी कीमत पचास हजार कही। उसकी यह कीमत मुझे सत्य मालूम हुई।

दूसरे दिन वह मेरे पास हीरा, मोती, माणक, नीलम आदि

जवाहरात लाया और एक एक की कीमत ५० से ७५ हजार रुपयों की कहने लगा। जवाहरातों की अनभिज्ञता तथा नकली और असली को न समझ सकने के कारण मैं वह कीमत रुपयों की संख्या के बराबर आनो की भी नहीं समझा। उसे समझने के लिये वर्षों का अनुभव चाहिये। हीरा, मोती, माणिक जो कि पत्थर के टुकड़े हैं उनकी परीक्षा सीखने के लिये ५ से ६ वर्ष चाहिये तो प्रभु महावीर के ज्ञानरूपी जवाहरात की परीक्षा करने के लिये तुम्हें कितने वर्षों का भोग देना चाहिये ? उतना भोग दो तभी सत्य वस्तु समझ सकते हो।

लग्न की लगन—एक भाई की शादी होने को हो और जो चौघड़िया उसके लग्न का हो उसी चौघड़िया में उसके माता पिता हृदय की गति रुक जाने से मरण जावें तो वह वर माता पिता की लाश छोड़ कर शादी करने जायगा या शादी करना छोड़ेगा ? लग्न के लिए उसे लगन लगी हुई है, जिससे वह माता पिता के मरण की चिन्ता न करते हुये शादी के कार्य में जुटेगा। लग्न की क्रिया पूर्ण होने के बाद माता पिता की अत्येष्टि क्रिया करने के लिये लोगों को बुलायगा। खुद शादी में लग जायगा।

यदि विवाह जैसी लगन शिव-रमणी के साथ लग्न कराने वाले ज्ञान के लिये हो तो ही सत्य का स्वरूप समझा जा सकता है।

यंत्रवाद या जड़वाद—मगर आज के जड़वाद के जमाने में मानव यंत्रवाद का उपयोग करके यंत्र जैसी जड़ता का

अनुभव करते हैं। जब तुम्हारे आंगण में पानी पीने के लिए कुआँ था तब तुम उस गहरे, गंभीर तथा शान्त कुये के पानी को पीते थे जिससे तुम्हारी बुद्धि भी वैसी शान्त, गहरी तथा गंभीर बनती थी, तब इस समय तुम्हारे आंगण में नल है कि जिसका मुख संकड़ा है, नल के संकड़े मुख में घंटों तक रहा हुआ, बासता हुआ पानी तुम पीते हो जिससे तुम्हारी बुद्धि भी गन्दी और संकड़ी हो गई है। नल का पानी विशेष खर्च होगा तो हजार गैलन का १२ आना या रुपया देना पड़ेगा इसलिए धनवान भी अपने नल को तिजोरीवत ताला दे देते हैं जिससे उसका लाभ पानी बिना तड़फते हुए मानव, पशु या पक्षी को भी मिल नहीं सकता। उनको किसी समय पानी बिना अपने प्राण भी छोड़ देने पड़ते हैं।

यंत्रवाद से तुम्हें पूरा पानी मिल जाता है वैसे ही हवा भी तुम्हें बिजली का पंखा देती है और पंखे का उपयोग अपने लिए ही करते हो। बिजली के पॉवर का विशेष खर्च न हो जाय इस-लिए तुम तुम्हारे पड़ौसी के गरमी में घबराये हुए पुत्र के लिए भी उसका उपयोग नहीं कर सकते या नहीं करने देते। परन्तु यदि तुम्हारे पास तीन पैसे का देशी पंखा हो तो उसका उपयोग सब लोग कर सकते या वैसा पंखा किसी को दान देने का भी तुम्हारा मन होता। परन्तु डट कर भोजन करने के बाद और घूमते हुए पंखे की हवा खाने से तुम्हारा मन भी यंत्रवादी की तरह स्वार्थी तथा घूमता हुआ होगा।

जब हम तुम्हे दान का उपदेश देते हैं तब तुम्हे उघाई याद आती है, जब हम तुम्हें शील का उपदेश देते हैं तब तुम्हे अपनी या अपने

पुत्र की शादी याद आती है, जब हम तुम्हे तप का उपदेश देते हैं तो तुम्हें जीमनवार याद आता है और जब हम शुद्ध भाव रखने का उपदेश देते हैं तो तुम्हारा मन किसी पर वारंट ले जाने के लिए, डिग्री कराने के लिए या जब्ती करने के लिए चला जाता है। इस प्रकार बिजली के पंखे की तरह तुम्हारा मन भी चारों दिशाओं में घूमता फिरता है।

परमाणु कौन सी वस्तु है ? मानव पर उसका असर कैसा पड़ता है ? इसका अभ्यास अगर आप करेंगे तभी अच्छी तरह समझ सकेंगे !

घाटकोपर से बम्बई तक बिजली की गाड़ी में बैठ कर तुम नित्य आते जाते हो। कभी विशेष वर्षा हो तो विजली का पावर काम नहीं आ सकता और ट्रेन को घंटों तक रस्ते में पड़ा रहना पड़ता है। तब तुम्हारे मन में ऐसा होता है कि यह हत्यारी वर्षा कब बन्द होगी और कब मैं घर पहुँचूंगा। बरसात जो कि अखिल विश्व के लिए जीवनाधार है तथा तुम्हारी भी जीवनाधार है उसे भी खुद के स्वार्थ के लिए बुरा भला कह देते हो। यदि वर्षा न आने की इच्छा न हो और लाखों मानवों एवं करोड़ों पशु-पक्षियो के लिए दुखदायी दुष्काल के प्रसंग को आमंत्रण देने की दुष्ट भावना मन में न हो तो भी मन में व्याकुलता तो होती ही है।

जड़यंत्रवाद के पुजारी होने से मानव में भी जड़ता घर कर गई है अतएव वह हिताहित का सम्यक विचार भी नहीं कर सकता। स्वार्थ की आँखमिचौनी में से परमार्थ के लिए कभी आँख

भी नहीं उघाड़ सकता। और मानव को ही नहीं वरन् पशु को भी नहीं शोभे वैसी पाशववृत्ति और प्रवृत्ति का पोषण करता है।

मानवता या पशुता—यह जमाना बेकारी का जमाना गिना जाता है। व्यापारियों के धन्धे भी ठंडे पड़ गये हैं झूठी बड़ाई के लिए धनीमानी लोग ज्यादा खर्च करते हैं। आमदनी कम होने के कारण वे खर्च घटाने की भावना रखते हैं। उसके लिए वे हर वर्ष के नाटक, सिनेमा, गाड़ी, घोड़ा आदि विलास के सामानों को नहीं घटाते हुये नौकरो की तनख्वाह घटाने का विचार करते हैं। नौकरों की तनख्वाह घटाने वाला पुत्र की शादी में ५ हजार के बदले ४ हजार नहीं खरचते हुए १० नौकरों की तनख्वाह मे से ५ रुपया घटा कर १० नौकरों का तथा उनके कुटुम्ब का दुराशीष लेकर मासिक ५० रु. का फायदा करते हैं परन्तु उसके बदले मासिक रुपया ५० का विलास का खर्च नहीं घटा सकते। इससे विशेष स्वार्थ और पाशविकता क्या हो सकती है?

नौकर और पशु—श्रीमन्त खुद के पशुओं की जितनी सम्हाल और ध्यान रखते हैं उसका शतांश भाग जितना भी लक्ष्य नौकरों के लिये शायद ही रखते होंगे। एक घोड़े के पीछे एक नौकर–जो ३०) रुपये पाता हो रख सकते हैं, घोड़े को मासिक ३०) का दाना भी खिलाते हैं और मासिक ३०) रुपये क़िराये की घुड़साल रखते हैं इस प्रकार एक घोड़े के पीछे ९०) रुपये का खर्च एक श्रीमन्त रख सकता है तब वे ही सेठ अपने यहाँ दो या तीन ग्रेज्युयेट उसी तनख्वाह मे रखना चाहते हैं

दो या तीन ग्रेज्युयेटों को तनख्वाह के बनिस्बत एक घोड़े का खर्च आज कल बढ़ जाता है। घोड़े के पीछे ९० रुपये खर्च करने वाले श्रीमन्त में जो मनुष्यत्व हो तो वे नौकर की तनख्वाह की कटौती का विचार कर सकें ? कदापि नहीं।

किसी दिन घोड़े से ज्यादा काम लेने में आया हो तो उसे गुड़ खिलाने में आता है और नौकर को घोड़े को तेल से मालिश करने का हुक्म होता है। २४ घंटे के लिए घोड़े को आराम दिया जाता है। उसके खाने पीने, की घुड़साल की, मच्छर न काटे उस की, स्नान कराने आदि की बारीक से बारीक चिन्ता करने में आती है और वे ही श्रीमंत नौकर को पेट भरने जितनी तन-ख्वाह देने के उपरान्त भी४ नौकर का काम एक ही से लेने की इच्छा रखते हैं और उनके पास से विशेष कार्य लिया जाय यही उनकी भावना रहती है। दूकान के कार्य करने के उपरान्त घर का काम काज और खुशामद के लिए नौकर को हाजिर रहना पड़ता है। जितनी चिन्ता घोड़े के खान-पान और मकानादि के लिए की जाती है उतनी ही एक नौकर के खानपानादि के लिए करने वाला कोई श्रीमन्त न देखा है न सुना है।

स्वार्थान्धता.—स्वार्थ भावना की तेज धारा मे मानव इतना खिंच गया है कि वह अपने स्वार्थ के अलावा अन्य कोई विचार भी नहीं कर सकता। अपने घर में बिच्छू निकलने पर जीव दया प्रतिपालक उसे पकड़ कर पड़ौसी के मकान के पास छोड़ आएगा। फिर भले ही वह बिच्छू पड़ोसी के मकान में जाकर उसके निर्दोष बालक या उसे ही काटे। इस बात का उस

जीव दया प्रतिपालक को विचार ही नहीं। झूठा पानी या गन्दगी पड़ोसी के आंगन में छुपे २ डाल आयेंगे पर उन्हें दूसरों को अहित करने में लेश मात्र भी संकोच नहीं होता और वे ऐसे पाप को पाप भी नहीं मानते।

सत्य पठनः—आप व्याख्यान सुनने और मुनिराजों के दर्शन करने के लिए आते हैं पर सत्य श्रवण और सत्य दर्शन कब समझा जा सकता है? इस सभा में तार वाला आकर दो व्यापारियों को तार देता है। दोनों ने तार पढ़ा। एक को लाख की हानि तथा दूसरे को लाभ का तार आया था। यह तार पढ़ कर दोनों के खून की, हृदय की और नाड़ी की गति में परिवर्तन होने लगता है। एक के शरीर में खून उछल रहा है और दूसरे का खून सूखा जारहा हैं! नफा नुक़सान के तार का श्रवण या पठन सही सत्य पठन या श्रवण है वैसे ही सत्य श्रोता को व्याख्यान का असर होने लगता है।

सत्य दर्शनः—जंगल में सांप देख कर आप भयभीत हो कूद पड़ते हैं और आपको वर्षों तक उसकी भयंकरता याद रहती है। उसी प्रकार त्यागियो के दर्शन की एक ही दिन की छाप हृदय में वर्षों तक रहनी चाहिए। केमरे का काँच एक सेकण्ड ही में मनुष्याकृति का चित्र ले लेता है उसी प्रकार मुनिराज के दर्शन, उनकी पवित्रता और उनके गुणों का स्मरण आपको चिर काल तक रहना चाहिए।

एक ही श्रोता बहुत हैः—आपको एक घोड़े या गाय की आवश्यकता है और कोई मनुष्य आपको निस्तेज ५०० घोड़े

या डाकी हुई ५०० गायें भेट दे तो क्या आप उन्हें लेंगे ? संभवतः नहीं। आपतो केवल एकही तेजदार घोड़ा या दूध देने वाली गाय पसन्द करेंगे। जैसे सैकड़ों निस्तेज घोड़ों से और डाकी हुई सैकड़ों गायों से एक ही तेजवान घोड़े या दूध देने वाली गाय को मूल्यवान समझते हैं। उसी प्रकार सैकड़ों श्रोताओं से और हजार बार मुनि दर्शन करने वालो से एक ही समय का श्रवण और दर्शन का मनन हो तो वह कहीं अधिक मूल्यवान है।

जैसे एक ही तेजस्वी घोड़ा सवारी के काम में आ सकता है उसी प्रकार एक ही बार का भावपूर्वक श्रवण और दर्शन जीवन के लिए विशेष उपयोगी हो सकता है। और जो एक समय का दर्शन और श्रवण जीवन पर्यंत स्मृति में रहता है और जीवन के प्रत्येक क़दम पर उपयोगी होता है वही सत्य दर्शन और श्रवण है। निस्तेज घोड़ों की तरह एक कान से सुन कर दूसरे कान से निकाल देने वाले या पशु की तरह सुनकर चिंतन या मनन नहीं करने वाले सैकड़ों और हजारों श्रोताओं से एक ही श्रोता हजारों वक्ताओं के लिए काफी है। कौड़ियों के मेरु पर्वत से एक ही हीरा मूल्यवान है। अतः आप सत्य श्रोता बनेंगे ऐसी आशा करना अनुचित न होगा।

४—मानवता का मूल्य

हीरा मूल्यवान है या उसे देखने वाले—बृटिश सम्राट् के मुकुट में कोहिनूर हीरा जड़ा गया है। जिसको Mountain of light (प्रकाश का पर्वत) कहा जाता है। उस को देखने के लिये लाखों मनुष्य तरसते हैं। वह कोहिनूर यदि यहाँ पर लाया जाय और उसको देखने की फीस एक रुपया भी रखी जाय तो भी लाखों मनुष्य उस हीरे को देखने जावें। हीरा एक है, उसके देखने वाले लाखों हैं, कोहिनूर को देखने वाले अपने आपको भाग्यशाली मानते हैं कि हमने कोहिनूर हीरा देखा उसको देखने के लिये लाखों मनुष्य उत्सुक रहते हैं। वह हीरा कितना मूल्यवान है ?

कोहिनूर और सूर्य का प्रकाश—एक नहीं बल्कि करोड़ों कोहिनूर हो, यदि उसको देखने के लिये सूर्य का प्रकाश नहीं है, तो वह कोहिनूर कंकर की तरह निस्तेज प्रतीत होगा। कोहिनूर के प्रकाश की अपेक्षा सूर्य का प्रकाश अनन्त गुणा है, फिर भी सूर्य के प्रकाश का मूल्य अङ्कित करने का किसी को विचार तक भी नहीं हुआ। उसका कारण यही है कि मनुष्यों को सच्चे प्रकाश का खयाल नहीं है।

सूर्य और आँख—करोड़ों सूर्य का प्रकाश मौजूद हो लेकिन यदि देखने वाले के पास पूंज समान चक्षु न हो तो वह प्रकाश निरर्थक है। इसलिये कोहिनूर और सूर्य के प्रकाश से भी

आँखों का प्रकाश अत्यधिक मूल्यवान है और उसके अभाव में कोहिनूर और सूर्य की तेजस्विता कोयले से भी विशेष नहीं।

प्रकाश का भी प्रकाश—सब से विशेष प्रकाश पुंज आत्मा ही है जिसके अस्तित्व के बदौलत ही कोहिनूर सूर्य और आँखों का मूल्य है और उसके अभाव में भी सभी अन्धकार पुंज समान है फिर भी उस महान तत्व को मानव भूल गया है इतना ही नहीं लेकिन उसके अस्तित्व को मानने के लिये सम्यक् समझ भी उनमें नहीं पाई जाती, और उनमें आत्मतत्व को प्रकाश को प्रकाश रूप मानने की प्रामाणिकता नहीं दीख पड़ती।

आत्म तत्व का अधिकारी कौन ?—विश्व के प्राणिमात्र में आत्म तत्व है लेकिन उस तत्व को तत्व रुप से समझने के लिये केवल मनुष्य ही समर्थ है। सर्व जीवायोनि में प्रगति के लिये प्रयत्न करने वाला केवल एक मनुष्य ही है। अन्य जीव अपना जीवन जड़यन्त्र की तरह व्यतीत करते हैं वे प्राणी आत्म तत्व को समझने के लिये सर्वथा असमर्थ और अयोग्य हैं।

देवों की असफलता—मानव जीवन के महत्व के आगे स्वर्गीय जीवन व्यतीत करने वाले देवताओं का जीवन कीड़ी मकोड़े आदि से विशेष मूल्यवान नहीं। कीड़े मकोड़े अपनी उन्नति नहीं कर सकते और वे अपना जीवन व्यतीत यों ही कर देते हैं। इसी प्रकार देवलोक के देव भी अपना जीवन पूर्ण करते हैं। वे देव मानवजीवन की प्राप्ति के लिये प्रयत्न शील हों लेकिन जिस प्रकार जन्म से ही भिखारी राजा बनने की इच्छा करे, तो

उसकी वह भावना निष्फल होती है; इसी प्रकार देवता भी असफल होते हैं।

चाँवलों के दाने और टन का अन्तर कितना ? चाँवल का दाना रत्ती बाल, माशा, तोला, सेर, मन और टन आदि सब तोल के माप हैं। फिर भी टन और चाँवल के दाने में जितना अन्तर है उससे भी विशेष अन्तर स्वर्ग के जीव और मनुष्यों के बीच में है। स्वर्ग के जीव मनुष्य के सामने चाँवल के दाने की तरह तुच्छ तब मनुष्य टन के नाप की तरह महत्वशाली है।

बादाम और कोहिनूर बादाम, पाई, आना, रुपया, गीनी और लाखों गिनियों का एक कोहिनूर हीरा होता है उसी प्रकार स्वर्ग के जीवों का मूल्य बादाम जितना और मानव जीवन का मूल्य अमूल्य कोहिनूर हीरेके समान है। मनुष्य और स्वर्ग के जीवो में महान अन्तर है।

चिड़िया समुद्र उलीच सकती है—मानव जीवन की महत्ताओं का यशोगान करने के लिये ज्ञानी पुरुष भी समर्थ नहीं, जिस तरह से चिड़िया अपनी चोंच से समुद्र को खाली करने की इच्छा करती है तो उसे सफलता नहीं मिल सकती, उसी प्रकार अनन्त मूल्यवान मानव जीवन की महत्ता का वर्णन करने के लिये महाज्ञानी भी सर्वथा असमर्थ हैं।

गोफन में कंकर के बदले हीरे—जब ज्ञानी पुरुष मानव जीवन के महत्व को समझते है तो मानव अपने जीवन को तुच्छ से भी तुच्छ समझता है, उसका यथाशक्य दुरुपयोग करता

है। जिस प्रकार किसान के खेत में कच्चे हीरे पड़े हैं तो वह पत्थर के टुकड़े समझकर पत्ती उड़ाने के लिए गोफन में कंकर की तरह उपयोग करता है, उसी प्रकार मानव अपने जीवन रूपी हीरे का एश आराम, विषय विलास, शृंगार, नाटक, सिनेमा, गान तान, ईर्षा द्वेष निन्दा और कलह मय जीवन में उपयोग करता है और परमानन्द मानता है।

जेब में से एक पैसा न गिर जाय इसका ध्यान रखते हैं, परन्तु जीवन के इतने वर्ष पशुवत् विवेक शून्य अवस्था में व्यतीत किये उसके लिये लेशमात्र भी चिन्ता नहीं होती और न सावधानी ही रखी जाती है। विश्व की तमाम सम्पत्ति की अपेक्षा मनुष्यत्व की सम्पति विशेष मूल्यवान है फिर भी इस सम्पत्ति को विपत्ति रूप समझ कर उसका बन सके उतना दुरुपयोग किया जाता है।

अपने धंधे के लिये प्रति वर्ष नई नई बहियां खरीदी जाती हैं। उसके लिये मुनीम भी रखे जाते हैं। आप की दूकान में एक छोटीकोठड़ी भरजाय उतनी कच्चे और पक्के नामेंकी बहियां होंगी। उसमें पाई पाईका हिसाब रखा गया होगा। लेकिन आपके जीवन धन के व्यवहार के लिए इतने वर्षों में कितनी बहियां रखीं? ६० वर्ष के उम्र के बीच कितनी जीवन पोथियां काली की। प्रत्येक वर्ष के लिये उतनी बहियां और पोथे न रखे तो भी क्या प्रति वर्ष के लिए एक भी पन्ना और एक भी लाइन लिख रखी है? प्रति वर्ष एक एक लाइन भी जीवन के लिये लिख रखी होती तो भी वे आपके लिये पथ प्रदर्शक का कार्य करतीं। व्यवहार के तमाम प्रसंगों को नोट किये जाते हैं और उनके लिये सावधानी

रखी जाती है लेकिन केवल इसी मूल्यवान मानव जीवन के लिये आज तक उपेक्षा रखी गई है और रखी जा रही है।

आत्म निरीक्षण—प्रति दिन सोने के पहले मनुष्य बिस्तर पर बैठे हुये आत्म निरीक्षण-अपने दिनचर्या की आलोचना करे और अशुभ प्रवृत्ति के लिये पश्चात्ताप और शुभ के लिये हर्ष का अनुभव करे तो उस जागृत दशा से भी मनुष्य विशेष सावधान और सत्य पथ का अनुगामी बन सकता है।

करोड़ों वर्ष की अंधेरी गुफा हो और उस अंधकार को उलीचनेके लिये हजारों मनुष्य लेकर बैठे तो अंधकार को नहीं उलीच सकते हैं लेकिन केवल एक दियासलाई का प्रकाश ही उसी क्षण अंधकार का नाश कर प्रकाश सर्वत्र फैला सकता है। उसी तरह मानव समाज का चार अंगुल के अंतःकरण रूप गुफा करोड़ों वर्षों से अंधकार मय हो रही है जिससे मनुष्य को सत्य का भान नहीं हो पाता है। यदि उसमे आत्म निरीक्षण की-ज्ञान की दियासलाई जलादी जाय तो सारा अंधकार दूर कर मनुष्य अपने स्वरूप को पहचान सकता है और सत्य पथ खुद मानकर दूसरों को भी उस पथ पर चला सकता है। लाखों का घोड़ा होने पर भी यदि सवार अंधा है तो वह खुद खड्डे में गिरेगा और साथ ही घोड़े को भी ले बैठेगा। उसी प्रकार मानव समाज भी अविवेक और अज्ञानता के कारण विपरीत पथ पर पयान करता है और अपनेआश्रितों को भी विपरीत पथ पर गमन कराता है।

पथ प्रदर्शक बालक और महावीर—पांच वर्ष का बालक हजारों अन्धे मनुष्यों को खड्डे और कुंए में पड़ते हुए

और कुपथ पर जाते हुए रोक सकता है और सब को योग्य स्थान पर कांटे, कंकड़ और शुद्ध स्थान पर ले जा सकता है जिससे हजारों अन्धे मनुष्य निर्विघ्न और निर्भय पंथ पर पयान कर सकते हैं। छोटे बालक की सहायता मिलने से हजारों अंध मनुष्य निर्भय बन कर सत्य पथ के पथिक बन सकते हैं तो हमारे पथ प्रदर्शक तो अनन्त ज्ञानी प्रभु हैं और साथ में हम नेत्रधारी भी हैं, फिर भी हम कुपंथगामी बनें तो हम कैसे समझे जाने चाहियें ?

चार पैसे का चूना और धार्मिक पर्व—पर्व के दिनों में मनुष्यों में धार्मिक भावना उमड़ पड़ती है परन्तु उसके बाद उन भावनाओं का नाम निशान भी दिखाई नहीं देता। वर्षाऋतु पूर्ण हो जावेगी फिर भी उसके अवशेष रूप करोड़ों मन धान्य और घास और गंजियां खड़ी होंगी। नदी कुंए और तालाव पानी से भर जावेंगे। वृत्त और पशु पत्ती भी पूर्ण ताजगीमय और तगड़े मालूम होवेंगे। पर्व भी धार्मिक ऋतु है परन्तु उसके अवशेष रूप मानव दिल में पूर्णता और शून्यता प्रतीत होती है, दिवाली के दिनो में मकान और दूकान को चार पैसे के चूने से रंगा जाता है फिर भी मकान और दुकान स्वच्छ और सफेद दीखते हैं। तव इन धार्मिक पर्वों मे अनेक व्याख्यान सुने गये और दिल को स्वच्छ करने के लिये अनेक धार्मिक क्रियाएं कीं फिर भी विचारवान पुरुष समझ सकेंगे कि उनके मन में शायद ही परिवर्तन हुआ हो ?

पर्वत के पत्थर भी गोल बन जाते हैं—पर्वत के बड़े पत्थर भी जमीन और नदी में रगड़ जाने से चमकीले और

गोल बन जाते हैं। और उनको साधारण सहायता देने से वे आप ही लुढ़क लुढ़क कर आगे बढ़ते हैं तो मानव के मन को संस्कारी बनाने के लिए नित्य अनेक प्रकार के संस्कार के प्रसंग प्राप्त होते हैं। तदुपरान्त धार्मिक पर्वों के दिनों में धार्मिक पठन पाठन और श्रवण और क्रियाएं की जाती हैं फिर भी मानव के मन की कालिमा स्वच्छ होने के बजाय अधिक बढ़ती हुई प्रतीत होती है।

पत्थर में से मानव की आकृति—शिलावट, पत्थर को टांच कर उसमे से इच्छानुसार देव और राजा की आकृति बना सकता है। जब पत्थर के टुकड़े में से भी इच्छानुसार आकृति बनाई जा सकती है तो मनुष्य अपने सुधार के लिये क्या नहीं कर सकता है? मनुष्य चाहे जो बन सकता है केवल चाहिये उस ओर ध्यान और नियमित यत्न तथा भावना। यदि ये बातें हों तो सब प्रकार से सफलता मिल सकती है।

५—स्वार्थान्ध भावनाओं का नग्न चित्र

ज्वार और भाटा— पर्व के दिन पूर्ण होते ही धर्म भावना का पूर उतर गया हुआ प्रतीत होता है। समुद्र में ज्वार भाटा प्रतिदिन आया करते हैं। लेकिन धर्म भावना का अब जो भाटा (उतार) आया है उसकी भरती अब बारह मास के बाद होगी।

शाश्वत पर्व मय जीवन—मनुष्य यदि विचार करे तो मानव जीवन का प्रत्येक समय अनंत कल्याण कारक महा-पर्व के समान है। मानव जीवन प्रकृति का उच्च से उच्च आविष्कार है। अन्य जीव योनी या स्वर्ग भूमि का मूल्य अंकित करने में सर्वथा असमर्थ हैं। मानव भूमि के प्रताप से ही वे स्वर्गीय सुखों का उपयोग कर रहे हैं।

हीरे मोती मूल्यवान क्यों?—स्वर्ग के जीवों के लिए भी मृत्यु है। और वे मर कर, हीरे, मोती, माणिक आदि जवा-हिरातों के जीवो के रूप में उत्पन्न होते हैं। वे पुण्यशाली जीवों के पिण्ड रूप होने से अधिक मूल्यवान गिने जाते हैं।

धर्म और कर्म—मानव प्राणी में बुद्धि की विशेषता है इसलिये वह धर्म और कर्म दोनो अन्य जीवों की अपेक्षा विशेष कर सकता है।

मानव की अपार क्रूरता—सिंह, सर्प, चीता, रीछ जैसे करोड़ों प्राणियों की क्रूरता से भी एक मानव प्राणी की क्रूरता और हिंसा बढ़ जाती है। एक ही वैज्ञानिक एकान्त में बैठ कर जहरी गैस या बम का आविष्कार करता है जिसके फल स्वरूप वह गेस सैकड़ो मीलों के विस्तार में फैल कर लाखों मनुष्यों को मृत्यु का ग्रास बनाती है। बुद्धि की विशेषता से वह विशेषतम जहरी साधन उत्पन्न करता है और उसी में अपने जीवन की सफलता समझता है।

खून की नदियां और लाशों का पहाड़—सन् १९१४ में जर्मन और अंग्रेजों के बीच में महायुद्ध हुआ था। उस समय विलायत में खून की नदियां और मनुष्यों की लाशो के पहाड़ बन गये थे। उस प्रसंग को भारतीय जनता परम भाग्योदय समझती थी। सब चीजों के भाव बढ़ गये और सोना चांदी की नदियां भारत में बहने लगी हों ऐसा भारतीय मानने लगे थे !

विश्व व्यापी युद्ध की भावना—वर्तमान समय कि जो विश्व शान्ति का समय है उसको आज का व्यौपारी वर्ग मंदी और बेकारी का जमाना मानता है। विश्व व्यापी युद्ध की भावना की माला, आज का व्यौपारी वर्ग फिरा रहा है जिससे कि विदेश से माल का आना बंद हो जाय और भावों में वृद्धि हो।

पैसा कहां से आता है—वस्तुओं के भाव बढ़ने से गरीबों का पैसा श्रीमंतों के घरों में आना है, विलायती या रेशमी

कपड़ा विदेश नहीं जाता है। इसलिए गरीबों का पैसा ही श्रीमंत के घर में आता है। इस प्रकार पैसा एकत्रित कर वे श्रीमंत बनते हैं।

लापसी का अदहन—विश्वव्यापी युद्ध के समाचार सुनते ही सब व्यौपारी वर्ग का खून बढ़ने लगता है। घर घर में लापसी का अदहन चढ़ाया जाता है लेकिन दूसरे ही रोज विश्वव्यापी युद्ध की खबरें अफवाह मात्र थीं ऐसे समाचार सुनते ही मनुष्य के शरीर का लोहू सूख जाता है और उन्हें भारी आघात लगता है।

दुष्काल की दुष्ट भावना—धान्य के व्यौपारी हमें कई बार कहते हैं कि "साहब! आज कल का जमाना अच्छा नहीं है। धर्म के पुण्य प्रताप से जमाना सुधर जावे तो अच्छा।" ऐसे शब्द कई बार सुने जाते हैं। अपने नजीबी स्वार्थ के कारण धान्य का व्यौपारी दुष्काल की दुष्ट भावनाएं करता है। और विश्व का सुखमय सुकाल उसको यमराज सा प्रतीत होता है।

पशु और मनुष्यों के कतलखाने—लीवरपूल और मानचेस्टर के कतलखाने मीलों के विस्तार मे हैं। उसकी निजी ट्रेनें है, जो कि कतलखाने की वस्तुएं लाती ले जाती हैं। उन कतलखानो के मालिक अपनी क्रूरता पशुओं पर चलाते हैं जब कि आज का व्यौपारी वर्ग विश्वव्यापी युद्ध के समाचारो से भाव बढ़ेंगे इन भावनाओ मे मानव जाति का हित सर्वथा भूल जाते हैं और परम प्रसन्नता का अनुभव करते हैं।

जहरी गैस से भी जहरी क्या है?—आज आर्य भूमि अनार्य भूमि होती जा रही है। जीव दया और अहिंसा के हिमायती, बारूद गोला, बम्ब; जहरी गेस आदि का व्योपार नहीं करेंगे परन्तु वे ही व्यौपारी उन से भी अधिक भयंकर साधनों का व्यापार बिना किसी संकोच के करते हैं, और अपने व्यवसाय को निष्पाप मानते हैं।

यंत्रवाद की महान लूट—दुष्काल से पीड़ित होकर मरने की अपेक्षा तलवार की मार पशु विशेष पसंद करते हैं इसलिए तलवार से भी दुष्काल विशेष भयंकर है, उसी प्रकार चोर और लुटेरों की चोरी और लूट से यंत्रवाद की व्यापक चोरी और लूट विशेष भयंकर है।

व्यापक शोषण नीति—यंत्रवाद ने करोड़ों गरीबों की रोजगारी आजीविका छीन ली है। सुख की रूखी रोटी भी लूट ली है। करोड़ों को भूख से पीड़ित कर मार दिया है। एक ही मील ने लाखो विधवा बहिनों की आवक को, जो कि चरखे से अपना गुजर करती थी, छीन ली है। इस प्रकार मिल मालिकों की व्यापक शोषक नीति है।

तोप के गोलों से भी भयंकर—मील, जीव, और ये साधन तोप के गोले या बोम्ब के गोलों से अल्प भयंकर हैं प्रेस के स्टोर वाले भी मिल मालिकों की मांग को पूर्ण कर देश के भुखमरे में वृद्धि करने वाले साधनों की पूर्ति करते हैं। और ऐसा विचार कोई विचारक संभवतः ही करेगा।

पाप का प्रकाश—चोरी करने वाले, चोर के साधनों

पूर्ति करने वाले, मदद देने वाले, उसकी वस्तु लेने वाले, बेचने वाले, दलाली करने वाले, हिसाब रखने वाले आदि सभी चोर की पंक्ति में गिने चाहते हैं। उसी प्रकार व्यापक शोषक नीति वाले यन्त्र वाद को प्रोत्साहन देने वाले भी व्यापक लूट-खसोट के अकार्य के भागीदार हैं। नारकी जीव नरक में से निकलने के लिए कोलाहल मचाते हैं जब कि यन्त्र वाद कोलाहल नारकी जीवन में प्रवेश करने के लिए किया जाता हो ऐसा अनुभव होता है। यह स्वार्थमय व्यापारी भावना अपने हिताहित का लेशमात्र विचार नहीं कर सकती है। मानव की मनः सृष्टि भिखारी के लिए भैंस मारने के समान होती जा रही है।

जीवन का दुरुपयोग—बंदर को कोहिनूर हीरे का हार पहिनाया जावे तो उस हार को वह मिश्री का हार मान कर चूसने और खाने लगेगा। लेकिन वह उसे नीरस मालूम होगा तब क्रुद्ध हो कर वह फेंक देगा। कुम्हार हीरे को गधे के गले में बांधेगा। साग बेचने वाला उसे तराजू की डांडी पर बांधेगा। जब कि जौहरी उस हीरे को राजा के मुकुट पर जड़ कर अपनी और राजा की शोभा बढ़ायेगा। उसी प्रकार मनुष्य अपने जीवन का सदुपयोग या दुरुपयोग करता है। मनुष्य में बुद्धि की विशेषता है। परन्तु वह उसका उपयोग स्व-पर के विकास के लिए न करता हुआ विनाश ही के लिए करता है और मानव मे स्वार्थ भावना इतनी अधिक बढ़ती जाती है कि जो पशुओ के जीवन को भी लज्जित कर देती है और वह उसी में अपना आदर और अपने जीवन की सफलता समझता है।

जीवित मुद्रा लेख पढ़िये—जीवन के सदुपयोग के लिए विश्व में गाय, भैस, घोड़े ऊँट, हाथी रूपी बड़े बड़े जीवित मुद्रा लेख नित्य मनुष्य के समीप दिखाई पड़ते हैं लेकिन उन मुद्रा लेखों को देखने और पढ़ने के लिए अंध वृत्ति, सुनने के लिए बधिर वृत्ति और विचार के लिये अनुभव होती है। वे जीवित मुद्रा लेख अनेक बार दृष्टि समीप आते जाते रहते हैं और विचार करने का संकेत करते हैं कि हम भी तुम्हारे संसार के प्राणी ही हैं। सेवा और सत्कार के अभाव से इस तरह कष्ट में जीवन व्यतीत करते हैं। कृपा करके आप अपने जीवन का सदुपयोग कीजिये। जिससे आपको हमारे जैसे कष्टों का अनुभव न करना पड़े। हमको देख कर, हमारे जीवन के पाठों को पढ़ कर आप अपने जीवन का सुधार कीजिये तब हमारे जीवन की अधमता को भी आप जान कर अपने आपको धन्य समझेंगे कि मनुष्यों के नेत्रों को खोलने के लिए हम साधन मूल बन सकें।

एक ही जीवन मुद्रा लेख पढ़िये—हमारा एक ही मुद्रा लेख पढ़िये। गाय के बछड़े की तरह जन्म होने के बाद जनेन्द्रिय के कोमल और गुप्त अंगों को हमे पत्थर पर कटाना पड़ता है उस समय की वेदना ईश्वर ही जान सकता है। बड़े होने पर अपने शरीर पर भार से लदी हुई गाड़ियां खींचनी पड़ती हैं ऊपर से लकड़ी की मार खानी पड़ती है। मरने के बाद हमारे चर्म का ढोल बनता है उस पर भी डंडे को प्रतिदिन मार खानी पड़ती है। इस प्रकार अनेको कष्ट सहन करने पड़ते हैं यदि इन कष्टों से मुक्तिप्राप्त करनीहो तो जीवन की सफलता का विचार

कीजिये। पशु भी उपकार करने वाले के प्रति प्रेमभाव रखता है, यदि आप हमसे पृथक हो तो अपकारी के प्रति प्रेमभाव रखिये इसी में सच्ची मनुष्यता है।

शरीर रक्षा और आत्म-रक्षा—जितनी सावधानी शरीर के लिये रखी जाती है उससे भी अधिक सावधानी आत्मा के लिए रखनी चाहिये। किसी मकान को भाड़े रखना हो तो उस समय मकान, मोहल्ला, आसपास का वातावरण, मकान के बारी बारणे हवा प्रकाश आदि सभी बातों पर ध्यान देते हैं और उसके बाद खान-पान में, सोने-उठने में सब तरह से सावधानी रखते हैं। शरीर की लेश मात्र कमी भी खटकती है तो आत्म रक्षा-आत्म साधना के लिए कितनी रक्षा और जागृति रखनी चाहिये।

छोटे से छोटी भूल—जीवन की छोटी या बड़ी इरादा पूर्वक या बिना इरादे से की गई भूल अक्षम्य है। भूल से जीवन में एक ही बार विप के लड्डू खा लिए जावें तो मृत्यु सम्भव है। सीडी का एक ही डंडा चूक जाने पर हड्डियां टूट जाती हैं। उसी प्रकार आत्मिक गुणों की छोटी या बड़ी त्रुटि भी अक्षम्य है। अग्नि अंधकार का नाश करती है और अपथ्य भोजन को भी पथ्य बनाती है लेकिन उसका सदुपयोग न किया जाय तो वह भोजन और उसको जलाने वाले को भी भस्म कर सकती है।

सुख दुख का भण्डार—मानव जीवन भंडार के समान है। इच्छा हो तो सुख का भंडार भर लीजिये जिससे कि वह सुख स्वार्थी जीवन में अनंत काल तक शान्ति दे सके यदि इच्छा हो तो दुख के भंडार भर लीजिये जिससे वह नारकीय

और पशु योनि के जीवन में भी अनंत वर्षों तक साथ दे सके। जैसी गति वैसी मति इस न्याय से मनुष्य खुद के लिए सुख या दुख का भडार एकत्रित करता है।

पशु से भिन्न कौन ?—लट्टू घानी का बैल, गाड़ी का बैल और चन्द्र सूर्य सब भ्रमण करते हैं। लट्टू अपनी नोक पर घाणी का बैल धारा के चारों ओर चक्कर काटता है और सूर्य चन्द्र का भ्रमण व्यापक वेग से अखिल विश्व को अपनी गति और प्रकाश से लाभ पहुँचाते हैं। जो खुद के पैर ही की चिन्ता करते रहते हैं वे खेलने के लट्टू के समान हैं। जो अपने कुटुम्ब की सेवा करता है वह घानी के चक्कर काटने वाले बैल के समान है और जाति के सेवक गाड़ी के बैल की तरह हैं। पशु भी ऐसा जीवन व्यतीत करते हैं परन्तु इस जीवन क्रम को उल्लंघन करके चन्द्रसूर्य की भांति अभेद भाव से विश्व मात्र की सेवा करता है वही मानव पशुकोटि से भिन्न होकर सच्चा मनुष्यत्व प्राप्त कर लेता है। प्रत्येक अपने जीवन का विचार कर जिस प्रकार शरीर से आप मनुष्य हैं उसी प्रकार हृदय से या पवित्र कार्यों से मनुष्य बनेंगे तभी जीवन सफल है।

६—कलयुग का तारणहार धर्म

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति आदि के सूक्ष्म जीव भी मनुष्य जीवन के लिए परमोपयोगी हैं तब मनुष्य का जीवन विश्व के लिए कितना उपयोगी होना चाहिए यह सहज ही में जाना जा सकता है।

शारीरिक ढांचा—अन्य पशु पक्षियों के शरीर के हाड़ पिंजर आड़े टेढ़े होते हैं। जिससे उनका मुँह और दृष्टि नीचे ही ही रहते हैं। जब कि मनुष्य का हाड़ पिंजर सीधा और खड़ा होता है इस लिए उनकी दृष्टि ऊँची ही रहती है। अतः शरीर की रचना से यह बात स्पष्ट होती है कि उच्च और आदर्श कार्य करना मनुष्य का सर्व प्रथम कर्तव्य है। इसके अलावा मनुष्य में विचार चिन्तन, मनन आदि बुद्धि जन्य शक्तियाँ भी विशेष होने से अन्य जीवायोनि की अपेक्षा मनुष्य अपना जीवन विशेष पवित्र और परोपकार मय व्यतीत करे यह स्वाभाविक ही है।

मनुष्य की महत्ता—मनुष्य की महत्ता उसके शरीर की सुन्दरता या सुदृढ़ता के कारण नहीं है। लेकिन अन्य जीवों की अपेक्षा उसका आत्मविकास अधिक मात्रा में हुआ है। यही उसकी विशेषता है।

बिल्ली चूहे का ही स्वप्न देखती है—आत्म विकास के वाह्य चिह्न के लिए शास्त्रकारों ने मनुष्य में दान और गुण की प्रधानता का वर्णन किया है। ५०० शिष्यों के

समुदाय वाले आचार्य का अचानक स्वर्गवास हो तो उसके पाट पर ऐसे शिष्य को नियुक्त करना चाहिए कि जिसका कुल अनेक-पीढ़ियो से दान और गुण के लिए सुप्रसिद्ध हो। शास्त्रकार दान धर्म के लिए इतना महत्व देते हैं। जब कि वर्तमान मानव समाज दानधर्म के नाश के लिये रातदिन प्रयत्न करता है। और जिस प्रकार बिल्ली रातदिन चूहे का शिकार ढूँढ़ती है और उसे "cat dreams mice" रात्रि में भी चूहे के ही स्वप्न आते हैं जिससे वह सुख पूर्वक निंद्रा भी नहीं ले सकती। उसी प्रकार मानवसमाज भी धन के पीछे इस प्रकार हाथ धोके पड़ा है कि उसे प्राप्त करने के लिए सत्य, नीति और न्याय को भी ताक में रखकर किसी भी प्रकार धन प्राप्त करने की ही भावना रखता है।

अनीति का परिणाम—रावण ने बलात्कार से सीता का हरण किया फिर भी सीता उसकी हुई नहीं। लेकिन रावण का और उसके राज्य का नाश हुआ। कोई मनुष्य पराई कन्या को बलात्कार से अपहरण कर उठा ले जाय तो वह कन्या उसे विष देकर मार डालती है। उसी प्रकार अनीति से प्राप्त की गई लक्ष्मी मनुष्य को शान्ति प्रदान नहीं कर सकती। उस लक्ष्मी का सदुपयोग नही हो सकता है लेकिन वह लक्ष्मी केवल विषय विलास आदि पाप कार्यों में ही नष्ट हो जाती है। कोई भाग्यशाली मनुष्य ही लक्ष्मी का सदुपयोग कर सकता है। अन्यथा विषय विलास में या बीमार पड़कर दुःख उठा कर डाक्टरों के बिल चुकाने में ही उस धन का व्यय होता है।

करोड़पति भी कंगाल—प्राचीन काल में जो लाख

रुपये का दान देता था वही लक्षाधिपति समझा जाता था और जो करोड़का दान देता था उसके मकान पर कोटिध्वज झंडा फहराता था। जिसके पास करोड़ों की संपत्ति होने पर भी जिसने करोड़ों का दान नहीं किया होता था उसे कंगाल ही समझा जाता था।

शाह के बाद में बादशाह—प्रथम शाह फिर बादशाह। प्राचीन काल के सेठ साहूकारों के दान के आगे राजा महाराजाओं के दान भी लज्जित होते थे। उनकी ऐसी उदार वृत्ती के कारण ही आज उनके वंशज आप शाह नाम से प्रसिद्ध हैं।

वृक्ष और मयूर के दृष्टान्त से शिक्षा—वृक्ष शरद् ऋतु में पत्ते उतार फैंकता है और प्रकृति उसे नव पल्लव समर्पण करती है। मयूर अपनी पिच्छिकाओं को छोड देता है फिर उसके नये पच्छ आ जाते हैं। कुए में से प्रतिदिन पानी निकाला जाता है तोभी वह बढ़ता ही जाता है। गाय और भैंस को रोज दुहा जाता है तभी ताजा दूध मिलता है। अधिक दूध की आशा से अगर ८ दिन तक न दुहा जाय तो बाद में वे दूध देना बन्द कर देती हैं। किसान खेत में धान्य के बीज फैंकता है तो उसे शतगुने अधिक बीज मिलते हैं। एक मनुष्य आम की गुठली को सेककर खा जाता है तो उसे थोडी ही देर के लिए शान्ति होती है जब कि एक मनुष्य गुठली को बो देता है तो कुछ वर्षों के बाद हर साल उसे लाखो आम मिलते हैं और लाखों गुठलियां भी जिनको बो करके वह लाखों आम्र वृक्षों का स्वामी बन सकता है। उसी प्रकार जो अपनी संपति को दान में व्यय करता है तो उसे प्रकृति के नियमानुसार विशेष लाभ होता है लेकिन मनुष्य को इतना

विश्वास न होने से वह न तो धन का ही सदुपयोग कर सकता और न विशेष सुख की प्राप्ति ही कर सकता है।

मोती का दाना और जवार का दाना—जिस समय अकाल में जवार के दानों का और मोती के दानों का मूल्य बराबर था, पुत्री पिता के घर मोती से भरा हुआ सोने का कटोरा देने जाती थी और उसके बदले में उतने ही जवार के दानो की याचना करती थी फिर भी पिता पुत्री को उतनी जवार देने में असमर्थ था। ऐसे विषम संयोगो में खेमादेराणी, भामाशाह और जगडूशाह आदि महा पुरुषों ने अभेदभाव से सभी को धान्य सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति की। जिससे उनके यशोगान के गीत आज भी गाये जा रहे हैं। जब कि वर्तमान में धान्य का व्योपारी दुष्काल की भावना कर विशेष धनवान बनने की इच्छा करता है। और बरसती हुई वर्षा को, घनघोर बादलो को और सुकाल को काल (मृत्यु) समान मान कर गालियाँ देता है।

धन की भयंकरता—मरते दम तक भी मनुष्य धन का मोह नहीं छोड़ सकता और जीवन की तमाम प्रवृत्तियों का उद्देश्य केवल धन प्राप्ति ही होता है। धन की भयंकरता का वर्णन पाश्चात्य विद्वानों ने बहुत सुन्दर ढँग से किया है। एक विद्वान लिखता है कि:—"Wealth without virtue is a dangerous guest" जिस धन का सदुपयोग नहीं किया जा सकता वह धन नहीं लेकिन घर में आमन्त्रित भयंकर महमान है।

सिंह, सर्प, चीता, रीछ आदि आदि को कोई अपने घर

आमन्त्रण दे तो उसका जीवन जितना खतरे और आपत्ति में है उससे कहीं अधिक खतरे में धन वाले का जीवन है। चोर, लुटेरे और खूनी की दृष्टि उसी पर ही पड़ेगी। वह सदुपयोग करने के के बजाय धन का उपयोग भोगविलास में करता है जिसका उस दिन प्रति दिन पतन होता जाता है और उसमें से मानवता का विनाश होता है और हृदय में पाश्विक भावना प्रवेश करती है वह विद्वान फिर विशेष रूप से लिखता है कि A rich miser is a summer cloud without rain, कँजूस धनवान पानी बिना के उनाले के खाली बादल के समान है।

उनाले के बादलों को बर्षाने के लिये भले ही बहुत प्रार्थनायें और यज्ञ किये जावे फिर भी उन में से पानी की एक बूंद भी नहीं गिर सकती। वे केवल बादल-रूप से दिख पड़ते हैं। उनका होना न होना बराबर ही है। उसी प्रकार धनवानों में यदि कँजूसी का गुण हो तो वे धनवान नहीं, निर्धन नहीं अपितु महान निर्धन हैं।

वह विद्वान धनवान की सत्य व्याख्या करते हुये लिखता है कि:—"He is only richman who understands the use of wealth." जो धन का अच्छे से अच्छा उपयोग कर जानता है वही धनवान है।

किसको विजय ?:—जिस प्रकार आपको लोहे की कहीं लेजाना हो तो बैलगाड़ी के स्थान पर मोटर का उपयोग करते हैं उसी प्रकार मुझे भी आज पाश्चिमात्य विद्वानों के शब्दों को साधन भूत मान कर उनके द्वारा आपको समझाने का प्रयत्न करना पड़ा है। पाश्चिमात्य विद्वानों के वजनदार शब्दों की अपेक्षा

यदि आपका हृदय हलका होगा तो वे शब्द आपको दान के प्रभाव की ओर ले जायेंगे अन्यथा वे शब्द और वह पाश्चिमात्य विद्वान आपसे हार जायगा और आपकी विजय होगी।

मक्खन नहीं चूने का पिण्ड है:—चूने की भूकी शक्कर की तरह दिखाई देती है और चूने का पिण्ड मक्खन जैसा। लेकिन वह उसको शक्कर या मक्खन का पिण्ड समझ कर खाने वाले की आँतों को काट डालता है उसी प्रकार धन का मोह दिखने में शक्कर और मक्खन के पिण्ड जैसा प्रतीत होता है लेकिन उसकी प्राप्ति के लिये अनेक विडम्बनायें और कष्ट सहन करने पड़ते हैं।

दौलत याने दो लातें:—धन को दौलत कहते हैं। जब आती है तब गरदन पर लात मारती है जिससे कि उसकी गरदन ऊँची की ऊँची ही रहती है। वह किसी की सुनता नहीं औरकिसी ग़रीब की ओर दृष्टि नहींफेंकता। लेकिन जब दौलत जाती है तब कमर में लात मारती है जिससे उसकी कमर झुकी हुई रह जाती है और भरी जवानी में वह वृद्ध दिखाई पड़ता है। धन, हीरे, मोती और माणिक की मात्रा के समान है। यदि उसका सदुपयोग किया जाता है तो वह लाभ प्रद होता है लेकिन यदि उसे मात्रा का भोजन समझ कर उपयोग किया जाय तो शरीर में फूट निकलती है। उसी प्रकार विषय विलास और मौज शौक़ में व्यय किया जाने वाला धन विनाश के पथ पर ले जाता है और उसको इस भव में या अन्य जीवा योनि में उसका कटु फल भोगना पड़ता है

दान की आवश्यकता नहीं:—वर्तमान की दान प्रणाली दया-पात्र है। जिस प्रकार कोई गाय को मार कर और उसके चर्म के जूते बना कर ब्राह्मणों को दान में दे वैसी वर्तमान दान प्रणाली है। व्यापार में हजारों गरीबों को लूट कर कुछ रुपयों का दान दे दिया जाय तो वह दान नहीं अपितु ढोंग ही है। ऐसा दान देने के बजाय व्यापार में नीति और न्याय का पालन करना गरीबों के प्रति सहानुभूति और श्रीमन्तों के प्रति प्रमाणिकता का व्यवहार ही बड़े से बड़ा और आदर्श दान है।

यह दान है या द्रोह ?:—वर्तमान में चलने वाली धार्मिक संस्था, देवालय और धर्मस्थान आदि में खर्च किये गये करोड़ों रुपये और वर्तमान में खर्च किये जाने वाले लाखो रुपयों का दान दान नहीं, लेकिन गरीबो का शोषण ही है। गरीबों को चूस कर कुछ (एक सो या हजार रुपये) धार्मिक रुपयों मे खर्च करके अपने पापों को धोने का विचार करने वाले अपने प्रति ही द्रोह और कपट करते है और अपनी आत्मा को धोखा देते हैं। वह द्रोह और कपट गरीबों के प्रति किये जाने वाले द्रोह और धोखे से विशेष भयंकर है। ऐसा खयाल जन समुदाय में तो नहीं पाया जाता है, लेकिन जन समुदाय के सुधारकों में कचित ही पाया जाता है।

वर्तमान में धर्म गुरु ही तारक समझे जाते हैं और तारक इस जमाने में तिनखे (घास) से भी अधिक सस्ते दिख पड़ते हैं। घास के भारे को खरीदने वाला भी उसका वजन देखता है। और योग्यतानुसार ही पैसा देता है। किसी मनुष्य को कुएँ

या तालाब में तैरना नही आता है तो वह भी तारक को खोजता है। तारक के शरीर का बल, उसका अनुभव और उसने कितने यात्रियों को खतरे से बचाये हैं? इन सब बातों की जांच के बाद ही उसकी शरण लेता है। लेकिन वर्तमान में मुट्ठी भर राख से शरीर को, और गेरू से कपड़ों को रग देने से वह साधु-गुरु या तारक बन जाता है। जैन शासन में भी साधू का वेष पहना कर, जिस किसी को भी गुरुपद पर स्थापित कर उसे तारक समझने लगते हैं। ऐसे तारक, कि जिनकी योग्यता, दक्षता, और अनुभव तालाब के तारक से भी दयापात्र है वे संसार समुद्र को किस प्रकार तिर सकता है और दूसरों को तिरा सकता है? ऐसे तारक समाज में बरसाती मेंढकों की तरह बढ़ते हुये दृष्टि गोचर होते हैं। इससे जिस प्रकार अधिक डाक्टर वद्य और वकीलों के बढ़ने से समाज में रोग और क्लेश बढ़ने लगे, उसी प्रकार तारकों के बढ़ने से धर्म की भी विकृति होने लगी। फल स्वरूप धर्म का मुख्यतत्व दान भी, दान रूप से भूला जा कर मान रूप समझा जाने लगा है।

दान या मान—सौ में से ९९ आदमी ऐसे होते हैं कि जो मान के लिए ही दान करते हैं। अगर लाख का मान मिलता हो तो १०० का दान करने का मन होता है और उसके लिए अपने जीवन को धन्य मानते हैं।

मोक्ष में जाती गाड़ी—मानव को पैसे का इतना ज्यादा मोह है कि गाड़ी में बैठकर मोक्ष में जाने का हो और गाड़ी वाला भाड़े के २ रु० मांगता हो तो वे २ रु० के बदले

ठहरायगें। पैसा उन्हे तन, मन तथा मोक्ष से भी विशेष महँगा है। जहाँ समाज की ऐसी दशा हो उस समाज से दान जैसे अति साधारण धर्म तत्व की भी कैसे आशा रख सकते हैं!

ज्वालामुखी और भस्माग्नि का रोग— दान आत्मविकास के लिए कचरा निकालने वाले के समान है, जैसे झाडू से आँगन साफ होता है उसी प्रकार दान से आंतरिक शुद्धि, क्षेत्र शुद्धि होती है। उसके बाद उसमें अन्य धार्मिकतत्वों के बीज बोये जाते हैं। जिसमें दान देने की भावना नहीं उसका हृदय ज्वालामुखी के समान है। जैसे ज्वालामुखी पर्वत में चाहे जैसे सुन्दरतत्व पटकने में जावें तो भी उसका नाश ही होता है। नाश के सिवाय उसकी कोई भी गति नहीं है, वैसे ही दान के बिना मानव का हृदय तमाम धर्मतत्वों को ज्वालामुखी की तरह भस्म कर डालता है। उसे भस्माग्नि जैसा रोग है। जैसे भस्माग्नि का रोगी जो खाय वे सब उसे पचता नहीं, पर भस्म होजाते हैं वैसे ही दान रहित प्रकृति वाले मानव का सर्व धार्मिक श्रवण, मनन, वाँचन और दर्शन भस्म हो जाते हैं।

दान लेने वाले के पैरों पड़ो—डाक्टर को नहीं, पर रोगी को अपना रोग मिटाने की गरज होती है। रोगी डाक्टर को ढूँढ़ता और पैरों पड़ता जाता है। उसी प्रकार जो सत्य दानी होता है वह दान लेने वाले को ढूँढ़ता फिरता है और उसके पैरों पड़ता है। वह प्रार्थना करता है कि मेरा धन, स्वीकार करो और मुझ पर उपकार करो। वह दान अपनी गरज से, अपने स्वार्थ से

अपनी पीड़ा शान्त करने के लिए देता है और लेने वाले का उपकार मानता है। एक अमरीकन स्त्री ने एक बौद्ध साधु को एक लाख का दान दिया। उस स्त्री ने बहुत बार लाखों का चेक भेजा था और वह चैक के साथ लिखती थी कि—महात्मा आप मेरे पिता के समान हैं। मेरे पिता मेरी जो सेवा न कर सके उससे ज्यादा आप कर रहे हैं। मेरा धन खर्चने में आपको कष्ट पड़ता होगा, इस लिए मैं आपसे बार बार क्षमा माँगती हूँ। आप जैसे उपकारी पुरुष का मुझे समागम न हुआ होता तो मेरे धन का सदुपयोग कैसे होता ? ऐसी भावना दान देते समय उसकी थी।

आदिनाथ के उपासक बनो—पाश्चात्य जनता दान का गुण तथा दान देना समझती है। भारतवर्ष में भी आगाखाँ के भक्त अपनी कमाई का ५ वां भाग आगाखान को भेंट करते हैं। मुसलमान नित्य ५ बार नमाज पढ़ते हैं। औरंगजेब युद्ध के समय भी हाथी पर नमाज पढ़ता था। रेल में आपने मुसलमानों को नमाज पढ़ते कितनी ही बार देखा होगा। गोलमेज सभा में मुसलमानो के प्रतिनिधि विलायत गये थे, वे भी नमाज के समय सभा में से उठकर नमाज पढ़ने जाते थे, तब आप जो आगाखाँ के बदले आदिनाथ और मुहम्मद के बदले महावीर के भक्त के रूप में सत्यधर्म मानते हो तथा आगाखाँ और मुहम्मद के भक्तों की धर्म भावना के लिए आपको दया उत्पन्न होती है। उसकी दया बिचारने के साथ आपकी खुद की दया विचारो कि तुम्हारे में दान का गुण तथा धर्म की भावना कैसी है ? आप

आदिनाथ तथा महावीर के भक्त होने लायक हो कि नहीं? यह सोचो। आपके जैसे भक्तो से आदिनाथ और महावीर का धर्म शोभता है? यह विचारो। उन मसजिद के उपासकों की दान तथा धर्म की भावना और आपके उपाश्रय तथा मंदिर के उपासकों की धर्म भावना विचारो। आगाखान और मुहम्मद के भक्तों के साथ आपकी दान तथा धर्म भावना की तुलना करो और आदिनाथ तथा महावीर के सत्य भक्त बनो। त्रुटियाँ देख कर सत्वर दूर करो।

सत्य दानवीर कौन?—भगवान बुद्ध के पास राजा महाराजाओं ने हीरा, मोती और माणिक आदि रत्न दान किये, तब भगवान बुद्ध ने उस जवाहरात के ढ़ेर पर एक हाथ रक्खा और एक बुढ़िया ने आधी अनार दान मे रक्खी तब दोनों हाथ धरे। राजाओं को भगवान बुद्ध की प्रवृत्ति से बड़ा ही कौतूहल हुआ, तब भगवान बुद्ध ने खुलासा किया कि तुमने अपनी संपत्ति का १०० वाँ, हजारवाँ या लाखवाँ भाग रक्खा है और इस बुढ़िया ने अपना सर्वस्व मुझे दिया है; अतः तुम्हारे करोड़ों के दान से इस बुढ़िया की आधी अनार बढ़ जाती है। अपने सर्वस्व का त्याग करने वाला ही सच्चा दानी है।

भगवान बुद्ध को विशेष ज्ञान होने से अपने शिष्यों को ग्राम में से एक दानी को ढूंढ़ने के लिए भेजा। और कहा कि ग्राम में यह ढूंडी पिटवा देना, कि इस ग्राम में से जो एक भी दानी मिल जायगा तो उसके पुण्य से भगवान उपदेश देंगे। बुद्ध भगवान जैसा दानी चाहते थे वैसा दानी न मिलने के कारण शिष्य उदास होकर लौटने लगे। इसी बीच में जब वे जंगल में

थे, एक निर्धन, घृद्ध बुढ़िया उन्हें मिली। बुढ़िया ने उन्हे वन्दन करके उदास होने का कारण पूछा। शिष्यों की बात सुनकर उस बुढ़िया ने अपने शरीर का एक वस्त्र शिष्यों को दिया। उस वस्त्र को देखकर बुद्ध भगवान प्रसन्न हुये। और कहा कि इस गाँव में एक पुण्यशाली और दानी जीव बसता है, उसकी पुण्याई से भगवान ने अपना प्राप्त हुआ अतिशय ज्ञान का बोध दिया। एक पुण्यशाली जीव नाव में बैठकर संसार रूपी नाव को डूबने से बचा सकता है। उस एक न्यायी, वृद्ध और निर्धन बुढ़िया के दान के प्रभाव से लाखों मनुष्य उपदेश सुन सके। दान ही मोक्ष मार्ग का प्रथम सोपान है। और वर्तमान युग, कलियुग का एक तारण हार धर्म है।

७—शून्य (०) से एका तो बनाइये।

अनन्त काल से अनन्त ज्ञानी पुरुष जिस विषय को समझा रहे हैं उसी विषय को समझाने के लिए ही हम प्रयत्नशील हैं। उस विषय को समझाकर अनन्त ज्ञानी पुरुष अपने जीवन की इति श्री कर स्वर्गधाम को सिधार गये; लेकिन वह विषय हमारी समझ में नहीं आया। वह विषय इतना अधिक विषम और अगम्य है कि अनन्त समझने वाले होने पर भी हम में से एक भी व्यक्ति न समझ पाया। इस जीवन में भी इतने वर्षों से यह विषय समझाया जा रहा है फिर अभी तक उसे न समझ सके।

शून्य का गुणा—आत्मतत्व समझे बिना प्रत्येक प्रवृत्ति शून्य का गुणा और शून्य की जोड़ ही है। चाहे जितने बड़े कागज पर बिंदियां लिख कर उसका गुणा या जोड़ कीजिये, लेकिन करोड़ों बिंदियो का मूल्य केवल एक इक्के बराबर भी नहीं हो सकेगा।

जीवन की प्रत्येक प्रवृत्तियां, धन्धा रोजगार, धन सम्पत्ति और वैभव सभी बिन्दी का गुणा मात्र है। बिन्दी के आगे इक्का हो तो इक्के और बिन्दी की भी शोभा है। उसी प्रकार यदि आत्म-तत्व का भान हो तभी सब वैभव और सम्पत्ति की प्राप्ति सार्थक हो सकती है।

एका सीखे हुए शिवाजी— शिवाजी के पास सेना के सिपाही एक सुन्दर स्त्री को पकड़ लाये, तव शिवाजी ने कहा- यदि यह स्त्री मेरी माता होती तो उसके पेट से मै उसके जैसा सुन्दर होता। ऐसा जवाब शिवाजी के मुँह से निकला; क्योंकि उन्होंने आत्मतत्व का एका अपने हृदयपट पर अंकित कर लिया था। यदि उनका जीवन शून्य(०)बिन्दी जैसा होता तो वे ऐसा जवाब नही दे सकते। सिंह, बाघ और रींछ वाले भयानक जंगलों में अडोल ध्यान से तप करने वाले सुने गये हैं, परन्तु विषय विकारो पर विजय प्राप्त करने वाले विश्व में विरले ही सुने जाते हैं। दस योद्धाओं को जीतने की अपेक्षा अपने पर ही विजय प्राप्त करने वाला ही महान् योद्धा महावीर है।

भौंरा लकड़ी को छेद सकता है; परन्तु पुष्प में बन्द हो जाने के बाद उसको काट कर-छेद कर बाहर नही निकल सकता। वह पुष्प की कोमलता और सुवास में मुग्ध हो कर मर जाता है। उसी प्रकार मानव रण संग्राम में विजय प्राप्त कर सकता है, परन्तु विषय वासना पर विजय पाना दुष्कर है।

धर्म सूत्रों में एक कथा है, कि सिह गुफावासी तपस्वी मुनि एक स्त्री की कोमलता पर चलायमान और भ्रष्ट हो गये थे।

सत्य स्मारक--शिवाजी जैसे महाराष्ट्री महाराजा आस्तिक थे। जिससे उसका अस्तित्व विश्व मे न होने पर भी हमें उनको याद करना पड़ा है। पूना आदि शहरो में उनकी राजधानी थी। वहां जा कर देखेंगे तो उनके महल, शिला लेख या अन्य स्मारक चिन्ह शायद ही दिखाई पड़ेंगे। क्योंकि उनको

जीवित रहना और मरना आता था। जब कि मुगल वादशाहों ने अपने स्मारक स्थान स्थान पर बनाये हैं। उनके नाम के अनेक रोजे मकबरे और मीनारें मौजूद हैं। वर्तमान के राजा लोग भी अपने स्मारक खड़े कर रहे है, लेकिन सत्य स्मारक और अस्तित्व अपनी आत्मा का ही है। मनुष्य को अपने अस्तित्व का भान नही है और महान् से महान समर्थ इतना भी उनको समझाने के लिये सर्वथा असमर्थ है।

मृत्यु का विश्वास है?—मधुमक्खी और भौंरे के डंक का जितना भय है, उतना भी मनुष्य को मृत्यु का डर या विश्वास नही है। जीवन नित्य घटता है या बढ़ता है? जीवन प्रति पल घटता जाता है, फिर भी अज्ञानी मानव वैभव विलास और सांसारिक प्रवृत्तियां बढ़ाता जाता है।

मृत्यु रूपी हौआ—सिह के पास गाय बाघ के पास बकरी और बिल्ली के पास चूहे को रख दीजिये और उनके सामने हरा घास और स्वच्छ जल भी रखिये; फिर भी वे उसको स्पर्श भी न करेंगे। क्योंकि उनके सम्मुख साक्षात् यमराज खड़ा है, वान्दरा और कुरला के कसाईखानों की गन्ध आते ही वहां काटने के लिए ले जाये जाने वाले पशु अपना पैर पीछे रखते हैं। अति बलात्कार से उनको वहां जाना पड़ता है। ऐसे पशुओं को भी मृत्यु का भय है, परन्तु विचारक माने जाने वाले मानव को पाप से बचने के लिए मृत्यु का विचार तक भी नहीं आ सकता है। बाल्यावस्था में जिस प्रकार माता पिताओं ने हौओ का डर बताया है उसी प्रकार मृत्यु, स्वर्ग, नरक, और पाप रूपी हौओ से डरना ढोंग मात्र माना जाता है।

सर्प का भयः—कोई व्यक्ति आपको अपनी बन्द मुट्ठी में से रबर का सांप या विच्छू आपके हाथ में रक्खे तो आप उसको देखते ही उछल पड़ेंगे और चिल्लायेंगे। क्योंकि आपको उस समय सच्चे सांप और बिच्छू होने का भय था।

अन्धेरे में रस्सी पड़ी हो तो उसकी आप नाग देवता की तरह मान्यता करेंगे और अन्त मे उन नाग देवता के न जाने के कारण घी का दीपक जलायेंगे। उसी दीपक के जलते ही भ्रान्ति दूर होती है। सांप की छाया और पूँछ के लिए भय है लेकिन विनाश होते हुए इस मानव जीवन के लिए आपको तिल भर भी परवाह नहीं है।

लग्न मरण समय पर होने वाली क्रिया के समान है—उस समय कुंकुंपत्री लिखी जाती है, लेकिन उस कुंकुंपत्री लिखने वाले वृद्ध पिता को इस बात का स्मरण नहीं है कि इसी पाट पर इसी कलम और दावात द्वारा मेरा पुत्र मेरे मृत्यु समाचार लिखेगा, और इसी चंवरी के बांस, मटकियां, नारियल, मूंज, नया वस्त्र, होमाग्नि आदि सभी साधन मेरी मृत्यु के समय काम आयेंगे। मेरी मृत्यु के समय भी ऐसे वांस, ऐसी मूंज, ऐसा नारियल, ऐसी अग्नि भरने की मटकी लायेंगे और मुझे श्मशान में जलायेंगे। यदि उसके जीवन में जागृति का एका होता तो उसको ऐसा अवश्यमेव भान होता।

ज्ञानी का रुदन—अपने बालकों को किसी मकान में जलते देख कर माता पिता फूट २ कर रुदन करते हैं, लेकिन अग्नि की ज्वालाओ के सामने उनका वश नहीं चल सकता। उसी

प्रकार ज्ञानी पुरुष प्रत्येक मनुष्य को अपनी संतान मानते हैं और उनको विषय विलास की ज्वाला में जलते हुए अनुभव करते हैं। मरते हुए भी वे अज्ञानी जीवों की अज्ञान दशा पर आंसू गिराते हैं, कि इन बाल जीवों की क्या दशा होगी ? लेकिन जिस प्रकार माता पिता अग्नि की ज्वाला के सन्मुख बेवश हैं, उसी प्रकार संसारियों की विषय-वासना रूपी मोह ज्वाला के आगे ज्ञानी भी बेवश हैं।

एक पाई और एक घंटा—किसी व्यक्ति के रोकड़ मिलान में केवल एक पाई भी घटे तो वह उसे सहन नहीं कर सकता। उसको जितना एक पाई का मोह है, उतना मोह अमूल्य जीवन-धन के एक-एक मिनट के सदुपयोग के लिए है क्या ? लक्षाधिपति भी अपनी गिरी हुई पाई को धूल में से उठा लेता है। इस प्रकार पाई २ की रक्षा करने की वृत्तिवाले मनुष्यों को बाल्यावस्था, युवावस्था तथा वृद्धावस्था पूर्ण होने पर भी जीवन का लेशमात्र भय नहीं है।

छोटी भूल भी महा भयंकर है—जीवन की छोटी से छोटी भूल भी महा भयंकर है। वर्षों से कुए में से पानी भरने वाली या सगड़ी पर रसोई करने वाली वहिन भी थोड़ी सी असावधानी से कुए और चूल्हे की अग्नि का भोग बन जाती है। ५००० मील से बबई आने वाली स्टीमर ४९९९ माइल तक सही सलामत पहुँच गई। लेकिन यदि केवल अन्तिम १ मील में ही तूफान उठे और स्टीमर चट्टान से टकरा जावे तो उसके टुकड़े २ हो जायं और सब मनुष्य मर जाय। सीढ़ी का एक ही

पत्थर चढ़ते या उतरते हुए भूला जाय तो नीचे गिरकर प्राण गंवाने पड़ते हैं, उसी प्रकार आत्मधर्म की एक भूल भी अक्षम्य है।

कषाय का बारूदखाना—मनुष्य मे अज्ञानता के कारण विषय कषाय रूपी बारूदखाना भरा हुआ है। बारूदखाने का नौहरा भरा हुआ हो तो वह नौहरा एक चिनगारी रखते ही जल उठता है। उसी प्रकार मनुष्य के सन्मुख शब्द, रूप, गन्ध, रस और स्पर्शमय प्रतिकूल संयोग उत्पन्न होते ही मनुष्य में से विविध प्रकार की कषाय रूप चिनगारियां निकलने लगती हैं।

शान्ति कब तक?—कुत्ता प्रायः चुपचाप बैठा हुआ या सोता हुआ दिखाई देता है, परन्तु ज्योंही उसकी दृष्टि किसी अपरचित मनुष्य, पशु, या कुत्ते पर पड़ती है तो वह अपनी शान्ति का भंग कर भूंकने लगता है। उसी प्रकार धार्मिक सभाओं में, बाजार में या घर में विपरीत संयोग उत्पन्न न हो तभी तक शान्ति रक्खी जाती है; लेकिन प्रतिकूल संयोग पैदा होने पर मनुष्य कुत्ते को भी लज्जित करदे ऐसा द्वेष और दुष्ट वृत्ति प्रकट करता है।

राज्य का वारण्ट—राज्य की पुलिस भूल से जेल का वारण्ट दूसरे के बदले आपके पास लावे और आपके हाथों में बेड़ियां डाले तो आपको कितना दुःख होगा? आप पर तो मानो दुःख का दावानल टूट पड़ा हो ऐसा प्रतीत होगा। परन्तु आपकी बाल्यावस्था बीत गई और युवावस्था का वारण्ट आया तत्पश्चात् वृद्धावस्था का वारण्ट भी। जिसके चिन्हस्वरूप सब बाल सफेद होगए, दांत गिरगए, कमर झुकगई, भोजन पचता नहीं है

और अबतो मृत्यु का अन्तिम वारण्ट है। मृत्यु के दूत समीप आ पहुँचे हैं, जीवन रूपी ट्रेन मृत्यु के स्टेशन पर आ चुकी है, विशल वज चुकी है, सिगनल गिरगया है, अब उसे आते क्या देर लगेगी ? इसलिए अब शीघ्र ही स्व-स्वरूप की पहचान कीजिए।

जीवन पर दृष्टिपात कीजिए—अपने जीवन में शून्य से जब तक एका न सीखेंगे, तब तक तीर्थंकरों के उपदेश भी निरर्थक हैं। एका के आगे बिन्दियां रखने पर उसकी कीमत बढ़ती है। लेकिन यदि उसके पीछे बिन्दियां रक्खी जायँ तो कीमत घटती है; उसी प्रकार आपकी प्रवृत्तियाँ आपके जीवन की साधक है या वाधक ? इस पर विचार कीजिए। जैसा भूतकाल में बोया जायगा, वैसा वर्तमान में पायेगे और जैसा वर्तमान में बोयेगे वैसा भविष्य में।

श्रम सफल कब ?—प्रति दिन डाक्टर के पास जाते हैं। वह आपको नित्य नई दवाई और इनजक्शन दें, फिर भी यदि आपका रोग कम न हो तो आपको या डाक्टर को दुःख होगा। इसी प्रकार आप प्रति दिन यहां आया करते है, आप में धर्म भावना का अंश है, इसीलिए आने का मन होता है। लेकिन यदि सुने हुए तत्व को जीवन में न उतार सके तो आपका और हमारा श्रम सफल न गिना जायगा।

जज (Judge) और ज्ञानी के शब्दः—कोर्ट में वादी और प्रतिवादी दोनों को जज अपना जजमेण्ट सुनाता है, जिसको सुन कर एक का ५ सेर खून बढ़ता है और दूसरे का घटता है। एक का चेहरा ललाई से चमक उठता है, जबकि दूसरे का काला

श्याम पड़ जाता है। उस जज के शब्दों में उतनी शक्ति नहीं, लेकिन श्रोता उन शब्दो को स्वजीवन के लिए परमावश्यक मानता है। उसी प्रकार ज्ञानी के शब्दों को महत्त्वशील समझिये, तभी उनके उपदेशामृत का असर आप पर होगा और आपका जीवन सफल बनेगा। उस समय आपका जीवन बिन्दी जैसा शून्य और शुष्क जीवन ऐके के रूप में बदल जायगा।

—:—

८—अंतर सृष्टि के संस्कारों का सुधार कीजिये ।

जीवन के संस्कार—आर्य संतान शराब, मांस तथा शिकार को स्वीकार कभी नहीं कर सकती । एक हिन्दू के बालक को अगर लाख रुपये भी दिये जायं तो भी वह गाय या अन्य प्राणियों को मारने के लिये विष का लड्डू नहीं खिलायगा। परन्तु अनार्य-म्लेन्छ का बालक पतासों के लालच से ही उस प्राणी को विष खिला कर मार डालेगा । क्योंकि हिन्दू बालकों को सैंकड़ों वर्षों से पूर्वजों का दिया हुआ अहिंसा तत्व मिला है और उसके प्रत्येक खून के बिन्दु में उसको नाड़ियां तथा हृदय के धधकारे में अहिसा तत्व भर गया है । तब अनार्य बालक के शरीर के परमाणुओं में हिंसा तत्व समावेश कर गया है ।

अध्यात्म तत्व विचार—आर्य तरीके से, जैन तरीके से शराब तथा मांस का स्वप्न में भी विचार नहीं आ सकता और वे संस्कार दृढ़तर होते जाते हैं, इसलिए सावधानी रखने में आती है । शराब तथा माँस का उपयोग करने वाले का पड़ौसी होने में या उसे पड़ौसी तरीके से रखने में भी तुम पाप मानते हो, उसी तरह जीवन में अहिंसा तत्व की तरह आध्यात्म तत्व भी ओत-प्रोत होना चाहिये ।

जैन तरीके से या आर्यपुत्र तरीके से तुम्हारे में काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ आदि तत्व नहीं होने चाहिये । जैसे शराब

तथा माँस के लिए घृणा उत्पन्न होती है वैसे ही द्वेश, ईर्षा तथा निंदा तत्व के लिए भी अपार घृणा उत्पन्न होनी चाहिये।

पेड-लॉक सोसायटी—योरोप मे निन्दा न करने के लिए और भ्रातृभाव सिखाने के लिए एक Pad-lock Society स्थापित की गई है। इस सभा का मेम्बर वही बन सकता है जो तीन मनुष्यों की साक्षी से ३ बार ताला उघाड़े और बंद करे। अर्थात् भावार्थ यह है कि अनावश्यक शब्द, किसी की निन्दा का शब्द मैं नही सुनूंगा तथा नहीं बोलूंगा। अंग्रेजी में निंदा को Back-bite कहते हैं। बैक यानी पीठ और बाइट यानी काटना, यानि किसी की पीठ का मांस खाना। वे सोसायटी वाले निन्दा करना नर मांस खाने के समान पाप समझते हैं। जैन शास्त्रों में भी निन्दा के लिए Back-bite शब्द ही प्रयुक्त हुआ है, जिसे पिट्ठी मंसं कहते हैं। पिट्ठीमंसं यानि पीठ का माँस खाना। यूरोप में निंदा विरोधी मंडल के हजारों सभ्य बन चुके हैं, तब भारत में जो कि धर्म प्रधान, आध्यात्म-प्रधान देश कहलाता है उस देश में धर्म-विनाशक निन्दा की प्रवृत्ति बढ़ती जाती मालूम पड़ती है।

निन्दा के शिकारी—एक मनुष्य ने ९९ बार किसी दूसरे मनुष्य की सेवा की हो और अगर एक दिन वह प्रसंगवशात् सेवा न कर सके तो वह ९५ बार सेवा लेने वाला उसकी ९९ बार की सेवा भूल कर एक बार सेवा न करने से वह उसका दुश्मन बन जाता है और वह उसके बदले के रूप में उसकी छिपी तौर पर निन्दा कर के सतोष मानता है। और प्रसन्नता प्राप्त करता

है। निन्दा के महापाप से धर्म गुरु तथा धर्माचार्य भी थोड़े से ही बचने पाते हैं। एक धर्म गुरु दूसरे धर्म की निन्दा कर के अपने धर्म की उत्तमता बताने का यत्न करता है। परन्तु ऐसा करने मे वे खुद दयापात्र बन कर धर्म के रहस्य को ही भूल कर पामर कीड़े जैसा पतित जीवन बिताता है और खुद की अधार्मिकता का प्रदर्शन करता है।

विषभरी वृत्ति किसको शोभती है?—द्वेश, ईर्षा, क्रोध और क्लेश आदि स्वभाव पशु जीवन को शोभें ऐसा है और वह स्वभाव उनके जीवन के लिए आवश्यक है। अतः पशुओ को सींग, पूंछ आदि कुदरत ने ही दिए है; जिससे वे अपने शरीर की रक्षा कर सकते हैं।

कुत्ते में ईर्षा, चिड़ियां में द्वेप, सर्प में क्रोध, मोर में मान, पशुओं में माया, लोमड़ी में लुच्चाई आदि अनुकूलता के लिए आवश्यक भी हैं। एक कुत्ता शांत स्वभाव होकर बैठा रहे तो उसे भूखों मर जाना पड़े। अतः उसको लड़ाई करके दूसरे कुत्ते के भाग में से अपना भाग पटकना पड़ता है। मानव में बुद्धि, विवेक तथा समझ होने से अपना जीवन शांत रीति से बिता सकता है। मानव साधन सम्पन्न है। तो भी अपनी बुद्धि का दुरुपयोग करके ज्यादा से ज्यादा पापमय जीवन बिताता है।

मानव की विषभरी वृत्ति—मानव के पास लड़नेके लिए शींग या दाँत नहीं है; काटने के लिए जहरी डंक नहीं हैं, जिससे उसने बुद्धि के बल द्वारा अपनी अधम वृत्ति का पोषण करने के लिए नवीन आविष्कार किये हैं, और वह अब अपनी वृत्ति

का पोषण करके मानवरूप पशु-जीवन को भी शरमावे ऐसा जीवन व्यतीत करता है। यदि दो कुत्ते लड़ेंगे तो ५ मिनट में लड़ाई के प्रसंग को तथा द्वेष को भूल जायेंगे और परस्पर प्रेम-भाव से साथ २ खेलने लगेंगे तब मनुष्य को अगर एक तमाचा मार दिया या उसका अपमान कर दिया तो वे उस प्रसंग को यावज्जीवन नही भूलेंगे।

क्रोध के हित आविष्कार—क्रोध की वृत्ति पोषण करने के लिए मानव ने अपशब्दों का आविष्कार किया है। इसके उपरान्त विशेष वृत्ति को पोषण करने के लिए लाठी, तलवार, भाला तथा बरछी का आविष्कार किया है। और वर्तमान में विज्ञान अपने विकाश के साथ विनाशी साधन, जहरीली गैस, बम गोले आदि बनाता जा रहा है।

मान हेतु आविष्कार—मानवी वृत्ति यानी अपना बड़प्पन पोषण करने के लिए मानव ने हीरा, मोती माणिक के आभूषण, विलासी वस्त्र, भव्य भवन, चाँदी और सोने के पात्र आदि अनेक सामान उत्पन्न किये हैं, जिसके द्वारा वे अपनी वृत्ति का पोषण करते हैं।

माया के लिये आविष्कार—माया वृत्ति का पोषण करने के लिए मानव ने छिपी पुलिस, तहखाने, झूठे दस्तावेज, झूठी साक्षी आदि तत्व उत्पन्न किये हैं। गरीब होय तो भी गरीबी को छिपाने के लिए नकली आभूषण तथा वस्त्र पहन कर अपनी गरीबी का श्रीमंताई के रूप से प्रदर्शन करता है।

लोभ हेतु आविष्कार—लोभ की वृत्ति का पोषण

करने के लिए विविध प्रकार के व्यापार, यंत्र तथा प्रलोभन द्वारा विश्व के धन को अपना बनाने के लिये अहर्निश यत्न करता रहता है।

जैसे भोजन के समय दाल शाक में नमक न हो तो उससे तमाम भोजन फीका लगता है वैसे ही अपने जीवन की छोटी तथा मोटी तमाम प्रवृत्ति के समय वे उसमें कषाय का रस डालते हैं। मैं धनवान हूँ, विद्वान हूँ, तपस्वी हूँ, ज्ञानी हूँ, ध्यानी हूँ, मिल मालिक हूँ, घर पर घोड़े गाड़ी तथा मोटर हैं, मेरे सारे पुत्र तथा पुत्रियां ग्रेज्यूएट हैं। सब के रहने के लिए कई बंगले हैं, ऐसा वार्त्तालाप किये बिना उसे लेश मात्र भी चैन नहीं पड़ता। सत्य, नीति तथा न्याय को अलग रख कर मानव पैसा इकट्ठा करता है उसमें उसकी भावना केवल बड़प्पन की वृत्ति को पोषने की ही है।

अन्तर हृदय को ढूँढो—जैसे बारूदखाने में एक चिनगारी डालने के साथ ही बड़ा भारी धड़ाका होता है तथा सारी पृथ्वी हिल जाती है उसी प्रकार मानव को सताने में, चिढ़ाने मे नहीं आवे तब तक वह शांत रहता है। साधारण प्रतिकूल संयोग से उसकी क्रोधादि प्रवृत्ति भड़क उठती है और वह अपने हिताहित का ज्ञान भी भूल जाते हैं।

अगर तुम किसी के पास से चार आने मांगते हो और वह तुम्हे नहीं दे या उल्टा तुम्हें कहे कि तुम्हारे पास में आठ आने मांगता हूँ, ऐसे तुच्छ प्रसंग पर भी मानव अपनी शांति तथा समता भूल जाता है।

महात्मा गांधी और लार्ड इरविन—भारत आर्य देश है। भारतवासी आर्य सन्तान हैं। तो भी वे आर्यता के तत्वों को प्रति दिन बिसारते जाते है। महात्मा गांधी तथा इरविन के ध्येय में महान अन्तर था। महात्मा गांधी भारत के प्रतिनिधि गिने जाते है और लार्ड इरविन बृटेन के प्रतिनिधि। दोनों के ध्येय में ३ तथा ६ के अंक की तरह भेद था। ३ का मुख बाई ओर है तब ६ का दायों ओर। दोनो के परस्पर विचारों मे महान अन्तर था तो भी महात्माजी कहते हैं कि लार्ड इरविन और मेरे बीच में बहुत देर तक बातचीत हुई और बातचीत के प्रसंग में इरविन चिढ़े तथा खीजे ऐसे बहुत से प्रसंग आये थे तो भी उनका स्वभाव चिढ़ा हुआ मेरे तो देखने में नहीं आया। पश्चिम की प्रजा भारत की शासक है, वे भारतवासियों से वैभव में धनवान हैं और तिस पर स्वभाव में भी श्रीमंत हैं। अन्यथा इरविन को चिढ़ते देर नहीं लगती। राजनीति के आधीन हो कर इरविन ने शांति और धैर्य रक्खा होगा तब तुम्हारे अन्दर का बड़ा भाग तुच्छ प्रसंगों पर अनेक बार अपने धैर्य तथा शांति को खोता होगा यह तुमसे छिपा हुआ नहीं है।

यूरोप के सेनाधिपति की क्षमा—योरोप का एक सेनाधिपति जिसका नाम मि० रेले था, उसके साथ कुश्ती करने के लिए एक पहलवान आया था। उस सेनाधिपति ने उसके साथ कुश्ती करने से इन्कार कर दिया। उससे क्रोधित हो कर उस पहलवान ने उसके हाथ पर थूक दिया। इस प्रसंग से लश्कर के दूसरे मनुष्य क्रोधित हुये। सेनापति ने उनको शांत किया और कहा कि इस पहलवान ने जो भूल की है उस भूल को मेरा यह

छोटा सा रूमाल सुधार सकता है। जो काम करने लिए रूमाल समर्थ है उस काम के लिये तुम्हारी तलवार किस लिए प्रयुक्त होनी चाहिये ? ऐसे सत्ताधारी अपने में ऐसी शांति रख सकते हैं तब भारत भूमि, जो कि धर्म भूमि है उसके आर्य और धर्मात्मा गिने जाने वाले मानवों में कितनी शांति होनी चाहिये ?

एक जापानी की निरभिमानता—जापान के सेनापति के फोटो बाजार में बेचने को थे। इस बात का पता लगने से वह तुरन्त बाजार मे गया। अपने हजारो फोटो उसने खरीद लिये और उस दुकानदार के सामने ही उनको जला दिया। और दुकानदार को शिक्षा दी कि मेरे जैसे सामान्य पुरुष का फोटो लोग अपने मकानों में रखेंगे तो फिर महापुरुषों के फोटुओं की क्या दशा होगी ? इसके बदले यदि कहीं आपके फोटो बिक रहे हों तो आप क्या करेंगे ? अपने को धर्मात्मा मानने के पहले, अपने अन्तर को ढूंढो।

आर्य और जैन कौन ?—आर्य भूमि में मात्र जन्म लेने से ही आर्य नहीं हो सकते। अनार्य भूमि में जन्मा हो परन्तु जो उनमे सात्विक वृत्ति हो तो वे आर्य है और आर्यभूमि वाले में भी पाशविकवृत्ति हो तो वे अनार्य हैं। राग, द्वेष, निंदा तथा कलह पर जिनको विजय मिली है वही जैन हैं, फिर चाहे वे किसी भी पंथ के, सम्प्रदाय के, जाति के या देश के हों और जिनमें राग, द्वेष, कलह, ईर्षा तथा निन्दा के तत्व हैं वे भले ही जैन कुल में ही जन्मे हों जैन साधु या आचार्य हों तो भी वे अजैन, अनार्य, नास्तिक और मिथ्यात्वी है।

जितनी बाह्य सुन्दरता उतनी ही मलीनता— शहर, सुन्दर सड़क तथा भव्य मकानों से सुन्दर दीखता है परन्तु यदि आप एक दो हाथ जमीन खोद कर देखेंगे तो सड़कों के नीचे दुर्गंध युक्त नालियां बहती दिखाई देंगी। रात में आंखें चकाचौंध कर देने वाली बिजली का प्रकाश दीखता है परन्तु उन्हीं शहरों में सब से ज्यादा चोर, लुटेरे, ठग और बदमाशों की धमा चौकड़ी जमी रहती है। मानव पैर भी नहीं दीखे ऐसी सभ्यता के पुजारी बन कर विविध प्रकार के स्वच्छ, सुन्दर और रमणीक वस्त्र पहनते हैं पर उन वस्त्रों के अन्दर रहा हुआ उनका हृदय ढूँढ़ोगे तो उसमें द्वेष, ईर्षा, निंदा और कोयले से भी काली क्लेशमय कालिमा आपको मिलेगी।

धर्माधिकारी कब बनोगे ?—मानवों में से मानवता कूच कर गई है। इस स्थिति में उनमें धर्म तत्व या अध्यात्म तत्व कैसे टिक सकता है ? खुद अपनी पात्रता ढूंढ़ो और धर्माभिमुख नहीं हो सको तो सत्य, नीति, न्याय, सहिष्णुता और सादगी रखोगे तो मानवता प्राप्त कर सकोगे और उसके बाद धर्माधिकारी बन सकोगे ॥ ॐ शान्तिः ॥

९—आन्तरिक सृष्टि का सौंदर्य

जीवन किसको प्रिय नहीं ?—जीव मात्र को जीवित रहना प्रिय है। मृत्यु किसी को प्रिय नहीं। एक ही बन्दूक की आवाज सुनते ही, वृक्ष पर बैठे हुए तमाम पक्षी पलायमान हो जाते हैं। तब मनुष्य प्रतिदिन हजारों मनुष्यों को मरते हुए देखता है और लाखों के मृत्यु समाचार पढ़ता है और सुनता है लेकिन फिर भी वह बंदूक की आवाज से भयभीत हुए पक्षियों की तरह भयभीत नहीं होता है। इस अपेक्षा से मनुष्य से पक्षी विशेष जागृत है।

पशुओं का शरीर मोह—कीड़े मकोड़े अपने शरीर की रक्षा के लिए अपने बिल एकान्त स्थान में बनाते हैं। रात्रि में मक्खियां अदृश्य हो जाती हैं, और ऐसे स्थान में जाकर बैठ जाती हैं कि कोई उनका शिकार न कर सके। पक्षी भी अपने शिकारी से बचने के लिए बहुत ऊंचे वृक्ष की पतली डाली का आश्रय लेते हैं। इस प्रकार प्रत्येक को अपने शरीर और जीवन का प्रेम है और अपने विरोधी तत्वों से भयभीत होते हैं। सिंह के पास गाय, वाघ के पास बकरी, और बिल्ली के पास चूहे को रख दीजिये तो वह जीवित होने पर भी मृतवत् प्रतीत होंगे। आप उन्हे खिलाने पिलाने का यत्न करेंगे तो निष्फल होगे।

कसाईखाने मे जाने वाले पशुओं को कसाईखाने की गंध आते ही वे अपना पैर पीछे हटाते है। लकड़ियों की मार खाने

पर भी आगे नहीं बढ़ते अन्त में बलात्कार से उन्हें उस दिशा की ओर जाना पड़ता है।

दो आंख के बदले दो लाख—शरीर तो क्या लेकिन शरीर के प्रत्येक अंगोपांग के लिए मनुष्य को अति मोह और ममता है। एक भिखारी को कहा जाय कि—"तुम अपनी आंखें दे दो और बदले में दो लाख रुपये ले लो।" तो भी वह शायद ही इस बात को पसन्द करेगा। एक हजार रुपये देने पर भी अपने नाक का एक रत्ती भर मांस भी देने के लिये वह तैयार न होगा।

लजायमान शरीर—किसी का नाक सड़ गया हो और वह नाक काटा हो गया हो तो वह रास्ते चलते लज्जित होता है। काने को अपनी कानी आंख दूसरे को बताते हुए लज्जा आती है। लूले और लंगड़े भी अपने शरीर की त्रुटि के लिए लज्जित होते हैं और रबर और चमड़े के नकली हाथ पैर पहिनते है। काना अपनी कानी आंख को जगह कांच की आंख लगवा कर अपने शरीर सौंदर्य की वृद्धि के लिए प्रयत्न करता है। जिसके दांत गिर गये हों ऐसे वृद्ध भी दांत की बत्तीसी लगाते हैं। सफेद मूंछों पर कलफ लगवा कर कौवे के पंख जैसी काली बनाते हैं। अपनी वृद्धावस्था को छिपाकर यौवन का प्रदर्शन करते हैं!

सत्य वचन भी नहीं सुहाते—काने को काना, अंधे को अंधा, बहरे को बहरा, लंगड़े को लंगड़ा, और लूले को लूला कहा जाय तो भी उन्हें दुख होता है। तो उन्हे अपने अंगो-

पांग की न्यूनता कितनी खटकती होगी यह सहज ही समझा जा सकता है।

इन्द्रियों की असुन्दरता—शरीर और इन्द्रियों की सुन्दरता और सम्पूर्णता अच्छा लगती है। लेकिन इन्द्रियों की धर्मो की असुन्दरता और अपूर्णता के लिए शायद ही किसी को दुख होता हो। इन्द्रियों की शोभा आभूषण नहीं लेकिन इन्द्रियों के धर्मों को पालन करना ही है।

कान एक भी अप्रिय शब्द नहीं सुन सकता है। आंख एक भी अप्रिय शब्द नहीं पढ़ सकती। और जीभ एक भी अप्रिय शब्द का जवाब दिये बिना विश्राम नहीं लेती। या खाने पीने की त्रुटि को नहीं सहन कर सकती इस प्रकार प्रति पल इन्द्रियों की असुन्दरता दुर्बलता और कायरता का अनुभव होता है।

इन्द्रिय रूपी नागिन—प्रतिकूल संयोगो में कान सहिष्णुता, आंख प्रेम दृष्टि और जीभ अपने मीठेपन को खो देती है। जिस प्रकार प्रतिकूल संयोग में सर्प अपनी फनों को फैला कर फुंकारता है उसी प्रकार मनुष्य भी इन्द्रिय रूपी पांचों फेनों को उन्मत्त कर फुंकारने लगता है और भलों को भी एक बार कम्पित कर देता है।

कान या कोकरे?—एक ही कंकर जिस प्रकार हजारों घड़ों को फोड़ सकता है उसी प्रकार दुर्बल मनुष्यों की शान्ति को शब्द रूपी एक ही कंकर नाश कर सकता है। अनेक वर्षों के पठन, श्रवण और मनन के पश्चात भी जिस मनुष्य ने अपने

कानों को सहिष्णु नहीं बनाया उन कानों और कुम्भार के कोकरों में क्या अन्तर ?

ईर्ष्याग्नि की ज्वाला—गांव का कसाई करोड़ों रुपये कमाता है। उसके लिए लेश मात्र भी विचार नहीं होता परन्तु अपने पड़ौसी या ज्ञाति बन्धु को लाभ होता है तो यह ईर्ष्यालु आंखे उसे नहीं देख सकतीं और वे ईर्ष्याग्नि से जला ही करती हैं। चूले या श्मशान की अग्नि तो थोड़े समय के बाद ही शान्त हो जाती है लेकिन ईर्ष्याग्नि की भट्टी तो चौवीसों घंटे जला करती है।

झूठी बड़ाई—अपने मस्तक को ऊँचा रखने के लिए बड़े कहलाये जाने के लिए मनुष्य देश देशान्तरों में भागता फिरता है। थोड़ी सी भी लघुता या नम्रता वह सहन नहीं कर सकता। विलास में, लग्न में और जीमनवार में बड़ा कहलाने के लिए शक्ति के उपरांत खर्च करता है लेकिन झूठी बड़ाई चले जाने के डर से वह विलास को घटा कर अपने धन का सदुपयोग गुप्त दानादि कार्यों मे नहीं कर सकता।

अधिकार या धिक्कार—मनों मिठाई खाने पर भ जीभ को मीठी बना कर अपने दुश्मन को प्रिय और मधुर लगे ऐसे शब्द बोलने की उदारता या मधुरता किसी में शायद ही आई हो। यदि कोई जगत में लाखों का दान देकर दान-वीर कहलाता है तो दूसरा करोड़ों का दान देकर "महादानवीर या "कलियुगी कर्ण" की पदवी लेने के लिए तनतोड़ परिश्रम करता है। लेकिन अपने दुश्मन की प्रसन्नता के लिए एक भी मीठे

शब्द का दान नहीं कर सकते। जिसमें एक मीठे शब्द का भी दान करने की उदारता नहीं वह लाखों का दान किस प्रकार दे सकता है। दान देने वाला दानवीर नहीं लेकिन दान के बदले मान की भीख मांगने वाला महा भिखारी है। नौकर की मामूली भूल पर जो नौकर पर क्रुद्ध होकर बचन से उसे शान्ति नहीं दे सकता उसके हाथ में दान देने जितनी उदारता कहां से हो? लकड़ी वाले पर लकड़ी के बदले तलवार चलाने वाला हृदय-शून्य दयाहीन है। इसी प्रकार अपने आश्रितों पर श्रीमन्ताई के अभिमान में जो वाक्-प्रहार करके अपने बचनों की मिठास का भंग करता है वह हृदयशून्य पाशविक वृत्ति वाला है। अधिकारी अपने अधिकार की मर्यादा और विवेक को भूल जाते हैं जिससे वे अधिकारी के बदले धिक्कारपात्र बन जाते हैं।

टौंटा कौन?—दो के बदले एक हाथ होने से टौंटा लज्जित होता है और रबर या चमड़े का नकली हाथ पहनकर अपनी त्रुटि को ढँकता है। टौंटा होने में उसे लज्जा होती है। उसे टौंटा रहने की लेशमात्र भी भावना नहीं। लेकिन जिनके पास अटूट सम्पत्ति है वे दुखियों के दुख सुनकर भी दयाहीन और बधिर बने रहते हैं। दुखियों के दुख देखकर भी उनकी मदद के लिए अन्धे बने रहते हैं, दुखियों को अपने समझने का बड़प्पन जिनमें नहीं है और दुखियों के दुख दूर करने के हेतु जो अपने धन का सदुपयोग करने के लिए वचन का उच्चारण न कर मूक रहता है उसके रत्नजटित अंगूठी से चमकते दो हाथ होने पर भी वह टौंटा ही है। दान न देने वाला अपने हाथो को

संकुचित करता है उसके साथ ही उसका हृदय और शरीर का खून भी संकुचित हो जाता है और जो दान के लिए अपना हाथ फैलाता है उसके अंगोपांग विशेष स्फूर्ति और निरोगी बनते हैं। ऐसे कंजूस टौंटा श्रीमन्तो का धन परोपकार के लिए सात ताले वाले कमरे में रहता है और अपने विलास के लिए चौबीसों घड़ी उसकी मुट्ठी में हाजिर रहता है। "जहां धन वहां मन" इस न्याय से उसका मन पाताल ही में भटकता रहता है। और दानादि स्वर्गीय कामों में धन का व्यय करने वाले का मन स्वर्गीय सुख का उपयोग करता है।

गरीब या स्वर्ग के दूत—इस कलियुग में धनवानों के परम सौभाग्य से गरीबों को जन्म मिला है जिससे कि वे अपने धन का व्यय विलासवर्धक नारकीय कामों में न करें। गरीबों के उद्धार जैसे स्वर्गीय कामो में करें। जिस प्रकार रोगी डाक्टर के पैरों में पड़ता है और कहता है "महरबानी कर मुझे रोग से मुक्त कीजिए" उसी प्रकार धन वालों को भी गरीबों के पैरों में पड़कर उन्हें प्रार्थना करनी चाहिये कि "विषय विलास में व्यय होते हुए हमारे धन का आपके उद्धार के लिए उपयोग कीजिये। हमारे धन से आपकी आत्मा को ज्ञान से और आपके शरीर को अन्न से पुष्ट कीजिए। और आपके सुकृत्यो में हमारा भी हिस्सा रखिये" जब तक धनवान आदर्श दान का पाठ न सीखेंगे और ऐसे आदर्श दान अपने हाथों से नहीं देंगे तक तक उन्हे टौंटो के समान ही समझना चाहिये।

परोपकार के लिए जो प्रेमपूर्वक पैर नहीं बढ़ाता वह पैर वाला होने पर भी पंगु ही है।

जिन्हें अपनी इन्द्रियों की त्रुटि से लज्जा आती है उन्हें इन्द्रियों के आत्मिक गुणों की त्रुटि से और भी अधिक लज्जित होना चाहिये।

पशु से भी बेशर्म—शर्म मनुष्यों में होती है। पशुओं में लेशमात्र भी शर्म नहीं पाई जाती। पशु पक्षी अपने माता पिता के साथ स्त्री और पति जैसा सम्बन्ध रखते हुए लज्जित नहीं होते। रात दिन नग्न रहते हुए उन्हें शर्म नहीं आती। किसी भी स्थान पर और किसी भी समय पर वे अपनी वासनाओं की तृप्ति करते हैं फिर भी उन्हें लज्जा नहीं आती उसी प्रकार जिन मनुष्यों में शर्म के मर्म को समझने की हृदय शून्यता या पशुता अंकुरित हो गई है वे पशुओं से भी अधिक निर्लज्ज क्यों न समझे जायं।

इन्द्रियों के गुण—कान में सहिष्णुता, आंख में प्रेम दृष्टि, नाक में नम्रता, जीभ में मीठापन, हाथों मे दान और पैरों मे परोपकार का गुण हो तभी मनुष्य अंगोपांग वाला है। अन्यथा उसके शरीर में अगणित त्रुटियां हैं और जिस प्रकार नकटा प्रति-पल लज्जित होता है और अपना मुख किसी को नहीं दिखाता उसी प्रकार इन्द्रियों के गुणों से रहित मनुष्य को लज्जित होना चाहिए और अपने आपको संसार के सामने मुँह दिखाने का अधिकारी नही समझना चाहिये।

यन्त्र और इन्द्रियां—इस यन्त्रवाद के जमाने में मनुष्य को जब टेलीफोन, बेट्री, थर्मामीटर, फोनोग्राफ, साइकल और मोटर आदि की आवश्यकता होती है तब उपयोग करता है और बेट्री का पावर, मोटर का पेट्रोल विशेष खर्च न हो, साइकल का

टायर विशेष न घिसे इन बातों की जिस प्रकार सावधानी रखता है उसी प्रकार इन्द्रियो को भी विशेष मूल्यवान नहीं तो केवल जड़यन्त्रवत् मूल्यवान समझे तो भी काफी है। कानों को टेलीफोन जितना, आंखों को बेट्री जितना, नाक को थर्मामीटर जितना, जीभ को फोनोग्राफ जितना, और हाथ को साइकल जैसा मूल्यवान समझे तो भी मनुष्य नाटक, सिनेमा, विषय विलास, गान तान आदि अनेक प्रकार के पाप प्रवाह से छूट सकता है और इन्द्रियों का सदुपयोग कर सकता है। बेट्री या लाइट को जलाते हुए अंधेरा है या नहीं आदि का विचार करता है उसी प्रकार सुनते देखते और पढ़ते हुए उसकी आवश्यकता का विचार करना चाहिए। ऐसा करने पर वह अपने जीवन को उन्नत बना सकता है। सर्प, पतंग, भ्रमर, मत्स्य और हाथी एक एक इन्द्रियों के वशीभूत होकर मृत्यु-प्राप्त करते हैं तो मनुष्य जो कि पांचो इन्द्रिय के विलास का उपभोग करता है उसका कितना पतन होता होगा इस बात का विचार प्रत्येक सुज्ञ और विवेकशील पुरुष को करना चाहिये।

१०—आप किसके पुजारी हैं?

अत्यावश्यक तत्त्व पर विचार कीजिये!

शरीर के लिए अन्न जल और हवा आवश्यक है। और वे भी एक एक से बढ़ बढ़ कर। अन्न के बिना कुछ महिनों तक निभा सकते हैं, जल के बिना कुछ दिनों तक, लेकिन हवा के बिना शरीर कुछ मिनिट तक भी नहीं टिक सकता। अन्न की अपेक्षा जल, और जल की अपेक्षा हवा अधिक आवश्यक है। लेकिन फिर भी मनुष्य को पानी और हवा की अपेक्षा अन्न विशेष आवश्यक प्रतीत होता है। इस लिए मनुष्य अन्न के लिए रात दिन दौड़ धूप मचाता है। अन्न और पानी का नित्य स्मरण करता है, लेकिन हवा जैसी कोई वस्तु विश्व मे अस्तित्व रखती है या नहीं इसका लेशमात्र भी विचार मनुष्य नहीं करता। जब उसे बन्द कोठी में रख दिया जाता है तभी वह हवा का मूल्य समझता है। हवा से भी विशेष मूल्यवान तत्व है कि जिसके अभाव में मनुष्य एक सेकण्ड भी जीवित नहीं रह सकता है। उस तत्व को मनुष्य सर्वथा भूल गया है। उस तत्व का नाम है आत्म-तत्व। आत्म तत्व के अभाव ही से नित्य चालीस सहस्र मनुष्यों को मुर्दे समझकर जला दिया जाता है। उस तत्व का इतना महत्व होने पर भी उसका नाम तक पाशविक वृत्ति में जीवन व्यतीत करने वाले मनुष्य को अच्छा नही लगता। इससे विशेष आश्चर्य क्या हो सकता है?

शरीर की खुराक अन्न, जल, और हवा है। उसी प्रकार आत्म तत्व की खुराक दान, शील, तप और पवित्र भावना आदि हैं। जिसके प्रताप से मनुष्य अपने जीवन में सुख शान्ति और आनन्द का उपभोग कर सकता है। लेकिन जहां आत्म तत्व की बात ही नहीं सुहाती वहां उसको धरम की बात कैसे अच्छी लग सकती है ?

अन्न, जल और हवा में से एक भी तत्व यदि कम हो तो शरीर को शान्ति मालूम नहीं होती। उसी प्रकार आत्म धर्म के तत्व में से किसी एक तत्व की भी न्यूनता हो तो आत्म शान्ति का अनुभव नहीं ही होना चाहिये।

सूक्ष्म भूल—एक से दस तक के अंकों में से बालक को केवल एक दो का अंक न आता हो और व्यंजनों में से केवल "ख" न आता हो तो वह गणित सीखने में, या पुस्तकों को पढ़ने मे असमर्थ होता है। उसी प्रकार एक भी आत्म धर्म की न्यूनता आत्मोन्नति के लिए असम्भव है।

अपूर्व आविष्कार—पूर्वाचार्यों ने पर्वों की स्थापना कर धर्माराधन के लिए अमुक दिन तथा अमुक गुणों की आरा-धना के मध्यम मार्ग का मानव समाज के लिए आविष्कार किया है। और उन्हे विश्वास है कि रो रो कर पाठशाला जाने वाला बालक कभी न कभी स्वेच्छा से पाठशाला में जाकर अपनी प्रगति कर सकता है। उसी प्रकार कोई पुण्यशाली जीव भी स्थायी धर्माराधन कर सकेंगे।

धर्म कब?—अपने आंगन में जब कचरा इकट्ठा हो जाता

है तब झाडू और सफाई करने वाले की याद आती है उसी प्रकार शरीर रूपी आंगन मे जब रोग रूपी कचरा भर गया है और हमें पीड़ा हो रही है तब इस कचरे को दूर करने के लिये झाडू रूपी डाक्टर याद आता है। और वह डॉक्टरों की दवाइयो से थक जाता है। डॉक्टर स्पष्ट शब्दो में कह देता है कि यह केस नहीं सुधर सकता। तब अन्ततोगत्वा उसे धर्म रूपी झाडू और झाडू देने वाले धर्मगुरु याद आते है । इसके अलावा मनुष्य और किसी समय धर्मको शायद ही याद करता है ।

शारीरिक रोग—अपने पुत्र के पेट मे विशेष रोग होने पर पिता डाक्टर के पास जाता है। डॉक्टर कहता है कि पेट में चीरा देना होगा। रुपये ५००) फीस के देने होगे। क्लोरो फार्म सूंघाना पड़ेगा। बालक की मृत्यु का जिम्मेवार मैं नहीं! इस प्रकार डॉक्टर की प्रत्येक गेरण्टी उसका पिता मंजूर करता है।

पिता अपने प्रिय पुत्र को डॉक्टर के स्वाधीन करता है। वह आपरेशन रूम में ले जाया जाता है। यह सब देख कर पिता और पुत्र थर २ कांपते हैं। पिता को वहां से हटा दिया जाता है। पुत्र को क्लोरोफार्म सुंघाया जाता है उसके बाद उसके शरीर पर ओपरेशन से क्रिया शुरू की जाती है।

शरीर का रोग दूर करने के लिए क्लोरोफोर्म सुंघाना पड़ा और उसे सूंघने से बालक अपने माता पिता और संसार को भूल गया। तदुपरान्त उसे अपने शरीर का भान भी न रहा । तभी ओपरेशन हो सका तो आत्मा में अनन्त काल से भरे हुए काम-क्रोधादि रोगो को दूर करने के लिए कितने पुरुषार्थ और

कितनी जिज्ञासा आवश्यक है। इस बात को कोई भी विचारक सरलता से समझ सकता है।

अज्ञानियों की समझ—रोगी को दवाई और डाक्टर याद आते हैं, लेकिन निरोगी के लिए दवाई या डाक्टर की आवश्यकता नहीं होती। उसी प्रकार आत्मज्ञान रहित मनुष्य अपने आपको निरोगी समझते हैं और अपने लिए धर्मतत्व की लेशमात्र भी आवश्यकता नहीं समझते।

दोनों कार्यों को मत बिगाड़िए—आप धर्म तत्व समझने के लिये धर्म गुरुओं के पास आते है। लेकिन जिस प्रकार कोई कारीगर दिन को दिवाल चुनता है और रात को उसे गिरा देता है वही स्थिति आपकी है। धर्म स्थानक में आकर आप अपने आप में पवित्र विचारों की दीवाल चुनते है, परन्तु बाहर निकलते ही वह पवित्र विचारो की दीवाल जमीन दोस्त हो जाती है। इस प्रकार की प्रकृति से आपके यहा आने का समय बिगड़ता है और साथ ही उस समय मे होने वाला आपका सांसारिक कार्य भी नही हो पाता। इससे धर्म और संसार दोनो स्थान से भ्रष्ट होते हुये न समझे जायंगे।

ज्ञानियों से मज़ाक की जा सकती है?—

रोगी डाक्टर के पास परहेज रखना स्वीकार करता है और घर जा कर परहेज नहीं रखता तो क्या डाक्टर की आज्ञा का उलंघन या मजाक नहीं है? उसी प्रकार आप हमारे समक्ष ज्ञानियों के बचनो के लिए "हाँ जी हाँ" करते है और घर जा कर उन वचनों को भूल जाते है यह ज्ञानियों की हंसी ही है।

क्या यह शोभा देता है ?—कोई स्त्री अपने पति के फोटू की पूजा करे और जब पति घर आवे तब उसका सम्मान भी न करे, लेकिन उसके साथ अविवेकपूर्ण व्यवहार रक्खे तो यह उसकी अज्ञानता और मूर्खता है, उसी प्रकार अज्ञानी मनुष्य भी अपने शरीर रूपी फोटू की पूजा करते है। वे उस फोटू की हीरे मोती, माणिक और विविध प्रकार के वस्त्रालंकारों से सेवा करते हैं लेकिन उस फोटू के स्वामी स्वरूप आत्मा का अनादर करते हैं। उसके अस्तित्व को स्वीकार करने की प्रमाणिकता भी उनमें नहीं है। तो उन्हे कैसा समझना चाहिए ?

जीवित कौन ?:—मुर्दे के सामने लाखो मनुष्यो को जलाया जावे, फिर भी उसमे जरा भी जागृति नहीं आ सकती। इसी प्रकार मानव की आन्तरिक स्थिति भी मुर्दे के समान होने लगी है, जिससे मनुष्य पर जरा भी असर नहीं हो पाता। मुर्दे को लाखो मन जलते हुए लकड़ों या कोयलों में गाड़ दिया जावे फिर भी वह चमकता नही है। जब कि मानव एक चिनगारी मात्र से चमक जाता है। उसी प्रकार जिसे आत्म-तत्व का भान नहीं है उस पर किसी प्रकार के उपदेश असर नहीं कर सकते। जब कि आत्म-तत्व के भान वाला साधारण प्रसंगों में भी जागृत हो कर धर्माभिमुख बन जाता है।

पर्वत बड़ा या चींटी ?:—मेरु जैसे महान् पर्वत पर गिलहरी और चिड़िया जैसे सामान्य प्राणी भी चढ़ सकते हैं, उसे सिहासन बनाकर उसपर बैठ सकते है और वे पर्वत के शिखर पर ही अपने शरीर का मल-विसर्जन करते हैं। तब गिलहरी अपने

शरीर पर मक्खी या मच्छर को भी नहीं बैठने देती। क्योंकि गिलहरी में मेरु पर्वत की अपेक्षा आत्म तत्व की झलक विशेष है। मेरु पर्वत करोड़ो गिलहरियों को अपने एक ही कोने में दबा सकता है। इतना वह महान् है। फिर भी उसमें चींटी की अपेक्षा चेतना शक्ति की अल्पता के कारण वह गिलहरी या चींटी से भी पामर है। इसी प्रकार चाहे जैसा धनवान मनुष्य हो, लेकिन यदि उसे आत्म तत्व का भान नहीं है तो मनुष्यों की दृष्टि में भले ही वह बड़ा हो तो भी वास्तव मे वह जड़ मेरु पर्वत के समान निर्माल्य है।

मृत्यु के समय क्या काम आयेगा ? :—धर्म भावना वाला अपने लिए इस लोक और परलोक में स्वर्गीय महल बनवाता है। जब कि अधर्मी अपने लिए कब्रस्तान तैयार करता है। प्राचीन काल मे कई देशों में बालक पैदा होते ही उसको गाड़ने के लिए कब्र बनाने का विचार किया जाता था और राजकुमारों के लिए तो जन्म होते ही कब्र बनाई जाती थी। उस कब्र का कार्य जब तक वह जीवित रहे चलता था। जिस प्रकार वर्तमान में रहने के लिए बड़ा महल हो उसमे बड़प्पन समझा जाता है, उसी प्रकार उस समय जिसको गाड़ने के लिए बड़ा कब्रस्तान हो वही बड़ा समझा जाता था। वह कब्र तो मृत्यु के समय भी काम आती है, लेकिन मनुष्य की संपत्ति मृत्यु समय भी काम में नहीं आती।

धन और धर्म:—मनुष्यों को धन का मोह इतना है कि वह उसे धर्माभिमुख नहीं होने देता। आपको यदि धन विशेष

प्रिय है तो उसे आप अपना शिरताज समझते हैं और उसको उतना ही सम्मान देते है, लेकिन धर्म को अपने तुच्छ पैरों के समान मानते हैं। लेकिन पैर तन्दुरुस्त न हो तो मस्तिष्क को जरा भी चैन नहीं पड़ती तो धर्म को कैसे भुलाया जा सकता है ? पैर के आधार पर ही मस्तक रहा हुआ है उसी प्रकार धर्म के सहारे पर ही आपका सुख और धन संपत्ति टिकी हुई है।

मोर जैसे न बनिए:— मोर छत्र बनाकर नाचता है और नाचते हुए विचार करता है कि मेरी कलंगी, गरदन, शरीर, और पूंछ कितने सुन्दर है। केवल पैर ही लज्जित करने वाले हैं। लेकिन वह पामर प्राणी इस बात का विचार नहीं कर सकता कि यह कलंगी और सुन्दर पूंछ ही शिकारी को उसके प्राण हरण करने के लिए लालायित करते है और पैर ही उसके रक्षणार्थ उपयोगी हैं। इसी प्रकार मोर के सुन्दर पूंछ रूपी धन ही मनुष्य के लिए शत्रुरूप है। वही मनुष्य के जीवन को कई बार खतरे मे डाल देता है, जबकि धर्म ही उसकी रक्षा करता है।

सर्व सुख और संपत्ति का मूल धर्माराधन ही है:—

११—मानव शरीर का आविष्कार क्यों ?

महान् आविष्कार:—शरीर की सच्ची शोभा आभूषण नहीं अपितु—आत्मिक गुण हैं। इस बात पर हम अनेक बार विचार कर चुके हैं। आत्म साधना के लिये मानव शरीर प्रकृति का ' Latest and last " सबसे अन्तिम आविष्कार है। इस से विशेष सुन्दर आविष्कार करने के लिए प्रकृति सर्वथा असमर्थ है।

आंखों का मूल्य:—मानव शरीर की मशीन और उसके यंत्र महा मूल्यवान है एक २ यंत्र की त्रुटि का सुधार करने के लिए ऐडीसन जैसे करोड़ो विज्ञान सम्राट् भी सर्वथा असमर्थ हैं। एक मनुष्य के आखे नही हैं, फिर भलेही वह चक्रवर्ती का पुत्र ही क्यों न हो। वह आंखों का तेज देने वाले को शरीर के तोल के बराबर भी कोहिनूर और हीरे देने की इच्छा करे फिर भी उसे आंखें नही मिल सकती। इसी प्रकार प्रत्येक इन्द्रिय की उपयोगिता और बहुमूल्यता समझ लेनी चाहिए।

जीभ का मूल्य:—मनुष्य मे जब तक जीवन है तब तक वह सार्थक या निरर्थक कार्यों में अपने शब्दों का उपयोग करता है। लेकिन उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके साथ बात करा देने वाले को करोड़ो का उपहार या आधा राज्य भी, दे दिया

जाय तो भी वह उसे नहीं बुलवा सकता और डॉक्टर और वैज्ञानिक भी बात नहीं करवा सकते ।

विश्व के तमाम वैज्ञानिक और विश्व के तमाम सायन्स के प्रयोग एकत्रित करने पर भी वे मानव का शरीर या उसके अंगोपांग बनाने में सर्वथा असमर्थ हैं ।

विज्ञान की शक्ति:—वैज्ञानिकों ने जल स्थल और नभ मंडल पर अपना साम्राज्य स्थापित किया है। रेलवे, तार, पोस्ट, ऐरोप्लेन, मोटर, स्टीमर, रेडियो, बिजली, वायरलेस, और फोनोग्राफ आदि महान् आविष्कार किए हैं और कर रहे है, लेकिन मानव यन्त्र बनाने के लिए वे सर्वथा असमर्थ हैं।

शून्य का गुणाकार:—मनुष्य के शरीर की त्रुटि वैज्ञानिक दूर न कर सकें या मनुष्य की मृत्यु को न रोक सकें, तब तक उनके तमाम आविष्कारों का जोड़ और गुणाकार शून्य का गुणाकार और जोड़ ही है ।

इस पर से यह सरलता से समझा जा सकता है कि मानव का यन्त्र महान् से भी महान् है ।

मानव अनन्त सृष्टि समान है:—रेल्वे, स्टीमर, ऐरोप्लेन, बिजली, वायरलेस, रेड़ियो, जीन, प्रेस, और महलों की उत्पत्ति छोटे दिखते हुए मानव के मस्तिष्क रूपी अनन्त सृष्टि मे से हुई है और वर्तमान के तमाम आविष्कार उस अनन्त महान् सागर रूपी सृष्टि के बिन्दु तुल्य है और भविष्य में विज्ञान, आकाश और पाताल को एक कर दे। चन्द्र और सूर्य को

अपने विज्ञान भवन में कैद करले तो भी वह मानव महासागर रूपी सृष्टि का बिन्दु मात्र ही है।

मानव का आविष्कार महान् है। प्रत्येक यंत्र की कीमत अंकित की जा सकती है। लेकिन मानव यंत्र के एक आंगुल के भाग की कीमत भी देने के लिए विश्व में कोई भी समर्थ नहो।

जीवन नहीं जुड़ सकता:—गंगा, यमुना और सिन्ध के बड़े बड़े पुल विज्ञान की सहायता से बनाये गए हैं और विज्ञान मेरु जैसे महान् पर्वता को भी गिरते हुए रोक सका है। लेकिन मानव जीवन का एक पल भी नहीं बढ़ा सकता। विज्ञान मनुष्य के टूटे हुए आयुष्य को नहीं जोड़ सकता।

मनुष्य का खर्च:—मिल. जीन, प्रेस आदि यंत्रो मे प्रति दिन सैकड़ों रुपयो का कोयला जलता है। गाय, भैंस और घोड़ों के लिए भी प्रति दिन घास और धान्य के पीछे १-२ रुपयों का खर्च करना पड़ता है। जब कि मानव की महान् मशीन को चलाने के लिए केवल पाव भर आटा ही पर्याप्त है। मानव शरीर की और उसके अंगोपांगो की उपयोगिता देखते हुए यदि उसके पीछे प्रति दिन करोड़ों का भी खर्च करना पड़े तो भी वह अत्यल्प है। मृत्यु के बाद प्रत्येक इन्द्रिय की एक २ मिनिट के लिए करोड़ो रुपया खर्च करने पर भी सफलता नहीं मिलती। तो फिर जीवित अवस्था वाले मानव के प्रत्येक दिन का खर्च कितना होना चाहिये यह सहज ही समझा जा सकता है।

प्रकृति का कर (Tax):—प्रकृति का ऐसा नियम है, कि जो

वस्तु विशेष मूल्यवान होती है उसे अमूल्य ही रखी जाती है जिससे उसका वास्तविक मूल्य समझा जा सके।

यदि प्रकृति चन्द्र और सूर्य के प्रकास पर चुँगी (Tax) मनुष्य पर डाले, तो क्या उसे वह अदा कर सकता है ?

वर्षा, गर्मी और सर्दी आदि ऋतुएँ भी अपना कर (Tax) मनुष्य पर लगावें तो क्या वह उसे चुका सकता है ?

इसी प्रकार मानव के जीवन के लिए सबसे विशेष आवश्यक हवा है। यदि उसका भी कर (Tax) देना पड़ता होता तो विश्व के प्राणी शायद ही जीवित रह पाते।

उसी प्रकार प्रकृति ने मानव का यन्त्र इस प्रकार बनाया है, कि वह बड़े से बड़ा कार्य भी कर सकता है। फिर भी उसका निभाव खर्च ६ आने की बेट्री जितना भी नहीं। ६ आने की बेट्री का जितना चार्ज लगता है यदि उतना चार्ज आंखों के प्रकाश के लिए लगाया जाता तो मनुष्य धन के लोभ से आंखें बन्द करते हुए चलते और कुए मे पड़ कर मृत्यु के भोग बनते।

मानव शरीर का महत्त्व सरलता से समझा जा सकता है। उस शरीर से वैसे ही महत्वपूर्ण काम होने चाहिये। तब इस जीवन की सार्थकता है और तभी प्रकृति की दया का सदुपयोग किया गया माना जा सकता है।

मनुष्य के लिए आदर्श:-आकाश दीप (SearchLight) प्रति दिन सैकड़ो जहाज और स्टीमरों को चट्टानो से टकराते हुये बचाता है और लाखों मनुष्यो को जीवन दान देता है।

नदी का पुल अपने ऊपर से सैकड़ो ट्रेनों को जाने देता है और लाखों मनुष्यो के सुख में सहायता पहुँचाता है।

आपकी गली में यदि एक ही दीपक जलता हो तो वह सैकड़ों मनुष्यों के, आने जाने के लिये, मार्ग दर्शक हो जाता है। साप, बिच्छू, खड्डे, आदि से आपको बचाता है। एक ही गुलाब का पौधा आपके आंगन मे बोया गया हो तो वह आपकी गली के तमाम मनुष्यो को सुवास और शीतलता देता है। एक ही कुआ हजारो मनुष्यो की तृषा रूपी ज्वाला को शान्त करता है। एक ही वृक्ष छाया दे कर हजारों मनुष्य, पशु और पक्षियो पर उपकार करता है। तो फिर एक ही मनुष्य का जीवन विश्व के लियें कितना उपयोगी होना चाहिये ? इसका विचार आप स्वयं करें।

जीवन की निष्फलता:—मानव अपना जीवन सरलता से परमार्थ मय व्यतीत कर सके, इसीलिये इतनी सुविधाएँ दी गई हैं। इसके फलस्वरूप मानव स्वार्थ भावना से अधिकाधिक सड़ रहा है और उसकी दुर्गन्ध विश्व मे फैल कर शान्ति का भंग कर रही है।

प्रकृति की दया:—मानव शरीर धनोपार्जन के लिये ही नहीं प्राप्त हुआ है। मानव शरीर के लिये आवश्यक अन्नजलादि साधन वह साथ लेकर ही जन्म लेता है। जन्म के समय वाल्यावस्था के कारण, दांत के अभाव मे धान्य को पचाने की शक्ति न होने से प्रकृति ने माता के स्तनों में दूध दिया और उसमें प्रकृति ने लेशमात्र भी पक्षपात नही किया। रानी और महतरानी, दोनों के यहाँ बालक का जन्म हुआ तो दोनो ही को एक साथ प्रकृति ने दूध दिया और वही व्यवस्था पशुओ के लिये भी की।

माता के स्तनों से दूध आना बन्द होते ही राज कुमार और भङ्गी कुमार; दोनों ही को प्रकृति ने दाँत दिये, जिससे कि वे धान्यदि खा सके। जिस प्रकृति ने ऐसा मूल्यवान यंत्र वाला शरीर दिया है, वह प्रकृति क्या मनुष्य को अन्न, जल और वस्त्र नहीं दे सकती ?

विवेकमय जीवनः—एक मनुष्य रुपये को काटे तो उसमे स्वाद नहीं आ सकता; लेकिन दाँत टूट जायगा। परन्तु जो रुपये की चीलर ले कर बाजार से एक ही पैसे की शक्कर खरीद लावे और उसका उपयोग करे तो उसे बहुत प्रसन्नता होगी। हीरे को मनुष्य चूसता है तो उसे वह फीका लगता है। उसमें जरा भी स्वाद नहीं आता। बालक के सामने हीरा और मिश्री का टुकड़ा रखिये तो वह हीरे को फेंककर मिश्री के टुकड़े को प्रेम से खा लेगा। बालक को यह मालूम नहीं है, कि इस टुकड़े में लाखो मन मिश्री की बोरियाँ भरी हुई हैं। उस हीरे में छिपी हुई शक्कर को कोई जौहरी ही देख सकता है। बालक को उसका ज्ञान नही हो सकता। वही स्थिति वर्तमान में मानव समाज के समक्ष मानव देह की हो रही है।

राजकुमार राजसिंहासन पर बैठ कर राज्य तत्र चला सकना है, लेकिन यदि वह खेत में जाकर घास काटने का काम करेगा तो वह घास काटने के बदले अपनी अंगुली ही काट आयेगा। यही स्थिति मानव प्राणी की हो रही है।

मनुष्य विक्रयः—भारत में अन्य देशों की अपेक्षा से वायसराय का वेतन सब से अधिक है। मासिक वेतन इक्कीस हजार अर्थात् एक दिन के सात सौ रु० होते है और एक दिन

के मिनीट एक हजार चार सौ चालीस होती है इस हिसाब से वायसराय को प्रत्येक मिनीट के आठ आने और एक घंटे के तीस रुपये मिलते है। जब कि कइयो को मासिक तीस या तीन सौ योग्यता अनुसार मिलते है।

एक विधवा के पास यदि एक करोड़ रुपया है तो उसका व्याज प्रति वर्ष ५ लाख मिलता है और यदि ब्याज न उठाले तो बारह वर्षों मे एक करोड़ के दो करोड़ हो जाते हैं। यदि एक मनुष्य कही नौकरी करता है तो एक वर्ष के लिये अपनी तमाम शक्तियाँ सेठ के वहां व्याज पर रखता है तब मुश्किल से ही किसी को वार्षिक पांच सौ, हजार या दो हजार का वेतन मिलता है।

जिस मनुष्य ने अपने शरीर रूपी यन्त्र को किसी सेठ के यहां व्याज पर या गिरवी रक्खा, उसके फलस्वरूप रोज के आंठ, बारह आने या दो चार रुपये मिलते हैं। इसीसे यह स्पष्ट होता है कि मानव शरीर धनोपार्जन के लिये नही, लेकिन धर्मोपार्जन के लिये ही मिलता है।

मानव जीवन का ध्येयः—यदि मानव जीवन का ध्येय धनोपार्जन ही होता, तो मानव के मूल्यवान् शरीर और उसकी अमूल्य इन्द्रियों के हिसाब से उसे प्रत्येक मिनिट में लाखो रुपयों की आवक होनी चाहिये। मानव जीवन कल्पवृक्ष या कामधेनु जैसा होने से वह जिस समय जो वस्तु चाहे वह उसे मिल जानी चाहिये था, लेकिन ऐसा नही होता। चौबीसो घंटे तनतोड़ परिश्रम करने पर भी कोई भाग्यशाली ही अपनी आजीविका चला सकता है। मानव समाज का बहुत बड़ा भाग तो अर्ध नग्न और अर्ध क्षुधातुर

स्थिति में ही अपना जीवन व्यतीत करता है। भारत में चार करोड़ मनुष्यों को नित्य भरपेट भोजन नहीं मिलता।

यदि मनुष्य अपना विलासी जीवन घटा कर शरीर के लिये आवश्यक अन्न, जल और वस्त्र के अलावा निरुपयोगी ऐशआरामों की चीज़ों का त्याग करें तो वह अपना जीवन सादगी और संयममय (धर्ममय) व्यतीत कर सकता है और तभी उसका संयम सार्थक है।

१२-ऋतु धर्म और मानव धर्म

इस समय वर्षा ऋतु है। इसलिए जो स्थलमय स्थान थे वे जलमय हो गये हैं। और मानों पृथ्वी पर चमकते हीरो की बिछात की गई हो इस प्रकार नदी और सरोवर रमणीय प्रतीत होते है। जो जमीन मिट्टी, पत्थर, कंकर और कूड़ा करकट से श्मशानवत् माळूम पड़ती थी; वह आज नीलम के गलीचे की तरह सुहावनी बन गई है। वर्ष भर से तृषातुर चातको की तृषा तथा स्थावर और जगम जीवो को शान्ति मिली है।

नालियाँ और गटरें धुल गईं:—शहरो की मीलों लम्बी और दुर्गंधमय गटरें, नलियाँ और सड़कें धुल कर स्वच्छ हो गई हैं। वर्षा ने सारे संसार को धोकर साफ सुथरा बना दिया है।

अब उस वर्षा ऋतु का हम पर क्या प्रभाव पड़ा है? यही विचारणीय है। हमारा हृदय, कि जो केवल चार अंगुली प्रमाण है वह धोया गया या नहीं? उसमें से दुर्गन्ध और मलीनता का नाश हुआ है या नहीं? इस बात का विचार कीजिये।

दया का अंकुर:— स्थान स्थान पर हरियाली आगई है, लेकिन हमारे मे दया का अंकुर उदित हुआ है या नही? इस बात का विचार करने के लिए हम एकत्र हुये है।

प्याऊ:—वर्षा ने जगह जगह पर जल की प्याऊ लगाई है और वह प्रति वर्ष लगाता है। तथा मनुष्यो ने वर्षा के जल

से भी अधिक उपयोगी बनने के लिए कितने क्षुधा पीड़ित और तृषातुरों के लिए प्याऊ खोली और विश्व को शान्ति प्रदान की ?

इस ऋतु में तालाब और कुए तो भर गए और नदियो मे पूर आगये। तो इस श्रावण मास में जो कि धार्मिक मास कहलाता है, आपमें धर्म भावना के पूर आये या नहीं ? कुआ और बावड़ी रूपी आपकी तृष्णा शान्त हुई या नहीं ? इस पर विचार करने के लिए आप लोगो को आमंत्रण दिया जाता है।

किसान पेट पर पट्टी बांधकर भी जमीन में विविध प्रकार का अनाज बोकर धान्य पैदा करते हैं। तब मनुष्य को अपने हृदय रूपी खेत मे धर्माराधना के दान शीयल तप और भावना रूपी बीज बोना है और उसके मधुर मधुर फलों को उतारने के निमित्त ही यह अवसर प्राप्त हुआ है। इसी मे उसकी सार्थकता है।

वृक्ष की सेवाः—वृक्ष प्रकृति मे इस ऋतु मे पानी लेते हैं और उसके बदले में प्रकृति के संतान रूप समस्त विश्व को पत्र पुष्प, फल और उनके मधुर रसों का दान देकर अपने ऋण से मुक्त होने का प्रयत्न करते हैं। थके हुए पशु पक्षी तथा मनुष्यो को अपनी छाया और पवन के शीतल झकोरो से विश्राम और शान्ति देते हैं फिर भी मनुष्य उन्हे पत्थरो की मार मारते हैं लेकिन वे प्रसन्न भाव से मनुष्यों को फल देते ही है।

शिक्षा पाठः— वृक्ष हमारे समक्ष विश्व प्रेम, विश्व सेवा का आदर्श उपस्थिति करते हैं। जब कि वृक्ष उपरोक्त रीति से विश्व की सेवा करते हैं, तो मनुष्य को अपना मनुष्यत्व और

महत्व बनाये रखने के लिये सेवा के कैसे अलौकिक और अपूर्व आदर्श उपस्थित करने चाहियें ? और ऋण से उऋण होने के लिये कैसे कैसे प्रयत्न करना चाहिये ? यह सहज ही समझा जा सकता है।

रोटी का कवलः—मनुष्य एक ही सेकंड में रोटी का एक कवल गले में उतार जाता है। लेकिन वह कृतघ्न मनुष्य विचार नहीं करता है कि रोटी का यह कवल कितने लाख मनुष्य और पशुओं के श्रम का फल है ? और एक ही कवल के आहार से मैं लाखों मनुष्य और पशुओ के उपकार से उपकृत होता हूँ। अतः उनकी सेवा करना मेरा परम कर्तव्य है। इन बातों का तो शायद ही कोई विचार करता हो।

चाँवल का एक दाणा—बौद्ध साधुओ का ऐसा नियम है, कि भोजन करते हुए चाँवल का एक भी दाणा व्यर्थ न जाने देना। वे समझते हैं कि एक दाना झूंठा डालना, करोड़ों मनुष्यो के श्रम का अपमान करना है। इस प्रकार झूंठा छोड़ना, देश बन्धुओ को भूखे मारने का पाप सिर पर उठाना है। तब महाजनों के घरों में और जिमनवार मे सैकड़ो मनुष्य जीम सकें उतना भोजन खराब कर समय और धन का दुर्व्यय किया जाता है और झूंठन की गंदगी से जठरी जन्तु उत्पन्न कर रोग फैलाये जाते हैं। यह बात अनुभव सिद्ध है अतः इस पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

लाखों का उपकार— गेहूँ की उत्पत्ति के लिए खेत, खेती, किसान, बैल, हल, बीज, पानी, कुआ, गेहूँ को पीसने के,

लिये पर्वतों को तुड़वा कर पत्थरों की चक्की बनाना उसके कीलों के लिए लोहे की खानों को खुदवाना, खीलें बनाना, पकाने के लिए चूला, लकड़ी, चकरोटा, बेलन आदि अनेकानेक साधनों के लिए अगणित मनुष्यों की सहायता प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से लेनी पड़ती है। फिर भी मनुष्य इस प्रकार का सम्यग विवेक पशु की तरह भूल गया है। पशुओं में विचार शक्ति नहीं है, लेकिन मनुष्य में विचार शक्ति होने पर भी वह पशुवत् विवेक शून्य जीवन व्यतीत करता है। इस लिए वह पशु से भी अधिक दया पात्र है।

शरद् ऋतु—वर्षा ऋतु के अपूर्ण कार्यों को सियाला पूर्ण करता है। शरद् ऋतु की धूप दिन में अपनी गर्मी से धान्य को सुखाता है। और पृथ्वी की आर्द्रता को दूर कर मनुष्यों की सरदी के साथ सूर्य स्नान करवा कर मनुष्य में भरता है। जठराग्नि को भी विशेष प्रबल करता है और जठराग्नि को पुष्ठ करने वाले बादाम पिस्ता द्राक्षादि मेवा तैयार कर मानव समुदाय की सेवा करता है।

ओस का आदर्श—रात्रि को विश्व का प्रत्येक स्थावर और जंगम जीव निद्राधीन हो जाता है तब शरद् ऋतु की शीतल रात्रि ओस बिंदु बरसा कर खेतो को पोषण देती है और मनुष्य उसकी गुप्त सेवा को न जान सके, इसलिए मनुष्यों को जागृत होने से पहले ही वह (ओस बिंदु) लुप्त होजाती है। इस प्रकार वह मूक और गुप्त सेवा कर मनुष्य को दान का आदर्श पाठ सिखाती है।

दान के प्रकार—दान देकर मौन रहे, वह उत्तम दान देकर विज्ञापन करे वह मध्यम, दान देने के पहले ही विज्ञापन करे यह अधम।

इस प्रकार उत्तम, मध्यम और अधम ऐसे दातारों; के तीन विभाग हैं। इन तीनों में से आप किस कोटि के है ? इस बात का विचार करें। वर्तमान जैन समाज की मनोदशा पर विचार करते हुये उपरोक्त तीन विभागो के बदले किलयुग मे महाअधम, अधमाधम अधम आदि विभाग करे तभी उन विभागो में से उसका एक नंबर आ सकता है। अन्यथा वह उस दान के स्वरूप को समझने के लिये भी सर्वथा अपात्र बन सकता है।

मान का दान दीजिये—लाख का दान देना सरल है। लेकिन दिये हुऐ दान के मान का दान देना बहुत कठिन है। सौ का दान देने वाला लाख के दान के मान की आशा रखता है। लाखों की मिल्कियत के औषधालय, स्कूल, धर्मशाला आदि मकानों मे पंद्रह बीस हजार का दान देकर उस संस्था पर अपने नाम के शिला लेख का सुनहरी अक्षर वाला बोर्ड लगाते हुऐ मनुष्य को जरा भी लज्जा नहीं आती।

धर्मशाला में सैतान—एक धर्मशाला मे मेरा उतरा था। वहां एक मुसलमान दर्शनार्थ आया। उसने कहा कि 'महाराजजी! आपके मकान में शैतान घुस गया है" में इस मुसलमान के शब्द एक दम नही समझ सका, तव उसने स्पष्टीकरण किया कि धर्मशाला वनाने वाले ने दरवाजे पर अपने नाम का शिला लेख रक्खा है। लोगों की सुख साधना के लिए हजारों

रुपया खर्च कर धर्मशाला बनवादी है, लेकिन उसमें अपने नाम का मान रूपी शिला लेख रूप शैतान रक्खा है। वह शैतान मुसाफिरों में शैतान बनाने की भावना पैदा करेगा और दूसरों को भी उत्त-राधिकार के रूप मे शैतानी भाव देता जायगा।

कहां तो शरद् ऋतु की ओस बिंदुओं का एकान्त शान्त और घोर अंधेरी रात्रि में गुप्त और मूक सेवा करने का पवित्र आदर्श ? और कहां थोड़े दान में ऐसी शैतानी भावना वाले की अपने वंशज के लिए भी उत्तराधिकार के रूप में शैतानी तत्त्व रख कर अपना अहित करने के साथ अपने वंशज का भी अहित करने की भावना।

चीन के साहुकार—आपको कोई चीन का साहुकार कहे तो बुरा लगेगा कि मेरा अपमान किया। लेकिन वस्तुतः ऐसा नही है। कुछ वर्षों पहिले एक राष्ट्रीय नेता रंगून मे एक चीनी की दुकान पर चंदा लेने के लिये गये थे। तब वह चीनी व्योपारी सीधा तिजोरी के पास गया और देने की रकम देने के बाद ही चंदे की लिस्ट मे अपना नाम लिखा। कारण पूछने पर उसने कहा कि "लिखाने के बाद जितनी देर रकम देने में लगती है, उतना मेरे सर पर धर्म का ऋण रहता है। ऐसा ऋण रखने की हमारे धर्म शास्त्रों मे सख्त मनाई है। तब आज भारत भूमि बड़े बड़े धर्मार्थियों के घरो में वर्षों तक धर्मादे की रक़म अनामत रूप से जमा रहा करती है। उसीसे अपना व्योपार करते हैं और नफा घर में रखते है। और यदि व्याज देते है तो साहुकारी व्याज से बहुत ही कम। जाहिर की जाने वाली दान की रकम

मरण शैय्या पर पड़े हुए मनुष्य को सान्त्वना देने के लिए और यमराज को रिश्वत देने के रूप में जाहिर की जाती है। रकम तो अपने घर ही में रहती है। भारतीय धार्मिक संस्थाओ की धर्म खाते के रकम की जैसी अव्यवस्था देखी जाती है वैसी तो शायद ही किसी अन्य देश मे होगी। भारतवर्ष धर्म प्रधान देश है। भारतीय जनता आस्तिक कही जाती है। फिर भी पाश्चिमात्य वास्तिक मानी जाने वाली प्रजा के दान के आगे भारत के राजा महाराजाओं के दान भी लज्जित हो जाते हैं।

ग्रीष्म ऋतु—चौमासे के अपूर्ण रहे हुए कार्य को शर्दी ने पूर्ण किया और शर्दी का अपूर्ण कार्य गर्म ऋतु पूर्ण करती है। ग्रीष्म काल की प्रचण्ड गर्मी विश्व की गंदगी को सुखाकर भस्म कर देती है। और कचरे को अपने पवनरूपी पंखों में डाल कर समुद्र में दफना देती है तथा मेघराज को पधारने के लिए आमत्रण देती है और उनके आगमन के पूर्व करने योग्य तैयारियां वह कर रखती हैं।

कच्चे फलों का पकाना—विविध प्रकार के फलो का खट्टापन, कडुआपन फीकापन आदि को अपनी गर्मी से दूर कर मधुरता उत्पन्न करती है। जिस प्रकार कि पक्षी अपने अंडों को पंखों मे दवाकर सावधानी से पकाता है और विश्व की व्याकुलता दूर करने के लिए विश्व की सेवा करने के लिए पक्षी को जन्म देता है। क्योंकि पक्षियो के पखो की हवा अनेक रोगों का नाश करती है। लकवा के रोगियों के लिए कबुतर की हवा विशेष लाभप्रद है। इसी लिए "सौ दवा और एक हवा" वाली उक्ति बहुत प्रचलित है।

प्रेम का प्रदर्शन—कच्चे आम खट्टे होते है। पकने के बाद वह मनुष्य को बहुत स्वादिष्ट और मधुर मालूम होते हैं। रविवार आदि दिनों मे अपने स्नेहीजनो को आमंत्रण देकर प्रेम का प्रदर्शन करते हैं। यदि आम को गरमी ने न पकाया होता तो आप अपने स्नेही का स्वागत किस प्रकार कर सकते थे ?

निंबौली भी मीठी—ग्रीष्म ऋतु आम को मीठा बना देती है, परन्तु निंबौली जो कड़वी जहर जैसी होती है उसे भी वह मीठी बना देती है। और बच्चे प्रसन्नता पूर्वक उसे खाते है। तदुपरान्त वह अनेक रोगों को दूर करती है।

फल अपरिपक्व अवस्था मे कच्चे होते है, परन्तु पकने के बाद तो निंबौली भी मीठी बन जाती है। तो अन्य फलों के मीठे-पन के सम्बन्ध में किसको शंका हो सकती है ?

ऋतु और अवस्था—मनुष्य की बाल्यावस्था तो चौमासे के उगते हुए अंकुर के समान है। युवावस्था, जठराग्नि की प्रबलता के समान या धान के गीले दानो के सुखने और कठोर होने के समान ठण्डी की तरह है। वृद्धावस्था पौधौं के सूखने के समान या कच्चे फलो के पकने पर मीठे होने के समान उष्ण ऋतुवत् है।

चौमासे और ठण्डी ऋतु से मनुष्य शिक्षा ग्रहण न कर सका ऐसा विचार कर उष्ण ऋतु मे जिस प्रकार ऊपर बढ़ने के साथ ही फलों का कडुआपन और खट्टापन दूर होता है। उसी प्रकार मनुष्य मे से भी कडुआपन और खट्टापन दूर होना चाहिये। और

उसमें पके हुए फल की तरह नम्रता, कोमलता और मधुरता उत्पन्न होनी चाहिये ।

अन्तर का निरीक्षण कीजिये—आप सभी के मस्तक पर से अनेक शर्दी-गर्मी और चौमासे व्यतीत हो चुके, लेकिन यदि हृदय पर दृष्टिपात करेंगे तो मालूम होगा कि वह सदा से ही कौए की पंख जैसा काला है । जिसे लाखों मण साबुन से धोया जावे तो भी सफेद नहीं हो सकता । इसी प्रकार इतने संस्कार होने पर भी मानव-हृदय जैसे का तैसा ही कृष्ण-श्याम है । अथवा ज्यों-ज्यों पुराना होता जाता है, त्यों-त्यो उसका कडुआपन और सांप का विष भी वढ़ता जाता है; उसी प्रकार मनुष्य में भी कटुता और विष बढ़ता हुआ प्रतीत होता है ।

योग्यता—मनुष्य की पात्रता और योग्यता छिपी नही रह सकती । दिन में चाहे जैसे घनघोर बादलो से सूर्य की एक भी किरण न दिख पड़े फिर भी वह तो दिन ही है । और रात्रि शरद् पूर्णिमा की चॉदनी से क्यो न उज्ज्वल हो फिर भी रात तो रात ही है । लाखो पूर्णिमा की रात्रि के प्रकाश से घनघोर बादलों से आच्छादित सूर्य का प्रकाश अधिक ही है ।

जमीन पर थोड़ा पानी पड़ते ही अंकुर स्फुरित हो जाता है, लेकिन पत्थर को बारोंही महिने भूमध्य सागर मे रक्खा जाय फिर भी उसमें अंकुर नही स्फुरित हो सकता, बल्कि अंकुर उठाने की योग्यता वाली उस पत्थर पर लगी हुई मिट्टी हट जायगी और वह अपनी जड़ (मूल) वृत्ति मे और भी विशेष वृद्धि करेगा ।

लकड़ा समुद्र में----लकड़े के सूर्य जैसे छोटे छोटे टुकड़े

कर उसे करोड़ों योजन की गहराई वाले समुद्र के अंदर डाल दीजिये परन्तु वह जरासा टुकड़ा अपने शरीर पर रहे हुए करोड़ों टन पानी के वजन को भेदता हुआ क्षण भर ही में ऊपर को आ जायगा। जब की पत्थर के टुकड़े को घिस कर मक्खी की पंख जैसा बारीक बना डालिये और उसे हवाई जहाज के टुकड़े टुकड़े करने वाली तोप में डाल कर ऊँचे आकाश में उड़ा दीजिये, लेकिन फिर भी वह उसी क्षण नीचे गिर जायगा। लकड़े का स्वभाव तैरने का है, जब कि पत्थर का स्वभाव डूबने या नीचे की ओर जाने का है।

भाग्य शाली एक ही बीज—एक ही वृक्ष का बीज प्रतिवर्ष लाखों नहीं करोड़ो बीज उत्पन्न करता है। और उनमें से करोडों बीज मनुष्यों के पैर तले दब कर नष्ट हो जाते हैं। तब कोई एक ही पुण्यशाली बीज किसान द्वारा जमीन के गहरे खड्ढे मे गाडा जाता है। उस पर उसके शरीर से करोडों गुणा मिट्टी और जल गिरता है। वह बीज पानी मे भींजता है और जब सड़सा जाता है, तब उसमे योग्यता होने से जमीन के अगणित पटो को भेद कर अंकुर रूप से उत्पन्न होता है। और कुछ समय पश्चात् वही बीज अपने शरीर के साथ अनेक हाथी और सिंह को बंधा कर कैद कराता है। और वह उनका चौकीदार बनता है। जिस बीज को चींटी भी खींच कर ले जा सकती है। वही वड़का वीज अपने आंगन पर हाथी और सिंह कैद कर सकता है।

आर्यभूमि को मनुष्य रूप फल—प्रत्येक आत्मा अपनी

योग्यता अनुसार विकास करता है। भारतभूमि कि जो आर्य भूमि है, शक्कर से भीविशेष मीठी है। उसके बनस्पति रूपी जो विविध प्रकार के फल है, वे कितने स्वादिष्ट और मधुर होते हैं ? तब मनुष्य रूप आर्य-भूमि के माननीय फल जगत के लिये कितने उपकारी होने चाहिये ?

ऋतुएं अपना फर्ज अदा करती हैं। छोटे बड़े स्थावर और जंगम प्राणी भी अपना कर्त्तव्य बजाते हैं। केवल मानव, जिसे कि अपनी योग्यता और जवाबदारी का विशेष भान है, अपनी जिम्मेवारी और योग्यता को भूलता जाता है। मनुष्य मे नित्य मानवता के बजाय पाशवता का प्रवेश तीव्रवेग से होरहा है।

प्रकृति ने विश्व के उपकार के लिए महान् प्राणी के आविष्कार के तौर पर मनुष्य को जन्म दिया है। इससे बढ़ कर आविष्कार करने के लिए प्रकृति असमर्थ है।

मानव यंत्र—सबसे अंतिम आविष्कार के रूप में मानव अवतार है। आज के वैज्ञानिक आविष्कार के जमाने मे मनुष्य भी जड़यत्रवत् बॉदरा, कुरला और मेनचेस्टर के कारखानो की भांति शून्य दशा में पाप प्रवृत्ति करता है। कसाई खाने में गौएँ कटेंगी और कसाई का प्यारा बालक भी भूल से मशीन के नीचे आजाय तो उसे भी काट देंगे। और उसके शरीर का लोहू माँस चमड़ी आदि को दूर कर उसे भी दूसरे ढेर मे मिला देंगे। मानव संसार की भावना भी ऐसी ही जड़यत्रवत् क्रूर प्रतीत होती है।

महा रावण—रावण के दश सिर थे। इस लिए वह

औरों की अपेक्षा दसगुणी जगह रोकता होगा या उतना अधिक भोजन करता होगा। लेकिन आज के वैज्ञानिक युग ने तो रावण को भी लज्जित कर दिया है। मानव द्वारा निर्मित १००) की मशीन भी रावण की अपेक्षा विशेष लूट मचाने वाली और बलवाखोर है।

लाखो की सम्पत्ति लगा कर एक मिल खड़ी की जाती है, उसमे हज़ारो मजदूर काम करते हैं। उन मनुष्यों को एक एक मशीन दी जाती है जो कि एक मनुष्य की अपेक्षा ३०० गुणा विशेष कार्य करती है। इस लिए यह सत्य है, कि एक मशीन तीन सौ मनुष्यों की आजीविका छीन लेती है। एक मिल में कम से कम २००० मनुष्य काम करते है। और मशीन की सहायता से एक एक मजदूर तीन-तीन सौ मनुष्य का काम कर लेता है। इस प्रकार एक ही मिल ६ लाख मनुष्य का कार्य कर लेती है। उस ६ लाख गुणी मजदूरी का नफा केवल एक ही धनवान मिल मालिक को मिलता है। लेकिन धनवान को मालामाल कर देने वाले उन मजदूरों को सुख से सोने का, खाने पीने और आराम करने का भी समय नहीं मिलता। न पेट भर अन्न, शरीर रक्षा के लिए पूर्ण वस्त्र और मकान ही मिलते हैं। रावण दश सिर का ही उपयोग करता था। परन्तु आधुनिक यंत्रवाद का पुजारी, जैसा कि उपरोक्त अंको से सिद्ध होता है, रावण के दस सिर से भी ६० हजार गुण विशेष सत्त्व चूसता है फिर भी वह संतुष्ट नहो हो पाता। उनकी दृष्टि दिन रात मजूरो के वेतन में कटौती करने पर ही लगी रहती है। और वे उस धन द्वारा नाटक, सिनेमा, गाड़ी घोड़े और विलायत के भोग विलास

का उपभोग करते हैं। इससे विशेष अमानुषिकता और क्या हो सकती है !

उनके हृदय रूपी जमीन पर दया का एक अंकुर भी पैदा हुआ होता तो वे अपने जीवन का विचार करते और पाप के लिये पश्चताप भी करते। लेकिन मानवता के अधःपतन मे तो प्रति दिन अधिकता ही प्रतीत होती है।

स्वार्थान्धता—वर्तमान मे चरबी वाले वस्त्रो के लिये दूध देने वाले विश्वोपकारक पशु काटे जाते हैं। रेशम के लिये कीड़ो का विश्वासघात कर उनको उबलते हुये पानी मे डाल दिये जाते हैं। मोतियों के लिये मछलियो को इमली की फली की तरह चीर कर उनमें से मोती निकाले जाते हैं, हाथीदाँत के लिये माया जाल रच कर हाथी को मारा जाता है। इस प्रकार मनुष्य अपने सुख और स्वार्थ के लिये पाप करने में जरा भी संकोच नहीं करते।

मुलायम ऊनी वस्त्रो के लिये पंजाब मे भेड़ो के कच्चे गर्भ गिराकर उनके बाल काम में लाये जाते हैं। इन्जक्शन के प्रयोग की अजमाइस के लिये विदेश मे बदर भेजे जाते हैं। जहरी दवाइयां तैयार करने के लिये जहरी सर्प भी भेजे जाते है। इस प्रकार पाप अपनी सीमा को उलांघ चुका है।

मनुष्य की खोपड़ी का प्याला—यदि इस पवित्र भारत भूमि में विज्ञान विशारद भगवान ऋषभदेव का जन्म हुआ होता और उन्होंने मिट्टी और धातु के बर्तनो का आविष्कार न किया होता तो आधुनिक यंत्रवाद का पुजारी मानव, मानव

को भी मछली समझ कर उसके मस्तक को फोड़ कर, खोपड़ी का वर्तन के तौर पर उपयोग करता । यदि पशु के चमड़े का आविष्कार न हुआ होता तो वह मनुष्य की चमड़ी के जूते बनवाता । लेकिन मनुष्य की चमड़ी के जूते बन नहीं सकते है, इसी लिए गरीब वर्ग पर इस प्रकार का जुल्म नहीं किया गया है। वर्तनों के आविष्कार के कारण ही मनुष्य, मनुष्य मस्तक की खोपड़ी का उपयोग करने की निर्दयता के पाश से बच पाया है।

यंत्र वाद की उत्पत्ति—अपने घर पर ही पैसा ढ़ालने की और नोट छापने की आज्ञा सरकार ने मनुष्य को नहीं दी है, इसलिए विश्व का धन हमारे ही पास किस प्रकार आजायें, इसी स्वार्थ जन्य भावना के लिए मनुष्य ने यत्रवाद को जन्म दिया। जिसका अर्थ यही है कि, अधिक मनुष्यो की मजूरी शीघ्रता से एक ही मनुष्य को मिल सके।

राजा अपने विलास के लिए विविध प्रकार के कर प्रजा पर डालते है जिससे प्रजा गरीब हो जाती है। राजा प्रजा को नौकर की भाति रखती है। युद्ध में लाखो सैनिक लड़ने के लिए जाते हैं और उनमे से अनेको वहीं काम आजाते है, लेकिन युद्ध की विजय का ताज केवल एक राजा के मस्तक पर ही चढ़ता है। श्रीमन्तो ने विविध प्रकार के व्याज और व्यौपार से गरीव वर्ग को लूट लिया है। उसे विलकुल ही निर्धन बना दिया है। उन निराधार निर्धनों को श्रीमन्तो ने यन्त्रवाद द्वारा विश्व का धन लूटने की लड़ाई के काम मे लगा दिया है। इस युद्ध में इनका स्वास्थ्य

धन भी लूट लिया गया। सैनिक युद्ध मे तोप और बन्दूक के शिकार बनते है। परन्तु इस यन्त्रवाद के युद्ध में मनुष्य दुःखी होकर सड़ सड़ कर मरते हैं और यंत्रवाद के पुजारी उसकी लूट को श्रीमन्ताई समझ कर मौज मनाते है।

पापी कौन ?—भर समुद्र में एक जहाज जा रहा है, उसमे एक व्यक्ति ने सोने के स्थान के अभाव से एक मनुष्य को समुद्र मे फेंक दिया और वह सुख पूर्वक सोया। तब एक दूसरा मनुष्य एक कीले की आवश्यकता के कारण जहाज मे से एक कीला निकालने का प्रयत्न कर रहा है। इन दोनों में विशेष पापी कौन ? सोने के लिए मनुष्य को समुद्र मे फेंकने वाला केवल एक ही मनुष्य का खून करता है, जबकि कीले के लिए जहाज के पटियो को अलग करने वाला सैकड़ों मनुष्यो के विनाश का प्रयत्न कर रहा है। इसी प्रकार आधुनिक यंत्रवादी सभ्य समाज सीधे तरीके से मनुष्य का खून न करता हुआ भी यंत्रवाद को जन्म देकर सैकड़ों मनुष्यों की आजीविका छीन कर उन्हे लूटकर, अर्धनग्न क्षुधा पीड़ित स्थिति में डालकर बुरी हालत में मारने की मशीन तैयार करता है।

चोर और साहूकार—आज के लाखों साहूकारशाहीवाद को एक ओर रखिये और दूसरी ओर पूर्वकालीन चोरो के चोरी वाद को। तो चोरों के चोरीवाद मे भी जितनी प्रमाणिकता, नीति, न्याय और दया का अनुभव होगा, उतना आज के साहूकारो में शायद ही होगा।

प्रभव चोर—प्रभव नाम का चोर पांच सौ चोरो के

साथ राजग्रही नगरी मे चोरो को लिये जाता है। चोरी करने से पहले वह विचार करता है, कि आज चोरी कहाँ की जाय ? किसी के घड़े में से जल की चोरी करने की अपेक्षा सरोवर में से ही पानी भर लेना उत्तमोत्तम है। इस प्रकार निर्धन या कंजूस श्रीमन्त के घर चोरी करने से विशेष दुःख न होगा। इसलिये चोरी तो उनके वहाँ की जाय, कि जिन्हे समुद्र मे से पानी पीने की भाति मन में चोरी होनेका विचार मात्र भी न हो। इस प्रकार इन विचारों के साथ वह चोरी करने के लिए नगर मे प्रवेश करता है और जम्बूजी के वहाँ जिनके पास अपार धन सम्पत्ति है, आवश्यक धन उठाता है। जम्बूजी को मालूम पड़ता है, चोर भयभीत होते है। तब जम्बूजी उन्हे आश्वासनपूर्वक हितोपदेश देते हैं। उनका उपदेश सुनते ही पांच सौ चोर अपने चोरी के धंधे को छोड़ देते है और अपना जीवन पवित्र प्रवृत्ति मे व्यतीत करते हैं।

इस प्रकार आपने उपरोक्त चोर की कथा पढ़ली ? और आज के व्यापारी वर्ग की क्या भावना रहती है। वह आपसे छिपी नहीं।

पाप किसमें है—किसी भी कार्य मे पाप नही है; यदि वे नीति, न्याय और सत्यतापूर्वक किये जायॅ। वैराग्यपन आत्मा विश्व का जितना हित कर सकता है उतना ही एक व्यापारी भी कर सकता है। जो साधुता साधु जीवन मे रख सकता है उसे एक साहूकार अपने शाही धन्धे में भी रख सकता है। जिस व्यापारी के हृदय मे ग्राहकों के हित की ही भावना होती है, वह अपने नौकरो को नौकर न मानता हुआ पुत्र या बन्धु ही मानें। और उनके साथ वैसा ही वर्ताव करे तो वह व्यापारी अपने व्यवसाय में रहकर भी

आत्म साधन कर सकता है और विश्व के लिये उपयोगी जीवन बिता सकता है।

सब पापों का मूल—मनुष्य में सहिष्णुता का अभाव है, उसके स्थान पर केवल स्वार्थ भावना ने प्रवेश किया। जब आप स्वर और व्यंजन सीख रहे थे, तभी आपको सहिष्णुता का पाठ सिखाया गया है, लेकिन आप उस पाठ को भूल गये है। तालव्य मुर्द्धन्य और दन्त्य श, ष, स, के उसी प्रकार व्यंजन मे तीन श, ष, स, सिखाने के बाद ह, लगाने से 'सह' सहन करो' साहिष्णु बनो ऐसा भावार्थ निकलता है।

शब्द का एक ही तीर—आप सब आज शांति रस का पाठ पढ़ने आये है। यदि कोई शराबी आकर आपको धर्म का ढोंगी कहे तो आपको कितना दुःख होगा? उसके शब्द का एक ही कंकर आपके शांति रस से भरे हुए समुद्र को हिला देता है। समता का पाठ पढ़ते हुए अनेक वर्ष हुए, अनेक वर्षों के सीखे हुए पाठ को एक ही कंकर भुला देता है इसका मुख्य कारण सहिष्णुता का अभाव है।

पड़ोस धर्म—(Neighbour hood) फर्ज करो कि आपकी दुकान मे टेलीफोन है, पड़ोस की दुकान वाला उसका उपयोग करने के लिये आता है, तो आप उसे स्पष्ट शब्दो मे इन्कार करते है। एक पड़ोसी या दस पड़ोसी भी उसका उपयोग करे तो भी आपको एक पाई विशेष नहीं देनी पड़ती। आपके पड़ोसी या स्व-धर्मी बंधु को २०० या २००० का लाभ हो तो आपके नेत्र उसे नहीं देख सकते तो कहिये कि वे आपके नेत्र कैसे है? टेलीफोन

कम्पनी को लाभ हो तो क्या आपको उसमें दलाली मिलेगी? लेकिन अपना नाक कटा कर भी अगर दूसरो को अपशुकन हो सकता है तो वैसा ही करने की आपकी मनोवृत्ति रहती है। गांव के जाति भाई के सुख को न देख सकने के कारण एक भाई ने अपने पुत्र को सिंह की गुफा के सामने रख दिया। ताकि सिंह मनुष्य के खून का प्यासा बन कर बार बार गांव में आकर गांव-वासियों को त्रास दे ऐसी तुच्छ मनोवृत्ति प्रतिक्षण मानव समाज में अनुभव होती जा रही है।

मनुष्य यदि सहिष्णु बने, अपनी आवश्यकत्ताओं को घटा दे, सादगी पूर्ण अपना जीवन व्यतीत करे, तो वह अपना जीवन विज्ञान के नियमानुसार ऋतु और वृक्षों की तरह उपयोगी और सुन्दर बना सकता है।

आशा है कि ऋतुओं द्वारा दी गई आदर्श शिक्षा हृदय में धारण कर हमारा और आपका श्रम सार्थक करेंगे।

—:—

१३—सम्यक् ज्ञान का साम्राज्य
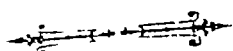
करोड़ों दीपक और एक ही सूर्य—सूर्योदय होने से पूर्व अंधकार को दूर करने के लिए बिजली, गैस, ग्यास, तेल और एरंडी के करोड़ों दीपक जलते रहते है। लेकिन सूर्योदय होते ही सब दीपक अस्त होने लगते हैं। करोड़ों दीपको में जो शक्ति है उससे अनंत गुनी विशेष सूर्य के प्रकाश में है। सारे विश्व को, पर्वतो को और वृक्षों के एक एक पत्ते पर इलेक्ट्रीक दीपक लगा दीजिये, लेकिन सूर्य के प्रकाश के आगे अनंत दीपको का प्रकाश जुगनू के प्रकाश से विशेष नहीं। उसी प्रकार समाज सुधार के लिए अनेक संस्थाएँ, सभाएँ खोली जाती हैं। नित्य नये कानून बनाये जाते हैं और सुधार के प्रस्ताव पास किये जाते हैं, लेकिन वे सभी सुधार बिजली के दीपको के समान ही हैं। विश्व में जब तक सम्यक् ज्ञान का सूर्य उदय नहीं हुआ है तब तक भारत की दरिद्रता, अज्ञानता, फूट, स्वार्थ वृत्ति, भोग विलास, ऐश-आराम और देश के लिये भारभूत खर्चे में सुधार होने का नहीं।

सुई की नोंक जितना प्रकाश—मनुष्य का शरीर अंधेरी कुटिया के समान है। उसमे सब जगह अंधकार ही है। केवल सुई की नोंक जितने आंखों के दो छिद्र जितनी आंखें खुली हैं। इसी से मनुष्य अपना सांसारिक व्यवहार चला सकता है। उसी प्रकार बादलों के कारण सूर्य का प्रकाश ढक जाता है।

आत्मज्ञान का प्रकाश शरीरादि कर्मों द्वारा दब गया है। सौभाग्य से आंखों के दो छिद्र द्वारा प्रकाश मिल रहा है। कर्मों का आवरण दूर होने से आत्मा, अपने मूल स्वरूप ज्ञानमय, प्रकाशमय बन सकता है।

महामंगता कौन ?—आंखो द्वारा मिलने वाला प्रकाश तो सामान्य है लेकिन उससे आत्मा का प्रकाश अनंत विशेष है उसे सम्यक् ज्ञान कहा जाता है। एक श्रीमन्त का हृदय गरीबों को देखने पर भी पिघलता नहो। उसे सहायता नहीं देता। वह नेत्र होने पर भी अन्धा है और लक्ष्मी होने पर भी निर्धन है। जब कि एक अंधभिखारी भी यदि गरीब के हृदय को सुन कर अपनी ओर से यथाशक्ति साधन देने को तैयार होता है तो वह धनवान, ज्ञानवान, और नेत्र वाला है।

धर्म गुरुओं का स्थान फोनोग्राफ ग्रहण करेंगे- व्यवहारिक शिक्षण के लिए जितना लक्ष दिया जाता है उससे विशेष धार्मिक शिक्षण के लिए दिया जाना चाहिये। धार्मिक ज्ञान ही के अभाव के कारण भारत से आर्यतत्व विदा हो रहा है। और अनार्य साधनो का आश्रय लेना पड़ता है। प्रभु स्तुति के स्तोत्र और स्तवनो को मानव भूल गया तो इसी फोनोग्राफ के रेकर्डों का स्तोत्र और धार्मिक ज्ञान के लिए उपयोग होगा और धर्म स्थानों में पाट और सिंहासनों पर धर्म गुरुओ के स्थान पर फोनोग्राफ बैठेंगे और उपदेश सुनायेंगे तथा प्रतिक्रमणादि आवश्यक क्रियाऐं भी करायेंगे। यदि मानव समाज जल्दी न चेतेगा तो उसकी पराधीनता की सीमा भी न रहेगी। और खान

पान आदि के लिये जिस प्रकार जड़ पदार्थों की शरण लेनी पड़ती है। उसी प्रकार धार्मिक क्रियाओं के लिये फोनोग्राफ आदि जड़ विज्ञान की शरण लेनी होगी।

२१००० वर्षों तक शासन—ढाई हजार वर्ष में भारत में अनेक राजा होगये। राजपूत, मुगल, और मराठे भी हो गये। लेकिन आज भारत को संभालने के लिये भारतवासियों में से किसी एक की शक्ति न होने से परदेशी अंग्रेज भारत की रक्षा और शासन कर रहे हैं। तब प्रभुवीर का शासन ढाई हजार वर्षों से अखंडरूप से चला आ रहा है। और अभी साढ़े अठारह हजार वर्ष तक चलता रहेगा। प्रभु महावीर के शासन की नींव इतनी गहरी है। इसका कारण ज्ञान की प्रभावना ही है। महावीर के शासन में राजा सरीखा शस्त्रधारी बलवान सैन्य और सेनाधिपति न होने पर भी केवल अपने अनुयायियों के लिये ज्ञान का अमोघ साधन प्रभुवीर ने छोड़ा है। जिसके प्रताप से उनका शासन निराबाध रूप से चल रहा है और भविष्य मे भी चलता रहेगा।

शान्ति का उपाय—सिर बिना का शरीर जितना भयंकर, घृणापात्र और दुर्गन्धमय प्रतीत होता है। उससे विशेष सामाजिक जीवन की व्यवस्था ज्ञान के अभाव से प्रतीत होती है। देश, समाज, ज्ञानी और कौटुम्बिक क्लेशो का मूल कारण केवल सम्यग्ज्ञान का अभाव ही है। मानव समाज जाति और देश के प्रति अपना कर्त्तव्य समझे तो विश्व में इस समय जिस अशान्ति का अनुभव होता है उतनी ही शान्ति का अनुभव हो।

विष भी अमृत—वैद्य, सोमल, पारा आदि विषमय पदार्थों का मिश्रण कर उन तत्त्वों का बाधक के बजाय मानव जीवन के लिये साधक बनाता है। उसी प्रकार यदि जन समाज में सम्यग्ज्ञान उत्पन्न हो तो अशान्ति और विषम प्रसंगो को मानव शान्ति और सुख रूप मे परिवर्तन कर सकता है।

महाश्वान की लूट—अज्ञानता के वश होकर मनुष्य महापाप करता है। अपने तुच्छ स्वार्थों के कारण समाज को शोषक यंत्रवाद का शरण लेकर हजारों अनाथ और विधवाओं के मुँह से रोटी का टुकड़ा महाश्वान की तरह छीनकर सिरा पूरी से अपना पापी पेट भरते हैं।

स्वपरबाधक और घातक—प्रकाश के बिना तो जंगली पौधे भी मुरझा जाते हैं। वे अपनी प्रगति नहीं कर सकते और न विश्व के लिए साधकभूत बन सकते हैं। साथ ही वे अपने आसपास की जमीन का सत्व चूस कर अन्य पौधों को भी बढ़ने नहीं देते। इसी प्रकार ज्ञान रूप प्रकाशहीन मनुष्य स्वार्थमय भावना से अपनी प्रगति नहीं कर सकता। लेकिन समाज के भारभूत जीवन को व्यतीत करता है।

ज्ञानाग्नि का प्रकाश—ज्ञान अग्नि के समान है। वह अपथ्य को पथ्य बनाती है और साथ ही अंधकार का नाश कर प्रकाश देती है। इसी प्रकार ज्ञान भी सब प्रकार के प्रतिकूल संयोगों को सहन कराना सिखाता है। विश्व को विशेष नाम किस

प्रकार हो वही उसका ध्येय रहता है और अनेक अज्ञानियों का ज्ञान के सुपथ पर प्रयाण कराता है।

मानव भूमि ही देवभूमि—एक पांच वर्ष का छोटा बालक हजारों अंध मनुष्यों को खड्डे या कुएँ में गिरते हुए कुपथ पर जाते हुए बचा सकता है तो जब सारी ही प्रजा में ज्ञान, प्रेम, सहानुभूति, परमार्थ और सेवामय वातावरण फैल जाय तब वह भूमि मानव भूमि मिटकर स्वर्गीय भूमि बन जाय और इस भूमि के मानव देव-दानवों के पूजनीय और प्रावप्रिय हो जायें।

महान् क्रूर कौन?—बाघ, रींछ, सिंह, सर्प, आदि क्रूर प्राणी भी बिना किसी के सताये जिस प्रकार हमला कर देते हैं और मार खाते हैं। इसी प्रकार ज्ञानहीन मानव में क्रूरता का जन्म होता है जिससे क्रूरता में मान बुद्धि की वृद्धि हो जाने से सिंह, सर्प, रींछ, बाघ आदि क्रूर प्राणी भी लज्जित हो ऐसी क्रूरता का मनुष्य में भी अनुभव किया जाता है। सिंह वन का राजा है और चाहे तो अपनी गुफा रूपी तिजोरी में हजारों हिरण और खरगोश जैसे पशुओं को एकत्रित कर सकता है। लेकिन उसमे क्रूरता होने पर भी संतोषवृत्ति है। एक दिन की खुराक मिलने के बाद वह दूसरे दिन की चिन्ता नहीं करता। और जंगल के प्राणियों को नहीं सताता। गतवर्ष चतुर्मास के लिए उदयपुर की ओर विहार करते हुए मुनि श्री विद्या विजयजी को रास्ते में शेर मिला। वह चार ही हाथ दूर बैठा हुआ था। मुनिराज भयभीत हुए। मगर उस शेर ने अपनी शान्ति भंग नहीं की तब मुनिराज

ने विचारा कि "शेर पेट भरकर बैठा हुआ है नहीं तो मेरा आहार कर लेता" भोजन के बाद शरीर शास्त्र के ज्ञाता डाक्टर को रस वाले पदार्थ खाने के लिए आमंत्रण दिया जावे तो वह अपने स्वास्थ्य का भान भूलकर भी रसास्वादन के लिए वशीभूत हो, उस वस्तु का उपयोग करेगा। जब कि शेर जैसे क्रूर प्राणी भी हाथ मे आये हुए मानव भक्ष को छोड़कर अपनी उदारता बतलाता है और मानव समाज को भी उदाहरण का पाठ पढ़ाता है। उपरोक्त प्राणियों में एक दिन की भूख जितनी ही लालसा है तब यदि मानव समाज के लिए विचारेंगे तो जान पड़ेगा कि मनुष्य के पास इतना धन है कि उसकी पीढ़ी दर पीढ़ी भी बैठी २ खाती रहे फिर भी खतम न हो। ऐसा होते हुए भी वह प्रतिदिन पाप प्रपंच करता हुआ नवीन धन का उपार्जन करता है। यदि मनुष्य के सिह या बाघ जितनी शक्ति और साधन हो तो आज विश्व में थोड़े ही मनुष्य जीवित होते और समस्त विश्व का नाश होगया होता। मानव यंत्रवाद की शरण लेकर क्रूरता का प्रदर्शन करने में लेशमात्र भी संकोच नहीं करता। लेकिन दयावान प्रकृति करोड़ों मनुष्यो की संरक्षा के लिये क्रूर प्राणियों को आकाश जितना ऊंचा उठाकर फिर नीचे गिरा उन्हे मार डालती है जिससे क्रूरता का अन्त हो जाता है और गरीब सुख पूर्वक रोटी खा सकते हैं। आज यन्त्रवाद का पूर्ण साम्राज्य छाया हुआ है। पाँच या दस हजार रुपया हो तो व्याज पच्चीस या पचास तक आ सकता है। और इस व्याज से उस व्यक्ति की सात पीढ़ियाँ सुख पूर्वक जीवन निर्वाह कर सकती हैं। वह रकम तो स्थायी रहती है। लेकिन मनुष्य को सन्तोष न होने

से लाखों और करोड़ों एकत्र करने के लिए क्रूरता पूर्ण रोजगार करते हैं। और इतने से भी सन्तुष्ट न हो कर हजारों गुणी शीघ्रता वाले यन्त्रों को चला कर अपने स्वभाव और शक्ति से हजारों गुणों से भी अधिक क्रूरता का प्रचार करते हैं।

प्रो० मेक्स मूलर और अन्य जर्मन प्रोफेसर— भारत की अज्ञानता और स्वार्थांधता को दूर करने के लिये पूर्वज ज्ञान की सम्पत्ति छोड़ गये हैं। लेकिन स्वार्थान्धता के कारण मानव समाज में विशेष अन्धकार छाया हुआ होने से वे अपनी सम्पत्ति को संभालने के लिए भी भाग्यशाली न हुए। लेकिन सद्-भाग्य से प्रो० मेक्स मूलर ने चार वेदों का, पच्चीस वर्षों के महा परिश्रम से सशोधन किया। बीस वर्ष उसे छपाने मे लग गये और उसके पीछे नौ लाख रुपया खर्च हुआ। तदुपरान्त जैन शास्त्र भी जर्मन प्रोफेसर ने सुधारे हैं। भारतीय साहित्य भारत के सन्तानों के लिए न होने के समान ही है। पश्चिम के विद्वान ही उसका उद्धार करते है। यदि पाश्चिमात्य विद्वानो ने भारत के समक्ष उनका तत्त्वज्ञान न रक्खा होता तो आज भारत किस स्थिति मे होता इस बात का विचार करने पर सहज ही समझा जा सकता है। अपनी क्रूरता और अज्ञानता के विनाश के लिए मनुष्यों के पास महान् साहित्य है, धर्मोपदेशक हैं फिर भी उनकी क्रूरता की कमी दृष्टिगोचर नहीं होती। यदि उनका जीवन पशु-वत् विवेक शून्य होता तो आज मानवी, दानव और राक्षस समझा जाता। मानव संसार में से बाह्याडम्बरमय सभ्यता दूर कर दी जावे तो मानव को मानव रूप मे शायद ही पहचाना जा सके।

आकाश में उड़ने वाला गीध पक्षी—गीध पक्षी चाहे जितना आकाश में ऊँचा उड़े फिर भी उसकी दृष्टि तो जमीन पर पड़े हुए सड़े मांस के टुकड़े पर ही होती है। उसी प्रकार ज्ञान विहीन मनुष्य को चाहे जैसे शुभ संयोगों मे रखा जाये फिर भी उसकी दृष्टि तो अज्ञानजन्य विषयवर्धक विलास भावनाओं में ही रहती है।

आत्म-रक्षक सरल समझ—जिसके पैर में बूट हो उसे मार्ग में कोई नहीं सता सकते इसी प्रकार जिसमें सीधीसादी समझ शक्ति है वह कैसे प्रलोभनो में फंसता नहीं और अपना पतन नहो कर सकता।

दीपक और पतंगियों का प्रेम—दीपक को देखने के बाद पतंगिया कभी भी अन्धकार में नहीं जायगा। उसे प्राणान्त कष्टो को सहन करना मंजूर होगा परन्तु अन्धकार को पसंद न करेगा। यदि मानव समाज को ऐसी लगन ऐसा प्रेम ज्ञान के लिए होता तो वह प्राण जाने पर भी अज्ञान के अन्धकार मय पथ पर पैर नही रख सकता।

ज्ञानी आकाश द्वीप के समान है—अज्ञानान्धकार मे भटकते हुए जीवो के लिये ज्ञानी का जीवन आकाश द्वीप समान है। जिस प्रकार आकाशदीप समुद्र मे भटकते और डूबते हुये जहाजो को और मुसाफिरों को बचा लेता है इसी प्रकार ज्ञानी भी अनेक कुपंथगामी मनुष्यो को पथप्रदर्शक बन कर उन्हे सत्पथ पर प्रयाण कराते हैं। जिससे ज्ञान के प्रताप से मानव प्राणी भी, देव समान अपना जीवन विश्वोपकारक व्यतीत कर

सकता है और उसके अभाव मे पशुवत स्वार्थी पेटू श्वान की तरह, व्यतीत करता है ।

भाग्यशाली कौन ?—प्राचीन माहपुरुषों ने वनो में, जङ्गलों में और पर्वतो की गुफाओं में और शिखरों पर ध्यानस्थ होकर ज्ञान रूपी खजाना प्राप्त किया। उस अगम्य ज्ञान को हम समझ सकें वैसा सरल बना दिया। यदि उन महा पुरुषों की यह सम्पत्ति हमें प्राप्त न हुई होती तो सचमुच ही पशु संसार से भी मानव संसार अधिक क्रूर, घातक, जङ्गली और हिंसक होता। मानव संसार में यदि कुछ सुन्दरता अच्छापन है तो वह प्राचीन पुरुषों के ज्ञानरूप सम्पत्ति की बदौलत ही। उसी का यह प्रताप है और उसी को ही इसका श्रेय है। आज पैदा हुआ बालक ऐडीसन जैसे वैज्ञानिकों से भी विशेष भाग्यशाली है। विज्ञान का लाभ सैकड़ों वैज्ञानिकों से भी आज के बालक को विशेष मिल सकता है। इसी प्रकार हम भी विशेष भाग्यशाली हैं कि प्राचीन ऋषि मुनियो को जो तत्व जङ्गलो मे, वनों में और पर्वत कन्दराओं में घोर तपस्या करने पर भी न प्राप्त हुआ वह अपूर्व तत्वज्ञान आज हमें दो आने की छोटी सी पुस्तिका में ही मिल रहा है। और उस पुस्तक को मनुष्य लाखों बार पढ़ सकता है और जीवन में भी उतार सकता है। इससे विशेष भाग्यशाली भी अन्य कोई हो सकता है ? ज्ञानी की सहायता हमें न मिली होती तो करोड़ों बार मानव-अवतार धारण करने पर भी हम नौ वर्ष के बालक जितनी भी प्रगति न कर पाये होते। अपने आपको भाग्यशाली समझ कर जीवन की सार्थकता के लिये घर-घर ज्ञान की प्याऊ

खोल दीजिये और ज्ञान ज्योति जला कर अपने आपको और अपने आंगन को शोभित कीजिये।

करोड़ों वर्षों की अन्धकार मय गुफा या कुटिया का अन्धकार एक ही छोटा सा दीपक दूर कर सकता है। इसी प्रकार थोड़ासा सच्चा ज्ञान भी अज्ञान रूपी द्वेष कलह, निन्दा, ईर्षा, लोभ, असन्तोष आदि शोषण वृत्तिका नाश कर सर्वत्र शान्ति का साम्राज्य स्थापित करता है।

१४—पर्युषण पर्व और अहिंसा

दिवाली में धन की पूजा होती है और धन का धुंआ फूँका जाता है, क्या यही स्थिति धार्मिक पर्वों की नही ? धार्मिक पर्वों में पापमय विलासी वस्त्र और हिंसक दूध शोभा दे सकता है ?

पर्यूषण पर्व में महात्माजी पधारें तो ? दो आंसू गिरावे ।

दस जैन मिल करके भी यदि एक पशु का पालन करें तो भी दस हजार को अभयदान ।

धार्मिक पर्व तो कसाई और शिकारियों के लिए कमाई की सीझन (मौसिम) होता है ।

आणंदजी कल्याणजी की पेढी को भावनगर का आदर्श ।

परीक्षा और पर्युषण—विद्यार्थी के लिए १२ मास के अभ्यास का विशेष रूप से निरीक्षण उसका नाम परीक्षा । परीक्षक चाहे जैसे कठिन प्रश्न पूछे फिर भी उनका उत्तर शांत और प्रसन्न चित्त से देने के लिए विद्यार्थी तैयार रहता है और शत प्रति शत नम्बर प्राप्त करना ही उनका ध्येय होता है । उसी प्रकार विशेष प्रकार की आत्मिक उपासना करने का नाम पर्युषण । इन दिनो में हमें हमारा आंतरिक निरीक्षण और परीक्षण विशेष रूप से करने का होता है । जिस प्रकार दिवाली के दिन में धन के लाभ हानि का हिसाब मिलाते है उसी प्रकार पर्यूषण अर्थात् भाव दिवाली मे भी आत्मिक धन की लाभ हानि के हिसाब का मिलान करना चाहिए ।

धन की पूजा और धन का धुँआ फूंकना— दिवाली का पर्व लौकिक है जब कि पर्युषण पर्व अलौकिक। दिवाली में एक ओर तो पूजा होती है दूसरी ओर बारूदखाना छोड़कर धन का धुँआ फूँका जाता है। क्या इसी प्रकार का पागलपन इन धार्मिक पर्वों में दृष्टिगोचर नहीं होता ?

धार्मिक पर्व या विलास पर्व—दिवाली के दिनों में लौकिक पर्वोचित विलासी वस्त्राभूषण पहिने जाते हैं वैसे ही या उससे भी अधिक विलासमय वस्त्र इन अलौकिक पर्व में भी मानव समुदाय के शरीर पर धारण किये हुये दिखाई पड़ते हैं जिससे ये अलौकिक वैराग्य वर्धक पर्व भी विलास वर्धक और विकारी बनने लगा है।

पर्व में कैसे वस्त्र शोभा दे सकते हैं ?—इन धार्मिक पर्व के दिनों में पर्व में शोभित हो वैसे सादे और शुद्ध अहिंसक वस्त्र मनुष्यों को धारण करना चाहिये उसके बदले में चरबी वाले और चटकीले वस्त्र स्त्री पुरुष समाज के शरीर पर दिख पड़ते हैं इससे विशेष आश्चर्य और क्या होगा ?

पर्व के दिन पापी वस्त्र धारण किये जा सकते हैं ?—इन पर्व के दिनों मे छोटे-छोटे बच्चे भी उपवास और एकासन आदि तपश्चर्या करते है, रात्रिभोजन और हरियाली का त्याग करते हैं। धर्म के दिनों मे उपवास और लीलोती न खाने का स्मरण रहता है परन्तु आज पर्व के दिन चरबी वाले तथा रेशम के पापमय वस्त्रो का स्पर्श भी नहीं हो सकता तो पहिने तो जाही कैसे सकते हैं ? ऐसा ख्याल तो शायद ही

किसी को रहता हो। चरबीवाले वस्त्रों के लिए भारत में प्रति
दिन हजारों दूध देने वाले पशुओं का बलिदान होता है। ये
बातें तो विश्व विख्यात हैं अतः विशेष स्पष्ट समझाने की
आवश्यकता ही नहीं।

पर्व की मर्यादा बनाए रक्खो—ऐसे चरबी तथा
रेशमी वस्त्र पहन कर पर्व के दिनो मे सूक्ष्म जीवो की दया
पालने वाले जैन धर्मस्थान मे सहर्ष प्रवेश करते है, उस सभा में
अचानक ही म० गांधीजी या जवाहिरलाल जैसे देश नेता
आ पहुचें तो उनके आश्चार्य का ठिकाना न रहे। वे पूछे कि इतनी
बड़ी मानवमेदना यहाँ क्यो एकत्रित हुई है? उनके उत्तर में
धर्माराधन का ही कारण बताया जाय तब उनकी दृष्टि धर्म के
मूलतत्व अहिसा और इन पापमय वस्त्रों पर पड़े तो उनको
कितना दुख हो? जैन धर्म कि जो विश्वधर्म बनने के लिए
साधन संपन्न है, उसके अनुयायी पर्व के दिनो मे ऐसे पापमय
वस्त्र धारण करते है, यह देख कर ऐसी सभा मे जैन समाज
की अज्ञानता पर दो आँसू गिरा कर वे भग्न हृदय के साथ वापस
लौट जांय।

लग्न जैसे शुभ कार्य मे काले वस्त्र पहिन कर नही जा
सकते, जब इन स्थानों की मर्यादा का भी उल्लंघन नही हो सकता
तो फिर धार्मिक पर्वों की पवित्रता रूप अहिंसक भावना की भी
मर्यादा निभाये रहना चाहिए।

कुमारपाल राजा और उसके वर्तमान अनुयायी—
कुमारपाल के राज्य में गुप्तचर गश्त लगाते रहते थे कि कोई जूॅ

खटमल को मारने न पावे। उनको मारने वाले कुमारपाल के राज्य में दोषी समझे जाते थे। दंड देने के आदर्श रूप मे जूँ मारने वाले दोषी से कुमारपाल ने महल बनवाया था और वह पाटण में युकालिका महल के नाम से सुप्रसिद्ध है। उनके राज्य में चौपड़ खेली जाती थी परन्तु "मार, मार" शब्द का प्रयोग नहीं किया जाता था। सब हाथी घोड़ों को पानी छान कर पिलाया जाता था! वर्तमान समाज को कुमारपाल की अहिंसा अति सूक्ष्म प्रतीत होगी। परन्तु विचारक सरलता से समझ सकते हैं कि कुमारपाल जैसे राजा अपने विस्तृत राज्य के व्यवहार में भी इतनी सूक्ष्म अहिसा का पालन करा सकता था, तो उसी के अनुयायी विलासी वस्त्र के खातिर ही गाय भैंसे जैसे बड़े अगणित प्राणियो की होने वाली हिंसा को रोकने का या वैसे पापी वस्त्र न पहिनने का साधारण विवेक भी नहीं चता सकते, तो वे कैसे गिने जांय ?

पर्व में भी हिंसक दूध—पर्यूषण पर्व के दिनो मे उपवास के पहिले खीर, श्रीखंड, बासुंदी की 'धारणा' होती है हजारों मनुष्यो के समुदाय रूप गच्छ जिमाये जाते है उनमें भी उपरोक्त भोजन होता है और इन दिनों में बाजारू घी दूध और दही काम में लाया जाता है। धर्म भावना के प्रति इससे विशेष उपेक्षा और क्या हो सकती है ? बम्बई मे दूध नहो देने वाले प्राणी सीधे कसाईखाने में ही जाते हैं, यह बात बम्बई निवासियों से छिपी नही है।

पूर्व कालीन श्रावक—पूर्व कालीन आणन्दजी आदि

श्रावक अपने यहां ४०-६० और ८० हजार तक गौएं रक्खा
करते थे, परन्तु वर्तमान कालीन श्रावक अपने वहां यदि एक-एक
दूध देने वाला पशु रक्खें तो भी हजारों जीवों की रक्षा सरलता
से की जा सकती है।

अहिंसक दूध और हजारों पशुओं को अभय-दान—बम्बई में सम्भवतः एक लाख जैनियों की वस्ती है। वे सब
मिलकर यदि अहिंसक दूध की व्यवस्था करें तो भी जैन समाज
के आंगण में दस बीस हजार पशुओ का पालन हो सकता है
और उतने पशुओ को अभयदान मिल सकता है।

यह भी क्या जीवदया है ?—पर्यूषण पर्वों के दिनो
में जीवदया के लिये फण्ड होगे। कसाई के वहाँ से बकरे, गाय,
भेड़, भैंसे, मुँह मांगा दाम देकर छुड़ाई जायेंगी। इन दिनों में
श्रावकों की जीवदया चींटी के बीलों की तरह उमड़ पड़ती है।
परन्तु वे ही जैन चर्बी वाले वस्त्र को धारण करें, अपने मिलो मे
चर्बी का उपयोग करे और हिंसक दूध का सेवन करें, ऐसी
मनोवृत्ति वालों को शुद्ध अहिंसक कैसे कहा जा सकता है ? यह
उनकी वास्तविक अहिसा है या केवल उसका ढोंग है ?

प्रतिवर्ष जीवो को छुड़ाने के खर्च की रकम में से व्यवस्थित
एक गौशाला खोली जा सकती है। जिससे सभी को अहिसक
दूध प्राप्त हो सकता है। अथवा कसाइयों के बच्चो की सुशिक्षा
के लिये भी इस धन का व्यय किया जा सकता है। इससे भी
भविष्य में हिंसा रुक सकती है। वर्तमान परिस्थिति तो जीवदया
के नाम पर कसाइयों के हाथ गरम करने के समान है।

धार्मिक दिन और हिंसकों की मौसिम—देहली और आगरा में कसाई लोग पर्यूषण पर्व के पहिले कुएँ खोद कर कबूतर चिड़ियां और मोर जैसे पक्षियो को जाल में पकड़ कर पंख काट कर, उनमें डाल देते हैं। और इन दिनो हजारों पक्षियों को बाजार में बेचने लाते हैं। दयावान पुरुष उन्हे छुडाते हैं, जिससे पर्यूषण पर्व कसाइयों के लिये कमाने की मौसिम बन गये हैं। उनकी ओर अपेक्षा रखने से वे उन्हे बुरी तरह से मार डालते हैं। यही स्थिति इन दिनों मे पशुओ की भी होती है। अतः जीवदया के कार्य मे भी पूर्ण विवेक और बुद्धि की आवश्यकता है।

अनिच्छा से भी पाप के भागी—घर पर एक गाय रख कर उसकी व्यवस्था हरा घास पाणी स्नान आदि क्रिया मे पाप मानने वाले लोग विलास के खातिर तथा दूधादि पदार्थ का उपयोग करके हजारों जीवों को अकाल ही मे मरण शरण करने के लिये कसाई के वहां भेजकर अनिच्छा होने पर भी पाप के भागीदार बनते हैं।

प्रभु को मोती का हार—जो हमें प्रिय लगता है वही हमारे देव को भी प्रिय होता है। ऐसा समझ कर पर्यूषण के दिनों में आंगी की रचना होती है और प्रभु को मोती का हार पहनाया जाता है। मोतियों के लिए लाखों मच्छीयों का इमली की तरह छेदन किया जाता है और सैंकड़ो मच्छियों को मारने पर भी किसी में से कहीं एक मोती मिलता है। यही कारण है कि मोती इतने मँहगे हैं। वाह ! कैसी बुद्धि !

अहिंसक देवों के मन्दिर में भी चँवर—मन्दिरों में चँवर भी काम में लाया जाता है। जिसके लिए चँवरी गायों का खून किया जाता है अथवा उनके अँगों को भयङ्कर नुकसान पहुँचाया जाता है। ऐसे पाप मय अपवित्र चँवर अहिंसक देवों के मन्दिर में कैसे शोभित हो सकते हैं ? इसे सहृदय एवं विचार शील पाठक स्वयं सोच सकते हैं।

श्री आणंदजी कल्याणजी की पेढी का स्तुत्य प्रयास—ये पर्व वर्षा काल में आते हैं, जिसमें पतंगिये आदि जीवों की विशेष उत्पति होती है। धर्म मंदिर में आंगी की शोभा के लिये सैंकड़ों दीपक जलाये जाते हैं। इनमें अगणित जीवों का संहार होता है। परन्तु इस समय सद्भाग्य से आणन्दजी कल्याणजी की पेढी ने अपनी व्यवस्था और निरीक्षण वाले मन्दिर में से बिजली कृत दीपक हटा देने का जो स्तुत्य प्रयास किया है, उसके लिए वे कार्यकर्त्तागण धन्यवाद के पात्र हैं। आशा की जाती है कि, अन्य मन्दिरों के ट्रस्टी भी इस पवित्र कार्य का अनुकरण करने का सक्रिय प्रयास करेंगे।

भावनगर का आदर्श और पर्व की सफलता—भारत में केसर की पैदाइश बहुत ही थोड़ी है। नकली केसर विदेश से आती है। वह पवित्र नहीं होती, इसलिये भावनगर के मन्दिरों में केसर के स्थान पर पवित्र चन्दन काम में लाया जाता है। आशा है कि अन्य मन्दिरों में भी ऐसे सुधार कार्य रूप में रक्खे जायेंगे तो अहिंसा की दृष्टि से पर्यूषण पर्व को सफल कर सकेंगे।

१५—यह दिवाली या होली?

प्रत्येक देश में दिवाली का त्यौहार बहुत धूमधाम से मनाया जाता है। हम तो आज केवल अपने धर्म प्रधान भारत देश के लिए ही विचार करेंगे।

लक्ष्मी पूजन—दिवाली के दिन लोग लक्ष्मी की पूजा करते हैं। लक्ष्मी को अपने यहां आमन्त्रण करने के लिये अनेक दीपक जला कर अपने आंगन को रमणीय और सुशोभित करते हैं। लक्ष्मी की कुंकुं, केसर, दूध और घी के दीपक से पूजा करते हैं और उस पूजा के लायक सुन्दर वस्त्र-भूषणों से मानव सुसज्जित होते है।

लक्ष्मी को पानी की तरह बहाना, धन का धूंआ फूंकना—एक ओर लक्ष्मी की उपासना की जाती है, जब कि दूसरी ओर भारत जैसे धर्म प्रधान देश मे जो रूढ़ि अनार्य और नास्तिक प्रदेशो मे भी नहीं हो ऐसी रूढियां पाई जाती है। बारूदखाना छोड़ कर, जला करके करोड़ो रुपयों का धुंआ फूंक कर, लक्ष्मी का नाश किया जाता है। विचार कीजिये कि, ऐसा अनादर वह (लक्ष्मी) कैसे सहन कर लेगी।

भाई और बहिन—कोई अपनी बहिन, पुत्री या स्त्री को हजार रुपये की साड़ी दे और लाख रुपये का मोतीहार दे। लेकिन कुंकु के बदले में काजल का ललाट पर तिलक करे या करावे तो क्या यह उसे शोभा देगा? और ऐसा करने ने के बाद वह

वह बहिन उसकी उस भेंट को स्वीकार कर लेगी क्या ? वह बहिन भाई को कैसा समझेगी ? और सुनने वाले लोग भी उसे कैसा समझेंगे ? उसकी ऐसी मूर्खता पर किसे हँसी न आयगी ? लाखों की भेंट देने पर भी थोड़े से विवेक के अभाव से उसकी कार्यकीर्ति काजल की तरह काली हो जाती है। यही स्थिति लक्ष्मी पूजन और मानव समाज की है।

लक्ष्मी का अपमान—लक्ष्मी की कुंकुं, केसर, कस्तूरी, चन्दन, धूप, दूध आदि से पूजा करने वाला ही यदि बारूदखाने के लिए, होली के धूंए को भी लज्जित कर दे उतना धन का धुंआ करता है तो वह लक्ष्मी का सरासर अनादर और अपमान करता है।

फांसी वाले का सन्मान—यह लक्ष्मी की पूजा नहीं, लेकिन उसका सत्यानाश है। पूर्वकाल में फासी की सजा प्राप्त व्यक्ति की सवारी-जुलूस-निकाली जाती थी। और सवारी में घोड़े के बदले गधा, आभूषणों की जगह फटे जूतों का हार और फूटी हंडियों के नगारे और ढोल बजाये जाते थे। ठीक यही स्थिति आज भारत वर्ष में लक्ष्मी देवी की है। लक्ष्मी देवी को उसके सपूत फांसी के मंच पर चढ़ा कर हर्ष-उन्मत्त होकर आनंद मना रहे हैं।

पागल खाना—आगरा के पागलखाने (Mad Hospital) में आग लगी, तब पागल दिवाली समझ कर नाचने लगे। सिपाहियो ने उन्हे उस मकान में से निकालने का प्रयत्न किया, परन्तु उन्हे पूर्ण सफलता न मिली। उसी प्रकार भारत के

अज्ञान श्रीमन्तवर्ग में भी पागलपन का अनुभव होता है। दिवाली के निमित्त करोड़ों रुपये बारूदखाना नाटक, सिनेमा और भोग-विलास में पानी की तरह बहा कर प्रसन्न होते हैं। इससे अधिक दुखद प्रसंग और क्या हो सकता है ?

बारूदखाना और दिवाली—लाखों रुपयोंके फटाके फोड़े जाते हैं। वे फूटते हुए आवाज करते है कि 'भारत वासी! तुम्हे फट फट—धिक्कार है। प्रति वर्ष फटाकों की यह 'फट,फट' ध्वनि सुनते हुए भी लज्जित होने के बदले प्रसन्न होते हैं। फटाके अन्तरध्वनि करते हैं, कि इन पवित्र और धार्मिक दिनों में भी नित्य करोडों मनुष्य अन्न बिना फटाफट फूट रहे हैं। ऐसे प्रसंग पर इस प्रकार धन के दुरुपयोग करने वालों को फटकार के अलावा और क्या कहा जा सकता है ? इतना द्रव्य शिक्षा प्रचार हरिजन या दीन बन्धुओं के उद्धार में व्यय किया जाय तब ही भारत धर्म प्रधान देश कहा जा सकता है। अन्यथा फटकार के योग्य जंगली-प्रदेश क्यों न माना जाय ?

तारा मंडल—बारूदखाने की कोठी के छोड़ने पर उसमे से तारे टूट टूट कर गिरते हैं। वे सूचित करते हैं कि, "भारतवासियों ! सादगी, संयम और स्वदेश-प्रेम का पाठ पढ़ाकर भारत के अनेक सितारे अपना बलिदान देकर टूट गए चल बसे। लेकिन आपकी विलास, मौजशौक और श्रृंगार की भावनाओं का अन्त न आया। उन महापुरुषों ने अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया, लेकिन आप साधारण स्वार्थ और ऐश आराम का त्याग नहीं कर सकते।"

कोठी—कोठी के फोड़ने वाले अज्ञजनों को वह उपदेश करती है कि "अरे! भारत के आर्यपुत्र! तू यह क्या कर रहा है? करोड़ों क्षुधापीड़ित लोगो के पेट में अन्न भरने के वजाय इस मिट्टी में बारूद भर कर तू क्यो धन का दुरुपयोग करता है? मेरे पेटमें बारूद भरने से मेरा तो नाश होता ही है, परन्तु साथ ही अन्न के अभाव से गरीब बन्धुओं का भी विनाश होता है। मेरे पेट में बारूद भरने के बजाय देश बन्धुओं के पेट में अन्न भर। जिससे मेरा भी नाश न होगा और देश बन्धुओं की रक्षा होगी। कोठी फोड़ने वाले! तू मुझे नहीं फोड़ता लेकिन स्वदेश बन्धुओ के पेट को फोड़ता है। इसमें से निकलने वाली चिनगारियां क्षुधा पीड़ित बन्धुओं के हाय त्रारा की ज्वलन्त वेदना है। इन चिनगारियों को देख कर जरा लज्जित हो! और धन का यथा शक्ति सदुपयोग कर।"

बारूदखाने से हानि—दिवाली के दिनों में बारूदखाने के लिए करोड़ों का खर्च किया जाता है, परन्तु उसके अलावा अनेक बालक बारूद छोड़ते हुए मृत्यु के भोग बन जाते हैं। और कभी कभी उसको बनाने वाले मजूर और मालिक भी मर जाते हैं। इस प्रकार प्रतिवर्ष दिवाली के दिन संख्या बन्ध मनुष्य और बालको की मृत्यु होती है। इसमें धन की और साथ ही जीवन की भी बरबादी होती है। और साथ ही कभी कभी आग लगने पर करोड़ों रुपयों का कपड़ा, रुई और विशाल इमारतें भी जल कर खाक हो जाती हैं।

बारूदखाने पर प्रतिबन्ध—ऐसी कुप्रथा भारत जैसे

आर्य देश के लिए शोभा नहीं देती इस लिए म्युनिसिपेलिटियों और जीवदयामंडलों को प्रजा की शान्ति के लिए, धन और जन की रक्षा के लिए, आन्दोलन कर इस कुप्रथा को भारत से शीघ्र ही दूर करना चाहिये। सिंह सर्प जैसे सरकस के शिक्षित प्राणिये. को भी बाजार और गांव मे नही आने दिया जाता। तो फिर इस बारूदखाने पर कि जिसके कहों पर पड़ते होली जैसी अग्नि-ज्वाला निकलती हैं तो उस पर प्रतिबन्ध क्यों नहीं रखना चाहिये ?

पाप का भागी कौन ?—जल्दी से जलने वाली लकड़ी के मकान बॉधने की आज्ञा नहीं दी जाती तो जो बारूद-खाना अग्नि के पुंजरूप है। उसे घर में रखने के लिए, बेचने के लिए, और फोड़ने के लिए, कैसे आज्ञा दी जा सकती है ? भारत वर्ष मे वर्ष भर मे जितनी आग सम्बन्धी घटनाएँ घटती हैं उतनी घटनाएँ इसी एक ही दिन मे होती है। बारूदखाना रात्रि में छोड़ा जाता है। जिससे पक्षी भी अचानक रात्रि में चमकते हैं। वे भयभीत होते है। और वे निर्दोष प्राणी अपनी सुख निद्रा और प्रिय बच्चों को छोड़ कर निर्भय स्थान की शोध में उड़ जाते हैं। कीड़ी और मकोड़ों की दया पालने वाले जैन और वैष्णव, श्रीमंत होने से विशेष बारूदखाना छोड़ते हैं और उपरोक्त महा पाप के भागी बनते हैं।

बारूदखाना भी अपराध—भारत जैसे निर्धन देश के लिये तो ऐसे बारूद खाने शृंगार और भोग विलास के खर्चे अति भंयकर और अक्षम्य अपराध समझे जाने चाहिए। जिस देश में करोड़ों मनुष्य अन्न बिना भूख से तड़फड़ाते हुए मर

जाते हों उस देश की एक एक पाई का पूर्ण सदुपयोग होना
चाहिये । किसी भी प्रकार का व्यर्थ व्यय भारत के लिये सह्य
नहीं है ।

दिवाली के दिन लक्ष्मी के पुजारी, शरीर पर रेशम और
चरबी के चमकीले वस्त्र धारण कर करोड़ों रुपया निर्धन भारत-
ां से विदा करते हैं और धन का धूँआ फूंकते हैं ।

धनवान निर्धन के लिये भारभूत—इस पवित्र
इन मे नाटक सिनेमा, गान तान, मकान और दुकान की शोभा
के लिये, इलेक्ट्रीक लाइट की सजावट आदि में करोड़ों रुपयों
का खर्च होता है । श्रीमतों के इन सब खर्चों का बोझा मजूर वर्ग
पर ही लादा जाता है और गरीब कौम का भोग देकर के भी
धनवान अपने भोग विलास के साधन एकत्रित करते हैं ।

भारत में तो हमेशा ही होली—एक तांगे वाला
आवक से विशेष खर्च करता है, तो उस खर्च को पहुँचने के लिये
अपने घोड़े को विश्राम न देकर दिन रात उसे चाबुक की मार मार
कर दौड़ाता है और उसे खिलाने के घास चने आदि में भी कर
कसर से काम लेता है । ठीक यही स्थिति धनिक वर्ग की है ।
जिस प्रकार तांगे वाले के विशेष खर्च का बोझ उन मूक प्राणियों
पर पड़ता है और उन्हे कष्ट झेलना पड़ता है। उसी प्रकार धनवानो
के अन्टसन्ट खर्च का बोझा उन निर्धन मजूरो पर पड़ता है ।
फल स्वरूप नौकर और मजूरों के वेतन में कमी की जाती है ।
जिससे कई बार पत्रों में हड़ताल के समाचार पढ़ते और सुनते
हैं । हड़ताल से मजूर भूखे मरते हैं । और अन्त में उन्हे चोरी

और लूट खसोट जैसे पापाचरण करने पड़ते हैं। ऐसा अशान्त वातावरण भारत में तो चौबीसों घन्टे जारी रहता है। इसलिये भारत के लिये तो सदा ही दिवाली के बदले होली ही है। उसमें भी इन प्रसंगों पर तो भारत में महा होली है। क्योकि इन दिनों में अन्य दिनो की अपेक्षा विशेष खर्च होता है। इसलिये गरीबों को विशेष सहन करना पड़ता है।

सच्ची दिवाली कब ?—यदि सच्ची दिवाली ही मनानी है तो बारूद का सर्वथा बहिष्कार कीजिये। नाटक सिनेमा और भोग विलास की खर्च की बचत कर उसे शिक्षा-प्रचार, हरिजन और दीनबन्धु की सेवा में व्यय कीजिये। दिवाली में पहने जाने वाले वस्त्र शत प्रतिशत शुद्ध खादी के ही होने चाहिये। छोटी से छोटी सूई से ले कर बड़ी से बड़ी जीवनोपयोगी वस्तु शुद्ध स्वदेशी गृह-उद्योग ही की काम में लेनी चाहिये। स्वदेशी का ही आग्रह होना चाहिये। तभी सच्ची दिवाली मानी जा सकती है। अन्यथा भारत के लाखों मनुष्यो के लिये तो होली की ज्वाला से भी भयंकर, निर्दयता से मार देने वाली, क्षुधा ज्वाला जल रही है। उसमें करोड़ों मनुष्य होली के होम की तरह होमे जा रहे हैं, जले जा रहे है। इससे विशेष दया पात्र स्थिति देश की और क्या हो सकती है ?

भारत को देदिप्यमान बनाइये ?—मनुष्य का सारा शरीर स्वस्थ हो, लेकिन पैर की एक अन्गुली का नख पक गया हो तो उसे चैन नहीं पड़ती। तो जिस देश में करोड़ों मनुष्य भूख की ज्वाला में होमे जा रहे हों, वह देशवासी मानव

समाज को अपना अङ्ग समझने वाला, निश्चिन्तता पूर्वक कैसे सो सकता है ? या खा पी सकता है ? जिसके सामने ऐसा हाहाकार मचा हुआ हो उस देश के सज्जन को नाटक सिनेमा खानपान, भोगविलास और शृंगार आदि मे एक भी पाई का व्यर्थ खर्च शोभा नहीं देता । उसका तो यही परम कर्त्तव्य है कि वह अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दीन दुखियों की सेवा से सत्य दिवाली मना कर, अपने सिर पर लगे हुए कलङ्क के टीके को मिटा दे । और समस्त देश को दिवाली से भी विशेष देदिप्य-मान बनावे । यही सच्ची दिवाली है ।

१६—आप किसके अनुयायी हैं? कृष्ण के या कंस के?

शराब, मांस और चरबी का उपयोग हिन्दू नहीं कर सकते। और न किसी जीव का वध ही कर सकते है। इतना ही नहीं, वे वध करने वाले को प्रोत्साहन भी नहीं दे सकते। क्योंकि पाप की दृष्टि से करने वाला कराने वाला और उत्तेजना देने वाला, सभी पाप के भागी हैं।

अठारह प्रकार के चोर—प्रश्न व्याकरण सूत्र में चोर के अठारह भेद प्रभु ने फरमाये है। चोरी करने वाला चोर, उसकी वस्तु लेने वाला, संभाल कर रखने वाला, सहायता करने वाला, मार्ग बताने वाला, स्थान देने वाला, उसे छिपाने वाला; इस प्रकार चोर के अठारह भेद हैं। इसी प्रकार पापों के लिए भी समझना चाहिये।

पाप एक, पापी अनेक—जैन शास्त्रों ने अहिंसा के विषय में बहुत ही सूक्ष्मता से विचार किया है। कोई शिकारी कबूतर को मार डाले तो उसको मारने वाले की तौर पर अकेला शिकारी ही पाप का भागी नही लेकिन शिकारी ने जिस साधन से उसे मारा, उन साधनों को तैयार करने वाले भी पाप के भागी हैं। जैसे—यदि उसने तीर से उसका वध किया तो तीर बनाने वाला लुहार, तीर की दोरी बनाने वाला चमार और बांस का तीर बनाने वाला खाती भी कबूतर की हिंसा में पाप के

भागी हैं। क्योंकि तीर बनाते समय उनकी यही भावना थी कि तीर तीक्ष्ण बने, दोरी और धनुष मजबूत बने, जिससे बहुत दिनों तक तीर काम में आवे और ग्राहक खुश हो। और मेरा कार्य अच्छा चल सके।

छुरी कहाँ फिरती है?—कसाई पत्थर पर अपनी छुरी घिस कर तीक्ष्ण करता है। छुरी दिखने में तो पत्थर पर चलती है परन्तु उसके मन की छुरी तो पशुओं के गलो पर फिरती रहती है।

हिंसा के कारण—वर्तमान युग मे जीव हिंसा अनेक प्रकार से होती है। उसमें जिन देशो में धान्य का अभाव है वहाँ के जंगली लोग मछलियों और पशुओं का मांस काम में लेते है। उनके लिए वही साधन जीवनाधार है। और वह उनके लिए हमेश का आहार ही है।

लेकिन वर्तमान में विषय विकार वर्धक चमकीले वस्त्र बनाने के लिए रेशम के कीड़े तथा चरबी से चमकते हुए वस्त्र बनाने के लिए पशुओ को क़त्ल किया जाता है। और शहरों में कई गूजर दूध वेचने वाले दूध देने वाले जानवर पालते हैं। लेकिन उनका दूध घट जाने से उन पशुओ को कसाई खाने मे कत्ल करने के लिए बेच देते हैं।

कोमल और मुलायम चमड़ा बनाने के लिए कई जीवित्त पशु भी काटे जाते हैं।

पापी कौन?—इस प्रकार चर्बी वाले कपड़े और शहरी दूध, दही, घी और वैसे चमड़े की वस्तुओ का उपयोग

करने वाले मनुष्य, उपरोक्त पशुओं को मारने वाले कसाइयों से हिंसा के पाप के भागी, कम बनते हैं या अधिक ? इस बात पर आज विचार करेंगे।

दोनों में कौन महापापी ?—एक व्यक्ति ट्रेन के डिब्बे मे एक मनुष्य का खून करता है। तब दूसरा मनुष्य रेल्वे लाइन पर पत्थर रखता है या चीलों को ढीला करता है या हटा देता है। इस प्रकार क्रिया करने वालो में कौन विशेष पापी ?

एक मनुष्य अपने दुश्मन को भोजन में विष देता है। तब दूसरा कुऐ में विप डालता है। इसमें विशेष अपराधी कौन ? उपरोक्त दोनों दृष्टान्तो से आप सब समझ गये होंगे कि विष देकर मारने वाला या ट्रेन में खून करने वाला एक ही व्यक्ति के खून करने की भावना वाला है, और दूसरा हजारों के विनाश का यत्न करता है।

कसाई से विशेष पापी कौन ?—कुरला और बांदरा में प्रति वर्ष करीबन् पचास हजार दूध देने वाले पशुओं को मांस चर्बी और खून के लिए कत्ल किया जाता है। लेकिन उससे भी विशेष पशुओ को विश्व के कसाईखाने में कत्ल करने वाले वे ही है. कि जो कसाईखाने के पदार्थों का अपने खानपान या वस्त्रादि की चर्बी के लिए उपयोग में लेते हैं।

अहिंसकों का कर्त्तव्य—केवल बांदरा और कुरला के कसाईखानों में ही, दूध घट जाने के कारण, १९३३-३४ की साल में ३०३९७ गौऐ और ५६१८ भैंसें काटी गई थीं। और मांस तथा चर्बी के लिए ११६३७ बैल काटे गये थे। इस पर से भारत

और विदेश के कसाईखानों के बढ़ते हुए अंकों को समझ लें। यदि जीव दया प्रेमी अपने घर पशुओं का पालन करें, तो इतनी बड़ी संख्या में दूध देने वाले पशु कभी नही काटे जा सकते।

एक-एक गृहस्थ के घर ८० हज़ार गौएँ—जैनशास्त्र अहिंसा के विषय में बहुत बारीकाई से उपदेश करता है, लेकिन उसी शास्त्र के सत्य उपासक श्रावक अपने घर ४० हजार, ६० हजार और ८० हजार गौओं का पालन पोषण करते थे। एक एक श्रावक इतनी गौएँ पालता था। उस समय भारत वर्ष में आर्य संस्कृति विद्यमान थी। पशु पालन और खेती ही उनका मुख्य व्यवसाय था। और ये ही वस्तुएँ जीवनोपयोगी है। उन वस्तुओं के अतिरिक्त वस्तुओं के बिना भी मनुष्य अपना जीवन सुखमय व्यतीत कर सकते हैं।

जयगोपाल—वैष्णव संप्रदायानुयायी जयगोपाल कहते हैं। गौओ के पालन करने वाले की जय हो" यह उसका अर्थ है। कृष्ण गौपाल के नाम से प्रसिद्ध हैं। क्योंकि वे गौपालन करते थे। जो गौओं की प्रतिपालना करते हैं वे कृष्ण के समान दयावान हैं। इसलिए उसकी जय बोली जावे यह स्वाभाविक ही है। इस समय मानव संस्कृति विचार सून्य होने लगी है। जिससे भारत जैसे आर्य देश में गौ जैसे दूध देने वाले विश्वोपकारक पशु काटे जायँ, यह भारत के लिए लज्जा का विषय है। प्रति वर्ष भारत मे एक करोड़ पशु काटे जाते हैं। जब तक भारत मे एक भी पशु काटा जावेगा तब तक भारत भूमि को आर्य भूमि नहीं मान सकते।

जर्मनी का हिटलर और अमानुल्लाखां—जर्मनी

के डिरेक्टर हिटलर ने तो डॉक्टरी का अभ्यास करने वाले विद्यार्थियों को भी प्रयोग के लिए पशुओं की हिंसा करने की सख्त मुमानियत करदी है। और सीनेमा की फिल्म द्वारा पशुओं के शारीरिक विज्ञान की शिक्षा दी जाती है। जर्मन जैसे देशों में पशु रक्षा को इतना महत्व दिया जाय, तब भारत मे इतनी उपेक्षा रक्खा जा सकती है? भारत के लिए इससे अधिक अधोगति की पराकाष्ठा और क्या हो सकती है?

अफगान के नबाव अमानुल्लाखां भारत यात्रा के लिए आये हुये थे। तब उन्होंने भारतीय मुसलमानों को सूचित करते हुये कहा था कि "यदि मेरे लिए एक भी गाय का खून करेगें तो मैं भारत से लौट जाऊँगा।

अनार्य देशो के राजा और प्रजा दूध देने वाले पशुओ की रक्षा के लिए अनेक उपाय सोचते हैं तव भारत का पशुधन प्रतिपल विनाश होता चला जा रहा है।

निदयता की पराकाष्ठा—'Cow has no soul' गाय में जीवन न मानने वाले परम नास्तिक गौ में जीव मानने के अलावा पृथ्वी, जल, बनस्पति, आदि मे भी जीव मानने लगे हैं। और वे अहिंसा के सिद्धान्तो का पालन करने के लिए दूध देने वाले पशुओ का दूध, दही, घी, और चमड़ा भी उपयोग में नहीं लेते। और वे अपने आपको वेजीटेरियन कहलवाते है। वे मानते हैं कि मनुष्य को पशुओं का दूध पीने का कोई अधिकार नहीं हो सकता। पशुओं के बच्चों के मुंह का दूध छिनकर मनुष्य पी जाय, इससे विशेष निर्दयता और क्या हो सकती है?

शुद्ध शाकाहारी कौन ?—वे लोहू, मांस आदि को भी दूध की तरह अपवित्र पदार्थ मानते हैं। कोई हमे कहे कि, "मैं मास नहीं खाता परन्तु अंडे खाता हूँ। क्यों कि वह मांस नहीं है।" उसके ऐसे शब्द सुनकर हमे हँसी आती है। उसी प्रकार वे भी हमारे दूध पान पर हंसते हैं, कि ये लोग कितने ढोंगी और दया हीन हैं ? फिर भी अपने आपको अहिंसक मानते हैं। पश्चिमात्य अहिंसक और बौद्ध धर्मानुयायी तो हमें Lacto Vagitarian से संबोधित करते हैं। अर्थात् "वनस्पति का आहार करने वाले होने पर भो पशुओ के दूध दही घी आदि का उपयोग करने वाले लोग।"

घी खाने वाला पड़ोस में भी न रहे—बौद्ध धर्मानुयायी इस संबंध मे ऐसे कट्टर हैं, कि जिस प्रकार चुस्त हिंदु या जैन माँसाहारी के पड़ौस में नहीं रहता या वह उन्हें पास नहीं रहने देता, उसी प्रकार जो घी में तली हुई पुड़ी, भूजिये या मिठाई खाते हैं उन्हे वे अपने पड़ोस मे नही रहने देते। क्योंकि उनके मतानुसारी पुड़ी आदि का उपयोग करने वाले अभक्ष्य भोगी है। इस लिए वे भी उनके पास रहने में पाप मानते हैं।

पशुपालन—वेजीटेरियन युरोपियन और बौद्ध, पशुओं के घी दूध आदि खानेवालो को इतनी घृणा की दृष्टी से देखते है, जब कि शहर वासी हिन्दू और जैन निर्भयता स दया हीन लोगों से दूध खरीद कर उपयोग करते है। और उन्हे उत्तेजन देकर कसाई खाने में भिजवाते हैं। फिर भी अपने आपको शुद्ध अहिसक मानते हैं। जीव दया मंडल, पिजरापोल तथा शुद्ध

अहिंसक हिन्दू और जैन प्रयत्न करें तो दूध देनेवाले जानवरों को कसाईखाने में जाने से रोक सकते हैं। और वे पाप के भागी भी नहीं बन सकते है।

मौज शौक के साधन जैसे कि गाड़ी घोड़े मोटरें आदि रखने का स्थान शहर निवासियो को मिल जाता है। उनका खर्च वे निभा सकते है, परन्तु दयापात्र पशुओं का पालन उन्हे प्रतिकूल और खर्चीला प्रतीत होता है। जिन्हे दयाधर्म से भी धन विशेष प्रिय है ऐसे अमानुषिक संस्कृति वाले जीवो को क्या समझाया जा सकता है ? और ऐसी स्वार्थतम मलीन भावना वाले लोग समझ भी क्या सकते हैं !

जुगनू का तिलक—समुद्र तट पर रहने वालों को मच्छीमारों की स्त्रियां जुगनू को पकड़ कर उसे गोंद से अपने ललाट पर चिपकाती है और जुगनू के चमकते हुए प्रकाश से अपने शरीर की शोभा समझती हैं। अज्ञानी स्त्रियों को यदि हम पापी और निर्दयी कहेगे तो लाखो कीड़ों और पशुओं को मारकर रेशम और चर्बी वाले वस्त्र पहनने वालों, बेचने वालों और सीने वालों को हम क्या कहेगे !

पापी कौन ?—एक मनुष्य दवाई के लिए डाक्टर की सलाह से लाचार होकर कोड़लिवर-ओइल और हेमोग्लोबीन जैसे हिंसक पदार्थ काम में लेता है। तब दूसरा मनुष्य शरीर की शोभा और शृंगार के लिए रेशम के वस्त्र या दूध वाले पशुओं की चर्बी से चमकते हुए वस्त्र पहने; तो इन दोनों में पापी कौन ?

किसका बहिष्कार होगा ?—मनुष्य किसको घृणा

की दृष्टि से देखेंगे ? शराब या मांस भक्षी को ? या कोडलीव्हर और हमोग्लोलीन का उपयोग करने वाले या बेचने वाले को ? दोनों में से किसका बहिष्कार करेंगे ? ज्ञानी और दया धर्मी संघ एकत्र होकर दवाई का उपयोग करने की सलाह देने वाले डाक्टर का तिरस्कार करेंगे, लेकिन शौक, विलास-शृङ्गार और शोभा के लिए ऐसे-हिंसक वस्त्र बनाने वाले या बेचने वाले के लिए किसी दया धर्मी को स्वप्न में भी विचार आया है ? या दया आवेगी।

क्या ये धर्म गुरु हैं ?--मोह माया राग और द्वेष बांधने वाले धर्म गुरु अपने आप को महाव्रतधारी, वीतरागी जैसे मान कर वैसे हिंसक वस्त्रों का छड़े चौक उपयोग करते हैं और वैसे वस्त्र पहन कर बड़े बड़े शहरो में अपना जुलूस निकलवा कर या धर्म स्थानक के पाट पर बैठ कर अपने सुंदर वस्त्रों का प्रदर्शन करते हैं और अहिंसक शुद्धवस्त्रधारियो का चित्त चलित करने का प्रयत्न करते हैं। पापमय वस्त्रों का प्रचार करते है। वितरागी वृत्ति के पर्दे की ओट में इस प्रकार के आचार का सेवन करने वाले धर्मगुरु कभी अहिंसा के सूक्ष्मतत्व को समझने का विचार कर सकते हैं ?

किस के भक्त बनेंगे?--जैन मंदिरों में घी की बोली बोली जाती है। उसमें ढाई रुपये का मन घी गिना जाता है। कारण पूर्व में घी का भाव सस्ता था। वर्तमान में पशुधन के विनाश के कारण तन मन धन और जन का नाश हो रहा है। कृष्ण को महापुरुष के रूप में जैन और वैष्णव भी मानते हैं इस

लिये कृष्ण के अनुयायियों को दयाधर्म के शुद्ध स्वरूप को समझ कर पाप से बचना चाहिये तभी वे राम और कृष्ण के सच्चे उपासक कहे जा सकते है। अन्यथा वे रावण और कंस के भक्त क्यों न समझे जावें !

१७-मानवता का आदर्श

(कुछ प्रश्न)

श्री भगवतीजी सूत्र में प्रभु महावीर को जयंती नामक श्राविका ने प्रश्न पूछे हैं कि " प्रभु ! संसारी जीव सोते हुए अच्छे या जागते हुए ?' रोगी भले या निरोगी ? धनवान् अच्छे या निर्धन ? आलसी भले या परिश्रमी ? उसके प्रत्युत्तर में प्रभु ने फरमाया है कि संसारी जीव रोगी; सुषुप्त, निर्धन, निर्बल और आलसी ही अच्छे । क्यों कि वे उस परिस्थिति में पाप प्रवृत्ति विशेष नहीं कर सकेंगे । और यदि वे इससे विपरीत दशा में होंगे तो वे पाप पथ पर ही प्रयाण करेंगे इस लिए उनके लिए सरोगी और दुर्बल अवस्था ही लाभप्रद है ।

शेर और खरगोश—शेर बन का राजा है । तब हिरण और खरगोश तुच्छ प्राणी हैं। सिंह जितना बलवान है, हिरण उतना ही निर्बल ! सिंह श्रीमंत है जब हिरण गरीब ! सिंह, गाय, भैंस और हाथी जैसे बड़े प्राणियों को अपना भक्ष्य बना सकता है । तब हिरण सूखा घास भी सुख से नहीं खा सकता । उसके जीवन में अनेक मानव शिकारी और अन्य शिकारी पशुओं का भय निरन्तर बना ही हुआ है। उसे अपना जीवन कोने में छिप कर पूर्ण करना पड़ता है । तब सिंह-वनराज नित्य बन को कम्पित करता है। और हजारों पशु पक्षियों को अपने पद पद पर त्रस्त करता है । उसके रहने के लिए स्वतन्त्र

अनेक वन और अनेक पर्वत हैं कि जिनकी विशालता के आगे राजा महाराजा के बाग बगीचे और बंगले एरंडी के वृक्ष और झोंपड़ी वत प्रतीत होते हैं। उसके खानपान के लिए अनेक गुण विशेष सामग्रियाँ और शुद्र जलवायु कि जिसके दर्शन भी राजा महाराजाओं को दुर्लभ हैं, उसे उपलब्ध है।

भाग्यशाली कौन—ऐसे वैभव शाली बाघ और सिंह और दूसरी ओर खरगोश और हिरण, इन दोनों में से विशेष भाग्यशाली कौन ? आप सहज ही समझ गये होंगे कि बाघ का वैभव और सिंह की सम्पत्ति उसके लिये पाप रूप होने के कारण विपत्ति के समान है। और खरगोश व हिरण गरीबी से अपना निर्दोष पापहीन जीवन व्यतीत करते हैं इसलिये वे भाग्यशाली है। विशेष में सिंह, सर्प, रींछ और बिल्ली आदि प्राणियों में से कितने ही बाल्यावस्था में ही मृत्यु को प्राप्त होते हैं। और कितने सौ वर्ष का आयुष्य पूर्ण कर मरते हैं। इन दोनों मे से विशेष भाग्यशाली कौन ? भगवती सूत्र के न्याय से अल्प जीवन वाले अल्प पाप उपार्जन करते हैं और विशेष आयुष्य वाले विशेष पाप का उपार्जन करते हैं। ठीक यही स्थिति मानव संसार की है।

सम्पत्ति या विपत्ति—'राजेश्वरी तो नरकेश्वरी और नरकेश्वरी, राजेश्वरी है' यह प्राचीन उक्ति अति विचरणीय है। पशुओं में सिंह राजा है। और वह विशेष पाप का उपार्जन कर नरक का अधिकारी बनता है। उसी प्रकार मानव प्राणियों में धनिक धन जन और जमीन का स्वामी राजा है और उसके अभाव वाला निर्धन। बाघ का वैभव और सिंह की सम्पत्ति

जिस प्रकार उसके जीवन में केवल पाप वर्धक है उसी प्रकार
सम्पत्तिशाली नरसिंह (राजा) की सम्पत्ति और वैभवशाली
व्यापारी बाघों का वैभव उन्हें विपत्ति के पापमय पथ पर प्रयाण
करवाते हैं ।

यन्त्रवाद की भयङ्करता—सिंह और बाघ में इतना
बल न हो तो वह महा भयङ्कर पाप किस प्रकार उपार्जन कर
सकता है ? सर्प के पास भयङ्कर विष न होता तो मदोन्मत्त मानव
को अपनी फूंकार मात्र से या दर्शन मात्र से किस प्रकार कम्पित
कर सकता ? उसी प्रकार मनुष्यों के पास यदि वैभव और
सम्पत्ति न होती तो वह यन्त्रवाद जैसे जीवित राक्षसों को
लज्जित कर देने वाले साधन कैसे खड़े कर सकते ? और हजारों
अनाथ और निर्धन मनुष्यों की रोटी निर्दयता से किस प्रकार
छीन सकते ?

भेदभाव की दिवालें—मनुष्य मनुष्य के बीच छोटे
बड़े, भाग्यशाली भाग्य हीन, धनवान निर्धन, सेठ नौकर, सुखी
दुःखी, पुण्यशाली पापी, इस प्रकार के भेदों की वज्रमय लोहे की
दिवालों को भी लज्जित करने वाली अभेद्य दिवालें उत्पन्न करने
वाला यह वैभव ही है ।

सम्पत्तिशाली भिखारी—जन्म के भिखारी को
छोड़ घण्टों के लिए सुन्दर वस्त्र, आभूषण, खान-पान गान-तान
नाटक, सिनेमा, बाग बगीचे बङ्गले गाड़ी घोड़े और मोटर के
साधन वाला बनने का स्वप्न आवे तो उस दशा में वह अपना
मिजाज गुमा देते और उसमें अहंता-मदांधता की राक्षसी वृत्ति

प्रवेश करती है तो जन्म से ही जिसको वैभव सम्पत्ति प्राप्त हो, उसकी अहंता मदान्धता-बड़प्पन के पाप का नाश करने के लिये अखिल विश्व का नाप करने वाला गज भी छोटा पड़े। अर्थात् उस पाप का परिमाण नापा नहीं जा सकता है।

क्रूर प्राणियों में भी समानता—पशु, पक्षियों की समान जाति मे तो समानता है ही और विजातियों में विषमता दिखती है। सिंह, बाघ, चीते आदि सम जाति के सर्व प्राणियों में प्रकृति ने समान सम्पत्ति दी है। उनका जाति स्वभाव क्रूर होने पर भी उन्हे परस्पर एक दूसरे का भय नही है। एक सिंह दूसरे सिह से नहीं डरता है। यह जङ्गली, हिंसक, क्रूर, निर्दय प्राणी अपनी सम जाति पर हमला नही करते हैं, सिर्फ विजातीय प्राणी हिरण, खरगोश आदि अपने भक्ष्य पर हमला करते हैं।

मनुष्यों को मनुष्य का भय—सिह, सर्प, बाघ और हिरन, खरगोश आदि में महान् अन्तर हैं, वे विजातीय तो हैं ही; वैसी भिन्नता मनुष्य मनुष्य के बीच में नहीं है। मनुष्य मात्र को प्रकृति ने शरीर, अङ्गोपाङ्ग, इन्द्रियां तथा आकृति समान दी है तथापि मानव जाति में पारस्परिक महान भय और भ्रान्ति दिखाई देती है। एक मनुष्य मारे भय के दूसरे से निडरता पूर्वक बोल भी नहीं सकता।

मनुष्य पर मनुष्य की सवारी—युवा और सबल सिंह या बाघ किसी निर्बल सिह या बाघ पर सवारी नहीं करता भयभीत नही बनाता, प्रभाव या जोश नही जमाता; परन्तु एक धनिक या अधिकारी पुरुष अपने निर्धन बन्धुओं को पशु बना कर

पालकी या रिक्शा पर सवारी करता है। अपने मानव बन्धु को सेवक या गुलाम बना कर सेवा ली जाती है। आश्चर्य ! महद् आश्चर्य !!

सम्पत्तिशाली की लूट—सम्पत्तिशाली पुरुष खाना पीना, सोना, बैठना, आना, जाना आदि तमाम कार्य अपने धन मद के कारण गरीब मनुष्य को सवारी करके ही करता है। हजारों मजूरों के पास से १) रुपये रोज का काम करा कर बदले में ८ आने देता है आधी बचत के रुपये अपने घर में रख कर गरीबों के हक डुबाता है और खुद श्रीमन्त बनने की लालसा करता है। इस प्रकार गरीबों के हक छीन कर एकत्र की हुई सम्पत्ति को ऐश आराम विलास और गान तान में खर्चता है। इस प्रकार यंत्र वाद के राक्षसी साधनो से हजारों गरीबों पर नित्य सवारी की जाती है। प्राचीनकालीन असभ्य समाज पशु पर सवारी करता था जब आज की सभ्य समाज उक्त प्रकार गरीब मनुष्यों पर सवारी करने में अपनी सभ्यता, मर्यादा Position और महिमा मानता है।

मानव यन्त्र का गुलाम—पूर्व काल में जब कि चारों ओर अशिक्षा का प्रचार था, वे जंगली मनुष्य निर्बलों को गुलाम बनाते थे। यह प्रथा आज की शिक्षित और सुधारक सरकारको बुरी मालूम होने से गुलाम प्रथा दूर करने का क़ानून किया। उसी सुधारक सरकार ने विज्ञान के युग में मनुष्यों को यंत्र के गुलाम बना कर मनुष्य में से चेतना और विचार शक्ति का भी नाश कर दिया।

पशु जैसा प्रेम रखो—सिंह बाघ चीते जैसे प्राणियों में भी अपने खानदान और जाति की तरफ प्रेम दया और सहिष्णुता है वैसी दया प्रेम और सहिष्णुता समाज जाति मनुष्य के बीच रखी जाय तो यंत्रवाद, शाहीवाद, पूंजीवाद आदि का नाश हो कर सब प्रकृति के गोद में निर्दोष जीवन जीना सीखें और महा पाप की पराकाष्ठा से बच सकें।

सतयुग व कलियुग—प्राकृतिक बख्शीस की तरह मनुष्य मनुष्य के बीच समानता और सभ्यता साम्यभाव रहे तो सतयुग और सत्तावाद साम्राज्यवाद, पूंजीवाद आदि हो कर विषमभाव का लेश हो तो कलियुग समझना चाहिये।

सत्तावाद क्या नहीं करेगा ?—क्रूर और अज्ञान पशु प्राणियो में भी खानपान मकान आदि में समानता-साम्यता दिखाई देती है परन्तु एक सौ पचास क्रोड़ मनुष्यों में लाखों प्रकार की विषमता दीखती है। न मालूम यह सत्तावाद कहां जा कर रुकेगा। जब विश्व में से धातुओ का नाश होगा और अन्य कलाओं का नाश होगा तब सत्तावादी और समाजवादी जल पीने के लिए बर्तनो के अभाव मे मनुष्य की खोपड़ी का उपयोग करे तो कौन ना कह सकता है ?

निर्दय कौन ?—गहरे जल मे डूबने वाले को कोई तैराक बाहर न निकाले अथवा सांप बिच्छु काटने वाले को दवाई वाला दवाई न देवे तो समाज उसे निर्दयी और पापी मानता है तो अपने जीवन की प्रवृत्तियों में गरीब मनुष्यों का पशु तुल्य उपयोग करने वाले और असमान वृत्ति मे रमण करने वाले श्रीमन्तों को

कैसे समझे जायं ? अपने मानव बन्धु को गधे की तरह ढाई मन बोझ उठाने से गर्दन, कमर और शरीर टूटता देख कर के भी मोटर में बैठ बिदा होने वाले—दुखी मानव को आश्रय नहीं देने वाले को किस कोटि का समझा जाय ?

श्मशान यात्रा—अपनी महत्ता के लिए श्रीमन्त लोग अन्य श्रीमन्तों को निमंत्रण दे कर उन्हे ठोस ठोंस कर मेवा मिठाई खिलावें और अपनी नजरों के सामने करोड़ो मानवों को विना अन्न के श्मशान यात्रा करते देखें तो उसे कैसा समझना चाहिये ?

पाषाण हृदय—स्वयं भव्य हवेली में विविध प्रकार के विलास कर रहा है और उसके सन्मुख वर्षा और सर्दी से दुखी अर्धनग्न दशा में मूर्छित करोड़ों मनुष्यों को देख कर या सुन कर जिसका दिल आर्द्र न हो उसे कैसा पाषाण हृदयी पुरुष माना जाय ?

आँख और कान का दुरूपयोग—सतयुगी समानता और कलयुगी के असमानता के लाखो प्रसंग आंख वाला नित्य देख सकता है और कान वाला सुन सकता है। आंख और कान मिलने पर भी अपनी समझ और साधना का उपयोग नहीं करने वाले के लिए जीवन के सब प्रसंगो की समालोचना करने में अनेक वर्ष व्यतीत हो।

क्रूर पशुओं से भी महाक्रूर—गरीब मनुष्य हिरन बकरे और कबूतर जैसा निर्दोष जीवन विताने वाला प्राणी है और धन वैभव के पुजारी वाघ सर्प से भी अधिक पापार्जन करने

वाले हैं। इसीलिये शास्त्रकारों ने करोड़ों क्रूर प्राणियों के पापों से भी अधिक पापी मनुष्य का एक घंटे भर के पाप को भयंकर और अधमाधम गति का अधिकारी कहा है। वे क्रूर पशु पापफल भोगने के लिये चौथी नरक तक जाते हैं जबकि मनुष्य अपने पाप फल भोगने के लिए सातवें नरक तक जाते हैं।

साम्राज्यवाद किस को शोभा दे ?—बुद्धि और विवेकहीन पशुसंसार में स्वार्थ वृत्ति का साम्राज्य हो सकता है और पशु संसार ही साम्राज्यवाद का पूजक हो सकता है। क्योंकि उसमें हिता-हित विचारने का ज्ञान और बुद्धि नहीं है। मनुष्य महान विचारक होने से स्वपर के हित का सूक्ष्मता से अभ्यास करके सब के श्रेय के लिए यत्न कर सकता है; परन्तु वर्तमान मे मानव संसार में स्वार्थवाद सत्तावाद, साम्राज्यवाद, पूंजीवाद इतने बढ़ गये हैं कि पशुओ मे से अधम कोटि में जा पहुचे हैं।

पाप का मूल—हिंसा, असत्य, चोरी, व्यभिचार, क्रोध, कपट, गर्व, तृष्णा, द्वेष, ईर्षा, निन्दा, चुगली, क्लेश आदि पाप हैं वैसे धन का ममत्व भी एक पाप है। विशेष विचारक सरलता से समझ सकता है कि करोड़ों पापों का उत्पादक— जन्मदाता एक धन ममत्व ही है।

स्पार्टा देश का भला राजा—धन ममत्व के महापाप को मिटाने के लिए स्पार्टा देश के भले बादशाह ने सोना, चांदी, हीरा, मोती मणि माणिक आदि का नाश किया था और ऐसे मूल्यवान पदार्थ के रखने वाले को अपराधी समझता था। उसके राज्य में लोहे का साम्राज्य था। सोना चांदी का उपयोग अपरा-

धियों की बेडियों के लिए था। और जवाहरात खूनियों को दुःख हो इस प्रकार पहना कर फांसी लटकाये जाते थे। वह राजा लकड़ी के तख्ते पर घास बिछा कर बैठता था। राज्य में लोहे के सिक्के थे जिससे देश का माल देश में रहता और विदेश का कच्चा या पक्का माल आ नहीं सकता था। जो सोने चांदी के सिक्के हों तो विदेशी लोग विलासी सामग्री भेज सकें परन्तु जहां स्वर्ण का अभाव हो तो विदेशी व्यापारी लोहे के सिक्के का क्या करें। इस कारण से उसके राज्य में से हिंसा असत्य, चोरी व्यभिचार, कषाय द्वेष अहंता आदि तमाम दोष नष्ट हुए थे।

अपराधों का मूल—गरीबों की अज्ञानता का लाभ लेकर उन्हे लूटे जाते हैं और उनके परिश्रम का योग्य बदला नहीं दिया जाता अतः वे चोरी खून आदि करते हैं और समाज की शान्ति का भंग करते हैं। उससे उनके लिये कोट किले, पुलिस शस्त्र, तिजोरी ताले आदि उपाधियां और कचहरी क़ैदखाने आदि करने पड़ते हैं। तथापि विश्व-बन्धुत्व कौटुम्बिक वृत्ति समान भाव आदि के अभाव में अनेक उपद्रव नित्य बढ़ते जाते हैं।

पापी को पापी मानो—हत्या, चोरी, असत्य, व्यभिचार, छल-कपट, दग़ाबाजी आदि पाप समझा जाता है और समाज इन्हे घृणा की दृष्टि से देखता है। किसी छोटे गांव में चोर आएगा तो उसे पकड़ने के लिए सारे गांव वाले अंधेरी रात में हथियारों से लैस होकर धावा बोल देंगे और चोर की पापमय प्रवृत्ति का विरोध करेंगे, उसे चोरी करने से रोकेंगे। इसी प्रकार कोई साहूकार या श्रीमान् के वेष में, अधिक श्रीमान बनने की

हवस में, ऐसी वस्तुओं पर अपना एकाधिपत्य जमाता है, जिनकी प्रत्येक मनुष्य को आवश्यकता है, तो उसका भी विरोध करना चाहिए। ऐसा किये बिना उसकी पापमय प्रवृत्ति अटक नहीं सकती।

विश्वव्यापी लूट अटके कैसे ?—आज से बीस वर्ष पहले रेशम और मलमल के भड़कीले वस्त्र पहनने में गौरव समझा जाता था, पर आज शुद्ध खद्दर की टोपी पहनने पर ही कोई विशेष सम्मान का पात्र बन सकता है। रेशम और जरी के वस्त्रो की होली की गई, उन्हे जला कर भस्म किया गया और ऐसा करने के कारण समाज का मोह उन कपड़ों से हट गया और उन्हे पहनने वाले असभ्य गिने जाने लगे। ऐसे कपड़े पहनने में वे लज्जित होने लगे और परिणाम स्वरूप उनका त्याग कर दिया गया। इसी प्रकार यदि श्रीमंताई को अथवा विपुल धन के समुदाय को तथा विलासवर्धक-साधनो के स्वामी को समाज आदर की दृष्टि से न देखे वरन उसे दीन और घृणापात्र समझने लगे तो मानव-जगत में धन के लोभ से जो छोटी-मोटी चोरियां लूट-मार और डाकेजनी होती हैं, वह अटक सकती हैं। यही नहीं बल्कि आंखो देखते विशाल यंत्रवाद की महान लूट तथा महाचोरी का धंधा भी इससे रोका जा सकता है।

बड़ा पापी कौन है ?—जो समाज धनवानों का आदर करता है वह समाज धनवानो को और अधिक पाप करने और ज्यादा लूट मचाने की प्रेरणा करता है। यही नहीं, वह धनवानो की लूट को लूट न मान कर परम पुण्योदय और साहू-

कारी समझ कर घोर पाप का उपार्जन करता है। धनवान की
अपेक्षा भी वह समाज अधिक पापी और समाज-शत्रु है जो धन-
वान का आदर-सत्कार सिर्फ इसलिये करता है कि वह धनवान है।

पापी को पाप का ज्ञान कराओ—जिस समाज में
मद्य-मांस भक्षी का सम्मान नहीं किया जाता उस समाज में ऐसा
व्यक्ति घृणा की नजरों से देखा जाता है। अपने ऊपर उसकी
छाया तक लोग नहीं पडने देते। कोई उसकी सोहबत भी नहीं
करते। अतएव ऐसे समाज में शराबी और मांस-भक्षी नहीं देखे
जाते। ऐसे समाज में कोई व्यक्ति इस प्रकार के कृत्य करने का
साहस भी नहीं कर सकते। इसी प्रकार यंत्रों द्वारा अथवा ऐसे
ही और-और उपायों से लाखों आदमियों के मुंह का कौर छीन
कर, लाखों झोंपड़ियों का सत्यानाश करके जो व्यक्ति झोंपड़ीवालों
को अधनंगा या नंगा बनाता है और स्वयं 'बंगला वाला' या
वैभवशाली कहलाता है, ऐसे शराबी से भी अधिक उन्माद वाले
व्यक्ति का, तथा पशु के मांस की अपेक्षा भी अधिक पापपूर्ण,
मानव-संहार करके आमोद-प्रमोद करने वाले व्यक्ति का समाज
में यदि आदर-सत्कार न किया जाय और उसे यह भान करा
दिया जाय कि वह घृणास्पद जीवन बिता रहा है, तो उसका अभि-
मान धूल में मिल सकता है। फिर वह अपनी नशेबाजी को
क़ाबू में करले और ऐसा वैभवशाली बनने के लिये कोई स्वप्न में
भी इच्छा न करे। वह अपनी दयाजनक स्थिति के लिए आँसू
बहावे और उन्हीं आँसुओं की वर्षा में स्नान करके पवित्र बन
जाय। जब उसे सुध आएगी तो वह अपनी सम्माननीय स्थिति

के लिए हर्ष मनावेगा और वैभवशाली बनने के दुष्ट संकल्प के लिए तीव्र पश्चात्ताप करेगा।

निर्धन बनने की प्रार्थना—जैन सूत्रों में संन्यस्त राजकुमार, श्रेष्ठिकुमार, राजकुमारियों तथा श्रेष्ठिकुमारियों ने साधु तथा साध्वियों के वेष में प्रभु से प्रार्थना की थी—"हे प्रभु ! हम इस जन्म में धनवान् बने किन्तु अब आगामी जन्म में यदि हमारे तप और संयम का कुछ फल हो तो बस यही कि धनवान् कुल मे हमारा जन्म न हो और ऐसे समभावी निर्धन कुल में जन्म हो जहाँ विश्व बंधुत्व का संबंध स्थिर बना रह सके। यही हमारी विनम्र प्रार्थना है।"

उल्लेखित त्यागी राजकुमारों तथा श्रेष्ठिकुमारों ने इस जन्म में धनवान् कुल में जन्मने के उपलक्ष में पश्चात्ताप किया था और अपने तप और संयम का मूल्य देकर निर्धन कुल में—भाग्यशाली कुल में जन्मने के लिए प्रार्थना की थी।

जीवन की सफलता—जिस तपस्या और संयम के फल-स्वरूप उन्हें स्वर्ग और राज्य के सुख सहज ही मिल सकते थे, उस तपस्या और संयम के फल रूप में स्वर्ग, राज्य एवं श्रीमंताई से अधिक श्रेष्ठ निर्धन अवस्था की प्राप्ति के लिए भावना पाकर उन्होंने अपने जीवन की सफलता मानी थी।

पुण्यशाली या पापी ?—धनवान् होना पुण्य का उदय है या पाप का ? यह विचारणीय प्रश्न है। आज कल धनवान् होना पुण्य का उदय माना जाता है, अतएव यह प्रश्न पाठकों को अजनबी सा मालूम होगा परन्तु विचारक लोग इसे

सरलता से समझ सकते हैं। छोटे और बड़े जन्तुओं में जो निर्धन हैं वे सुखी हैं—पुण्यशाली हैं और जो धनवान् हैं वे दुःखी और पापी हैं।

धनी और निर्धन—कंकर और हीरा, धूल और नमक खारा पानी और मीठा पानी, घास की अग्नि और लकड़ी की अग्नि, पाखाने की हवा और बगीचे की हवा, गुंवार और गेहूँ, बांस और गन्ना, तिनका और तिल, धतूरे के फूल और गुलाब के फूल; इन सब में हीरा, मीठा पानी, तिल और गुलाब के फूल आदि धनवान् हैं जिससे उन्हे अधिक घिसना, छिदना, भिदना, पिसना और कुचलना पड़ता है, जब कि गरीब वर्ग के तत्त्व अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत करते हैं।

मामूली मक्खी और शहद की मक्खी, साधारण भौंरा और शहद का भौंरा, साधारण कीड़ा और रेशम का कीड़ा, मामूली मच्छी और मोती वाली मच्छी, साधारण मृग और कस्तूरी वाला मृग, इनमे से जा शहद, रेशम, मोती, कस्तूरी आदि संपत्ति वाले प्राणी हैं उन्हें मारणान्तिक कष्ट भुगतने पड़ते हैं।

सुन्दर पंख वाले और गाने वाले पक्षियों को कैद भोगनी पड़ती है, उनके प्राण भी ले लिये जाते हैं। गधी और गाय, भैंस और शूकरी के बालकों में से गधी और शूकरी के बच्चे आनंद से अपनी माता का दूध पीते हैं तब गाय-भैंस के बच्चों को कोई शान्ति से दूध नही पीने देता है।

हाथी, ऊँट, बैल, घोड़ा, और गधा आदि जानवरों को अपनी मोटाई के कारण मनुष्यों का तथा अन्य प्रकार का बोझा

लादना पड़ता है तब जंगल के अनगिनते प्राणी स्वतंत्रता के साथ सैर करते हैं।

प्रकृति के धनवान् और निर्धन के नियम से उपर्युक्त पशु-संसार भी नहीं बच पाया है तो प्रकृति के नियमों के विरुद्ध मनुष्य किस प्रकार सुखी रह सकता है ? यह बात प्रकृति के नियमों का अभ्यास करने से सहज ही समझ में आ सकती है।

'राजेश्वरी सो नरकेश्वरी' यह पुराने जमाने से चली आने वाली कहावत में अक्षर-अक्षर सत्य है। सिंह, सर्प, वाघ आदि में यदि इतना शारीरिक बल का धन न होता तो वे अपरिमित पाप क्योंकर कर सकते ? लाखों करोड़ों हिरन और खरगोश मिल कर भला कितना पाप कर सकते हैं ? वे कितने जीवों को दुःख दे सकते हैं ? इनकी अपेक्षा एक ही दुर्बल सिंह या वाघ अधिक हिंसक और संहारक बन सकता है।

जीवित और मृत—भिखारी और राजा तथा सधन और निर्धन की सिंह और हिरन के साथ तुलना की जा सकती है। सिंह अधिक शक्तिशाली होने से अधिक पाप उपार्जन करता है तब हिरन अपना जीवन निर्दोष बिताता है। इसी प्रकार धनवान् अपनी सत्ता के मद में अपने को मानव समाज से बड़ा अर्थात् भिन्न अनुभव करता है। उसके हृदय से प्रत्येक पल मानवता का पूर दूर होता चला जाता है। तब निर्धन, जन-समुदाय के साथ अपनी एकता का अनुभव करता हुआ जीवन यापन करता है और समाज के सुख दुःख में अपना सुख-दुःख समझता है। वह विश्व के साथ अपना तादात्म्य स्थापित करता

है, मानवधर्म को जीवित कर सकता है। धनवान् मानवधर्म
को मटियामेट करके स्वयं मुर्दा-जीवन बिताता है। जिसके हृदय
में मानव-जाति के प्रति सहिष्णुता, दया, करुणा और समानता
की मैत्रीभावना है वही जीवित है। जिसमें इन गुणों का वास
नहीं वह जीवित होते हुए भी मुर्दा-जीवन बिता रहा है।

असंतोष वृत्तिः—विश्व के समस्त जीवधारियों के प्रति
जो साम्य भावना है वही मानव भावना है। विश्व में जितने भी
अनिवार्य और आवश्यक साधन हैं उन्हे प्रकृति ने मनुष्य को
समान रूप में प्रदान किया है। शरीर, अंगोपांग, इन्द्रिय, अवयव
हवा, पानी, चन्द्र सूर्य का प्रकाश, ऋतुओ का लाभ, नदी, तालाब
सरोवर, समुद्र, पृथ्वी, आकाश, आदि अनमोल तत्त्वों का
प्रकृति ने मनुष्य के लिए समान भाग में ही बंटवारा कर दिया
है। गर्भ से लगाकर मृत्यु पर्यंत के तमाम साधन क्या राजा,
क्या रंक, सब के लिए प्रकृति ने समान निर्माण किये है। सवा
नौ महीने का गर्भवास, उसके लिए दूध, माता को दूध बन्द कर
देने पर दांतों का आना, चलना-बोलना सीखना, बुद्धि का विकास,
बाल्यावस्था, युवावस्था, वृद्धावस्था आदि जीवन के सब प्रसंग और
तत्व राजा-प्रजा, सधन-निर्धन, सब के लिए समान हैं। प्रकृति
के शासन में लेशमात्र भी पक्षपात नहीं है पर मनुष्यों में क्रूरता
के कारण बलात्कार के घातक भाव उत्पन्न हुए और जब हिंसक
पशु दूसरे प्राणियो पर अपनी भूख शान्त करने के लिए हमला
करता है तब मनुष्य के पास लाखों-करोड़ो की संपत्ति होने पर
भी वह हिंसक पशु के बराबर संतोष वृत्ति न रखते हुए अपने

बन्धु समाज पर आक्रमण करके जैसे बिल्ली चूहे का शिकार कर लेती है इसी प्रकार आज मनुष्य मनुष्य को निगल जाने के लिए सदैव अपने बुद्धि वैभव तथा यंत्रणादायक यंत्रो का उपयोग करता है।

मानवधर्म की रक्षा:—प्रकृति मनुष्य को सिखाती है कि—'जैसे खान-पान के सब पदार्थ एक ही पेट मे डाले जाते हैं फिर भी तमाम अवयवो को मैं समान भाग में बांट देती हूँ उसी प्रकार तुझे भी संपूर्ण मानव समाज को अपने शरीर का अंग मान कर उसके लिए तमाम साधन यथोचित रूप मे बांट देने चाहिये'। प्रकृति यदि ऐसा बंटवारा न करे तो अन्य अंगोपांग खुराक के अभाव मे निस्तेज और निर्बल हो जाएँ और पेट सड़ने लगे, उसमें कीड़े पड़ जावें, वह फूल जावे और उस हालत में पेट दुश्मन से भी ज्यादा दुखदायी प्रतीत होने लगे

जो मनुष्य अपने साधनो का उपयोग अपने बन्धु समाज के लिए नहीं करता उसकी हालत पेट के सड़ने, भारी होने और कीड़े पड़ने जैसी हो जाती है। उसमें मानव बंधु के प्रति तुच्छता, घृणा और तिरस्कार के कीड़े उत्पन्न होते हैं और बन्धु समाज रूप अन्य अंग निस्तेज हो जाते हैं। समान बटवारा करने से अपने मानव-धर्म की रक्षा होती है और अपने अंगों की-मानवों की-भी रक्षा होती है।

पेट की, कुटुम्ब की तथा जाति की चिंता तो हिंसक पशु भी करते हैं परन्तु जो माई का लाल इनके अतिरिक्त चन्द्र-सूर्य-वत् अभेद भाव से मानव समाज की, विश्व की, सेवा करता है वही सच्चा मनुष्य है।

मानव की घातकता:—सिंह जैसे क्रूर प्राणी में भी
संग्रह तथा संचय की वृत्ति नहीं है तब मनुष्य में करोड़ों हिंसक
पशुओं से भी ज्यादह संचय-वृत्ति पायी जाती है और जो
कहीं मनुष्य मे सिंह, बाघ जितना बल होता तो वह सारे संसार
में अपनी सत्ता स्थापित करने के लिए करोड़ों बन्धुओ के नाश
के लिए तैयारी करता। वर्तमान में युद्ध की जो झनकार हो रही
है, जहरीली गैस और बम तथा अन्य संहारक साधनों की जो
नित्य नयी तैयारी हो रही है, उससे अधिक मानव-स्वभाव की
घातकता के लिए और क्या प्रमाण चाहिए ?

मानवता की दुर्लभता:—पशु-पक्षियों की कुटुम्ब
तथा जाति पर्यंत हित कामना सीमित है तब स्वार्थान्ध मानव
अपने पेट के सिवाय दूसरे की चिंता शायद ही कोई करता है !
भले ही कोई अपने स्वार्थ के लिए स्त्री, पुत्र, माता पिता की
सेवा करेगा किन्तु मनुष्य की हैसियत से मनुष्यता की योग्यता
प्राप्त करने के लिये अभेद भाव से मानव समाज की सेवा करने
वाले,साम्य भावना के पुजारी, भारत के पैंतीस करोड़ लोगो में से
पतीस भी गांधी और जवाहरलाल मिलना मुश्किल है।

पेट में जाने वाले खानपान के पदार्थों का तत्व प्रकृति तमाम
अवयवो को समान भाव में बांट देती है, उसी प्रकार मानव को
चाहिये कि वह विश्व के जीवधारियों को अपना ही अंग मानकर
उनके श्रेय के हेतु अपनी सम्पत्ति का उपयोग करे।

सिर और पैर—पैर नीचे रहतेहैं, सिर ऊँचा रहता है। फिर
भी यदि पैर सड़ जाएँ तो मस्तक भी जमीन पर पड़े बिना नहीं

रह सकता। मस्तक पैरों की शक्ति के सहारे ही ऊँचा रहता है। मस्तक की शोभा पग के कारण है। निर्धन वर्ग को पैर के समान मान लें और धनवानों को मस्तक समान मान लें तो धनवान् निर्धनो का भाग लेकर ही बने हैं। धनवान के जीवन की रक्षा निर्धन की सहायता से ही होती है। अतएव जितनी रक्षा मस्तकको की जाती है उतनीही रक्षा और सन्मान पैरका भी करना चाहिए। कोई मस्तक को धोक नहीं देता, वरन् पैर को ही धोक दी जाती है। इससे यह कल्पना नहीं की जा सकती कि मस्तक की अपेक्षा पैर कम उपयोगी हैं।

सब को अपना मानो:—प्राचीन राजा अपनी प्रजा अपने अंगोपांग के समान समझते थे और घोर अंधकार में रात्रि के समय गलियों में चक्कर काटते थे और अपने प्रजाजन के सुख दुख की बात सुनते थे, उनका दुख दूर करते थे। राज्य की संपत्ति प्रजा की सम्पत्ति मानी जाती थी। राजा उसका केवल रक्षक-सेवक-गिना जाता था। औरंगजेब, नादिरशाह, जहांगीर, आदि राजा भी कुरान लिख कर या टोपियां बना कर अपना गुजर चलाते थे, तो अन्य महान् आदर्श राजाओं का जीवन कितना पवित्र होगा ? उनमें कितनी पवित्र भावना होगी ? यह सहज ही समझा जा सकता है।

स्वार्थ लोलुपता और सत्तावाद के कारण चोरी, लूट और खून आदि पाप बढ़ गये हैं। समानवाद विश्व में शान्ति फैलाने वाला एक आदर्शवाद है।

शान्ति के नाम पर अशान्ति—रुई या घास-फूस से

अग्नि को दबा देना असंभव है। यही नहीं वरन् ऐसा करने से वह और अधिक प्रचण्ड रूप धारण करेगी। इसी प्रकार राज्य में शान्ति की स्थापना के लिए कचहरियां, क़ैदखाने, वकील, न्यायाधीश, बैरिस्टर, सिपाही आदि ज्यों-ज्यों बढ़तेजाते हैं त्यों-त्यों अपराध भी बढ़ते जाते हैं और बढ़ते ही जाएँगे। जब तक यंत्र द्वारा या बुद्धि द्वारा होने वाली लूटखसोट बन्द नहीं होती तब तक शान्ति की आशा करना ही अनुचित है।

मन में स्वार्थ का विचार आने के साथ ही साथ मानवता का नाश होता है। और जहाँ मानवता का नाश वहाँ पाशविकता की विजय, अशान्ति का साम्राज्य हो! यह स्वाभाविक है।

शुप से अधिक पामर जीवन—रोगी, दुर्लभ, जख्मी, मरणासन्न या मरे हुये जानवर का मांस कौए और गिद्ध चोंचों से नोंच कर प्रसन्न होते हैं अथवा चोंचों में भरकर अपने बाल बच्चों को खिला कर खुश होते हैं। पक्षियों के बच्चों को नहीं मालूम कि यह दो चार तोला मांस का टुकड़ा जिसे वे प्रसन्नता पूर्वक खाते हैं—मरने की तैयारी करने वाले पशु को कितनी यातना देकर प्राप्त किया गया है? मानव-जगत् की भी यही हालत जान पड़ती है। कौआ और गिद्ध तो मरणासन्न या मरे हुये पशु का मांस खाते हैं पर आज का स्वार्थ लोलुप मानव अपने या अपने दो-चार कुटुम्बियो का पेट भरने के खातिर नित्य सैकड़ों मनुष्यों के जीवन धन से भी अधिक मूल्यवान पैसे को लूटता है और उसी पैसे से वह मेवा-मिष्टान्न खाकर गुलछर्रे उड़ाता है। और सगे संबन्धियों को दावतें देकर अपना अहो भाग्य मानता है।

खाने वालों को आनन्द आजाता है, पर उन्हें क्या पता कि यह श्री खंड, मलाई पूड़ी का भोजन कितने भयंकर पापों के फल स्वरूप तैयार किया गया है ? कितने हजार दीनों के शाप के बिंदुओं से यह पूड़ी का एक कौर या दूध पाक का एक घूंट बना है ? विवेक और विचार शक्ति प्राप्त होने पर भी उसका उपयोग न करके मनुष्य अविवेकी या विचार शून्य पशुसे भी अधिक पामर जीवन बिता रहा है।

शोषण वृत्ति का मूल—चील आकाश में चाहे जितनी ऊँची उड़े, पर उसकी दृष्टि तो जमीन पर पड़े हुए मांस के टुकड़े पर ही ठहरी रहती है। इसी प्रकार बुद्धिबल से मनुष्य चाहे जो उच्च तात्विक विचार करे, लेख लिखे या उपदेश सुने, फिर भी जब तक उसके दिल में सत्ता और सेठाई की भावना दूर नहीं हो जाती तब तक उसका मन केवल स्वार्थ भावना का पोषण करने वाले पापमय पतित विचारों मे ही वायुवेग से चक्कर लगाता रहता है।

आस्तिक और नास्तिक—जो पराई पीर को जानता है, जो अपने मान का बलिदान करके शत्रु का मान बढ़ाता है, जो अपने सर्वस्व का भोग देकर विश्व की सेवा के लिए रात-दिन तत्पर रहता है वह सच्चा आस्तिक है और जिसमें इन दिव्य गुणों का वास नहीं वह नास्तिक है।

परमार्थ से स्वार्थ—शरीर सेवा तथा कुटुंब सेवा के लिए जीवन पर्यंत अपरिमित भोग दिया जाता है फिर भी वह परोपकार नहीं समझा जाता तो अपनी सुविधा को देखकर मानव

समाज की सेवा करने वाले को परोपकारी कैसे माना जा सकता है? जो अपने मन में परमार्थ-परोपकार करने का विचार तक नहीं करता है वह सत्तावादी है—नास्तिक के समान है।

जमीन, नदी, तालाब, हवा अग्नि और पृथ्वी की सेवा अपार है। यह सब अपार सेवा करते है फिर भी उन्हें अपनी सेवा का भान तक नहीं है! तो साधारण सेवा करके मनुष्य कैसे फूल सकता है? उल्लिखीत निर्मालय जीवों की अपेक्षा मनुष्य में अनंत शक्ति है। अतएव मनुष्य से अनंत गुनी अधिक सेवा की आशा रखनी चाहिये। पर अनंत वें भाग भी मनुष्य की सेवा नहीं मालूम होती।

जंगली कौन?—पूर्वज जंगली असभ्य और अशिक्षित थे या वर्तमान में समझा जाने वाला सभ्य, शिक्षित और विज्ञानी मानव संसार, पशुओं को भी लज्जित करने वाला जंगली असभ्य, क्रूर और घातक है।

आजकल का सुधार—हमारे पूर्वजों में सेवा भावकी प्रधानता थी, आज कल के मनुष्य में स्वार्थ की प्रधानता है। पूर्वजों का जीवन सादगी और सेवा से ओतप्रोत था, आज के स्वार्थी और विलास की सड़न में सड़ने वाले मानव-संसार ने स्वार्थ भावना को पुष्ट करने के लिए यंत्रों का अन्वेषण किया है, जिससे ऐसी भयंकर लूट मची है कि कोई राक्षस भी इतनी लूट नहीं करा सकता। क्या इस संहारक लूट की कला को ही विज्ञान या सुधार कहते हैं? एक भी ऐसा गरीब, अनाथ और निराधार मनुष्य विश्व में न बच पाया होगा जो थोड़े

बहुत अंश में यंत्रों के सांचे में तेल गन्ना या अलसी की नाई पीला न गया हो अथवा तेल की तरह उकल न गया हो, रोटी की भांति सेका न गया हो और दानो की तरह दला कूटा न गया हो।

जंगली वृत्ति—चरखा चलाने वाले, बुनने वाले, कातने वाले, पींजने वाले, धोने सीने वाले, खोदने वाले, पानी भरने वाले, घास बेचने वाले, तिल पीलने वाले, आदि आदि दरजी, तेली, लुहार, सुनार, लकड़हारा, मजूर आदि के धंधों को आज के जंगली और विनाशी विज्ञान ने लूट कर लाखों की बलि लेकर एक दो को पोषण करने वाली प्रवृत्ति पैदा की है।

सेवाधर्म—पूर्वज, बिल्ली की तरह ताक कर निर्दोष चूहे का शिकार करके, उसके लोहू से अपने दांत रंग कर, अपनी शोभा नही समझते थे। उन्होंने सेवाधर्म का आदर्श पाठ सीखा था Love thyself last तू अपने आपकी चिन्ता सबके पीछे कर। पहिले विश्व के जीवमात्र की सेवा कर। उनकी सेवा करने के बाद जो शेष बचे उससे अपने जीवन के लिए संतोष मान। Service of poor is the service of god अर्थात् गरीबों की सेवा ईश्वर की सेवा है। वे इस आदर्श पाठ के पुजारी थे। मगर आज के वैज्ञानिक अधिक से अधिक लूट किस प्रकार हो सकती है, इसीलिये रातदिन विनाश के पथ का विचार कर रहे हैं। उन्हे इसके सिवाय और कुछ भान नहीं है।

राम के अनुयायी या रावण के?—तुमसे कोई

राम कहे तो तुम प्रसन्न होते हो और रावण कहे तो दुखी होते हो, पर जरा अपने अन्तःकरण को तो टटोलो कि तुम्हारी प्रवृत्ति कैसी है। राम जैसी या रावण जैसी ? यदि राम का अनुयायी बनना चाहते हो तो राम जैसी सात्विक वृत्ति धारण करो और तामसी रावण की वृत्ति का त्याग करो। रावण के काम करके राम के अनुयायी बनने की आशा तो न रखनी चाहिए।

देवों और ऋषियों के वंशज होकर पशु और राक्षस जिस सत्ता स्वार्थ और लूट मार से शर्मा जाय ऐसी लूटमार और स्वार्थ भावना रखना यह एक अच्छे नागरिक को शोभा नहीं देती।

मनुष्य का जीवन आदर्श आकाश दीप के समान होना चाहिए उसका जीवन विश्व के जीवों के लिए पथदर्शक होना चाहिए।

मनुष्य कब ?—अपनी स्वार्थ वृत्ति, द्वेश आदि की विषैली वृत्ति उपशान्त करने की पशुओं में बुद्धि नहीं है, मनुष्य में है। यही मानव की विशेषता है। अन्यथा स्वार्थ और सत्ता का लोलुपी मानव, मानव कहलाने योग्य नहीं है।

विश्वशान्ति—सत्ता, स्वार्थ बड़प्पन और विलास का नाश होगा तभी मनुष्य समानता और विकाश के पथ पर विचर सकेगा और विश्वव्यापी शान्ति का प्रसार कर सकेगा।

१८-विज्ञान विकाश के पथ पर या विनाश के ?

विज्ञान के द्वारा मानव भूमि रही या पाशवभूमि ? अग्नि नाज (धान्य) पका सकती है और जला भी सकती है। वैसे वैज्ञानिक साधन मनुष्यों का विकास कर सकता है और विनाश भी। वैज्ञानिक साधन जनसमुदाय के श्रेय के लिए काम में लाये जायं तो मानव भूमि स्वर्ग भूमि बनें, परन्तु वर्तमान में वैज्ञानिक साधनों द्वारा सिर्फ लूट खसोट और स्वार्थ वृति पुष्ट होती है अतः मानव भूमि पाशव भूमि या नारकीय भूमि हो रही है। जो साधन मानवों के श्रेय के लिये थे, वे स्वार्थ भावना के कारण से विनाश के निमित्त बन रहे हैं।

सुधारा या कुधारा ?—वर्तमान में अदालतों ने अदावतो (वैर-विरोध) का स्वरूप धारण किया है। कानून, कोर्ट, धारा शास्त्र, वकील, सिपाही आदि दल बढ़ रहा है त्यों त्यों जुर्म बढ़ते जा रहे हैं।

डाक्टर, दवाखाने और दवाइयाँ बढ़ रही हैं, त्यो त्यों भयंकर रोगों की उत्पत्ति व संख्या बढ़ रही है।

साहित्य लेखक, वक्ता और उपदेशक बढ़ रहे हैं, त्यों त्यों मानवों में अज्ञान, अनीति, द्वेष, ईर्षा आदि पाशव वृत्तियों में वृद्धि हो रही है।

मनुष्यों में वस्त्र पहिनने की मर्यादा सभ्यता बढ़ रही है, त्यों त्यों अंत: करण की असभ्यता और मलीनता बढ़रही हैं।

म्युनिसिपालिटियाँ, मेम्बर्स आदि बढा कर रास्ते, सड़कें, व मकानों की स्वच्छता बढ़ रही है, त्यों त्यो सड़कों के नीचे गटरों की दुर्गन्ध और मलीनता बढ़ती जाती है। जमीन में एकत्रित होने वाली मलीनता कब मूर्त स्वरूप धारण करेगी ? यह विचा-रणीय है।

गृहउद्योग किस लिए ?—वैज्ञानिक वेग बढ़ रहा है इतना ही उद्वेग बढ़ रहा है। वैज्ञानिक साधनो की बाहरी चटक मटक व सुन्दरता में रही हुई आंतरिक दुर्गन्धि-मलिनता-स्वार्थ वृत्ति लुट खोरी एवं राक्षसी वृत्ति के दर्शन विवेक चक्षु वालों को होने लगे हैं। जिससे गृह उद्योगका वातावरण पुन: फैल रहा है।

रक्षक या भक्षक ?—समस्त भूमंडल में चराचर अनंत प्राणी हैं। बड़े प्राणियों को छोटे प्राणियों की रक्षा करना उनका नैतिक कर्तव्य है, तथापि उसको भूल कर बड़े प्राणी छोटे प्राणियो का भक्षण करने का अपना अनादि अधिकार सम-झते हैं और तदनुसार जीवन बिताते हैं।

पक्षियों में-कवे, गीद्ध, चील आदि चिड़िया कबूतर वगैरह के अंडे खा कर अपना पेट भरते हैं। समुद्र के मच्छ, मछलियों को खा कर पेट भरते हैं। जंगल के प्राणी सिह वाधादि हिरण, खरगोश आदि से पेट भरते हैं। वे प्राणी अबोध है, समझ नहीं सकते। न अपन उन्हे समझा सकते हैं। अत: उनका अपराध क्षन्तव्य समझना चाहिए।

राक्षसों का विनाश—पूर्व काल में राक्षस मनुष्यों को मार कर खा जाते थे। वैसे नराधमों का नाश करने का राजाओं ने अपना कर्तव्य समझा था और उसकी परम्परा से आज खून (हत्या) करने वालों को फांसी दी जाती है। खून करने के इरादे वाले को, खून करने में मदद देने वाले को, और पक्ष करने वाले को भी फांसी दी जाती है, उसमें प्रजा की शान्ति मानी जाती है।

अपराधों के प्रकार—रातदिन चोरी करने वाले, कराने वाले तथा उस धन्धे को अच्छा मानने वाले को भी शिक्षा दी जाती है। व्यभिचार का प्रचार करने वाले व वैसे पुस्तक व चित्र बेचने वाले भी अपराधी माने जाते हैं। किसी लेखक की पुस्तक, कविता या लेख छपा कर उसकी आजीविका तोड़ने वाले को भी शिक्षापात्र दंडयोग माना जाता है। लेखक और आविष्कारक लोग भी अपने लेख और आविष्कारों के लिये कॉपीराइट लेते हैं, पेटंट कराते हैं।

श्री झवेरचन्दजी मेघाणी की तीन कविता का बिना आज्ञा के फोनोग्राफ की रेकार्ड कंपनी ने रेकार्ड में ली। जिसके नुकसान बदल ३०००) रुपये कोर्ट ने दिलवाये और रेकार्डों का नाश करने का हुक्म मिला।

नरोत्तम भाउ और नेशनल बैंक की सोने की थप्पी (लगड़ी) पर N.B. मार्क समान होने से कायदेसर व्यवस्था करनी पड़ी थी।

कोई दूकानदार किसी प्रसिद्ध दूकानदार का नाम या बॉर्ड अपनी दूकान या ऑफिस पर रख नहीं सकता। किसी को भी

किसी के सम्पत्ति धन को नुकसान पहुँचाने का हक नहीं है। तो जीवन धन के नाश करने का अधिकार हो ही कैसे ?

विज्ञान के विनाशक आविष्कार—पूर्व के रण संग्राम में तलवार भाला, बरछी या बन्दूक आदि का उपयोग होता था, जिससे अल्प मनुष्यों का संहार होता था, परन्तु आज का विज्ञानी युग २४ घण्टे में अपने विषैले गैस द्वारा भूमण्डल के १५० क्रोड़ मनुष्यों का संहार करके संसार को श्मशान समान बना सकता है।

विज्ञान युग की परिभाषा—वर्तमान वैज्ञानिक युग की परिभाषा यही है, कि वैज्ञानिक सहायता द्वारा समस्त मनुष्यों की मानसिक, वाचिक, कायिक एवं आर्थिक शक्तिरूप सम्पत्ति के बदौलत सौ, दो सौ श्रीमन्तों का विशेष सम्पत्तिवान होना।

मकड़ी और मक्खी—वैज्ञानिकों या श्रीमन्तोकी दृष्टि में अज्ञानी व निर्धनों की स्थिति मकड़ी के जाल में फंसी हुई मक्खी जैसी है। मकड़ी निर्माल्य और शक्तिहीन होती है। दिवार पर चढ़ते २ अनेक बार गिर जाती है और एकाधवार सफल होती है, जब ऊंचे चढ़कर आकाश मे जाल विछाती है। उस जाल को आकाश में उड़ते छोटे जन्तु विश्रामस्थान समझ कर बैठने जाते हैं तो फंस जाते हैं, मकड़ी के लक्ष्य हो जाते हैं। मकड़ी मक्खी आदि का सत्व चूंसकर कलेवर (मृतदेह) छोड़ देती है। इस प्रकार एक २ मकड़ी प्रतिदिन अनेक जंतुओं का सत्व चूस कर अपना पेट भरती हैं।

मकड़ी की जाल और वैज्ञानिकवाघ—मकड़ी

अपनी जाल में चुपचाप छिप कर और जाल के आश्रय का प्रलोभन देकर अपनी कूट नीति से निर्दोष और प्राकृतिक जीवन वाले प्राणियों का जीवन संहार करती हैं। ठीक उसी प्रकार प्राकृतिक जीवन जीने वाले सात्विक भावना वाले निर्दोष आत्माओं के सत्व को वैज्ञानिक विज्ञान व धन के बल पर चूसकर अपना पेट भरते हैं, समृद्ध बनते हैं, विलास करते हैं और उसी में जीवन की सफलता मानते हैं।

छोटे और बड़े जुआरी—पाई पैसे की हारजीत खेलने वाले, ऑकफर्क की छोटी हारजीत करने वालों को सरकार अपराधी समझ कर दंड देती है। दूसरी तरफ करोड़ों का सट्टा खेलने वाले और घुड़दौड़ (races) में हजारों की हारजीत करने वालों को साहूकार समझ कर मानवंत इन्ल्का राय बहादुर, राजा बहादुर, दीवान बहादुर, सर, जे० पी०, नाइट आदि प्रदान किये जाते हैं।

छोटे और बड़े चौर—किसी की कविता लेख या दूकान का नाम या मार्का चौरनेवाले को, खेत से सेर दो सेर धान्य चौरने वाले को, किसी की गाय बकरी का दूध चौरनेवाले को, रास्ते में गंदगी करने वाले को, असभ्य पेम्फलेट बाँटने वाले और छापने वाले को अपराधी माने जाते हैं और बड़ी सजा दी जाती है, किन्तु विश्वव्यापी बलात्कार, लूंटमार, मिथ्या प्रलोभन, विषय विलास वर्धक विनाशक सायन्स पैदा करने वाले और प्रचार करने वाले को अपराधी मानने का कानून नहीं है। कैसा विचित्र न्याय कानून है!

अनार्य प्रजा का देश कौनसा ?—तुर्किस्तान. अफगानिस्तान और ईरान जैसे राज्य अपने राज्य में पशु धन की प्रति पालना करते है। जर्मनी ने डाक्टरी प्रयोग के लिए भी पशु-वध न करने का फरमान निकाला है। शाह अमानुल्ला खां जब भारत आये थे, तब आने के पहिले ही उन्होंने जाहिर किया था कि, मेरे लिए एक भी गाय आदि पशु धन का नाश किया जायगा तो मुझे काफी दुःख होगा और पीछा लौट जाऊँगा। दूसरी ओर भारत में प्रति वर्ष ४० लाख पशु कटते हैं ? विचारिये कि अनार्य प्रजा का देश कौनसा ?

पशु वध के टेक्स (Tax) **का उपयोग**—पशु धन की रक्षा के लिए मांसाहारी प्रजा जागृत हुई है। परन्तु धर्म प्रधान भारत में चर्बी वाले कपड़े के लिए, चमड़े, लोहू व मांस के लिए आदि अनेक कारणों से अगण्य पशुओं का वध होता है। पशुवध की आज्ञा म्युनिसिपैलिटी के दया धर्मी सभ्यो को तथा प्रमुखो को नियत संख्या में देनी पड़ती है। पशु वध की आज्ञा बदल म्युनिसिपैलिटी एक भैंस के रु० १५) और गाय का रु० ११) टेक्स लेती है। ऐसे Tax पर शहर सुधराई निभती है। इस धन से शहर की सुधराई, स्कूलें और सफाखाने चलते हैं। और इन संस्थाओं का लाभ जीवदया प्रतिपाल समाज सहर्ष लेता है। स्कूल, सफाखाने, सुधराई आदि संस्थाओं में पशु वध का टेक्स जमा होता है, ऐसा शायद कइयों को मालूम भी नहीं होगा कल्पना भी यहीं आती होगी।

आर्य व अनार्य देशका पशुधन—ऑस्ट्रेलिया जैसे

अनार्थ देश में चार लाख की जन संख्या है। और गाय जैसे बड़े पशु १२ करोड़ हैं। भारत जैसे ३५ क्रोड़ की जन संख्या वाले देश में सिर्फ चार क्रोड़ पशु है। आस्ट्रेलिया से भारत में ७५ वें हिस्से की जन संख्या है और पशुधन भारत से तीन गुना अधिक है। आस्ट्रेलिया में भारत से हजारों गुणा अधिक पशु धन है। अन्य देशों की अपेक्षा भारत पशु धन में अत्यधिक दरिद्र है और इस दरिद्रता में प्रतिदिन वृद्धि होती रहती है।

पशुवध के अंक— भारत में प्रतिवर्ष ४० लाख पशु कटते हैं। जिसमें २ लाख पशुओं का मांस भारत के काम में आता है और ३८ लाख पशुओं का मांस विदेश जाता है। भारत में ३॥ लाख कसाई खाने है और विज्ञान के प्रताप से बेकारी बढ़ने के कारण काश्तकारी और धान्य की न्यूनता से व धान्य की महँगाई के कारण भारत के बीस करोड़ मनुष्य मांसाहारी बने हैं। इसके अतिरिक्त पिछले दशवर्षों से बीस लाख पशु विदेश में कटने के लिए भेजे गए थे। वैज्ञानिक यन्त्रों से पशू कटते हैं। उनका मांस सुखाया जाता है और विदेशमें भेजा जाता है। इस प्रकार विज्ञान ने भारत के पतन के लिये ही अनेक विधियों से यत्न किये हैं।

विनाश के पथ पर विज्ञान—पशुवध रोकने के लिए अनेक उद्यम करने पर भी निष्फलता हुई है। वर्तमान राज्य शासन और श्रीमन्त लोग पशुवध के हित के लिए कुछ भी न कर सके तो भी अपना नैतिक कर्त्तव्य के तौर पर मानव समुदाय के हित के लिए विचार करना आवश्यक है। इस प्रकार

सम्पत्ति धन और जीवन धन की लूट खसोट विज्ञान करता रहेगा तो अन्त में विज्ञान का ही नाश होगा।

एक गडरिया गाय भेंस बकरी से दूध निकाल देने के बाद उनके लोही मांस हड्डियां चूसना प्रारम्भ करे और गायों का जीवन विच्छेद करे वह उसकी अज्ञानता मात्र है। इस प्रकार करने वाला अपने पैर पर कुल्हाडी मारने की धृष्टता कर रहा है। वैसी स्थिति वर्तमान में श्रीमन्तो की और विज्ञानियों की है।

महालूट—विज्ञान पूजक श्रीमन्तोंकी ऐक्यता (Companies)आज के युग में चोर लुटेरे और खूनियों की ऐक्यता से अधिक भयंकर है। बाबर देवा और बावला आदि केलूट और हत्या की मर्यादा थी, परन्तु वर्तमानके वैज्ञानिक लूटेरों की लूट अमर्याद है।

मुहम्मद गजनी, सिकन्दर, औरङ्गजेब आदि की लूट त्रास, बलात्कार और मानव संहार की अपेक्षा विज्ञान की लूट त्रास और संहार विशेष भयंकर और विश्व व्यापी है।

विज्ञान की चक्की में पिसाते मनुष्य—भारत के ७ लाख ग्रामों में और ३५ करोड़ मनुष्यों पर उसकी एक सी असर होती दीखती है। विज्ञान की राक्षसी चक्की में भारतीय ३५ करोड़ की जनता नाज की तरह निर्दयता पूर्वक पीसी जा रही है। इनके रक्त से कुछ दिन के बाद ही अच्छे लाल शरीर और इनके मांस से अपने शरीर को पुष्ट और मजबूत बना कर ३५ करोड़ के भूख मरे से वे वैज्ञानिक श्रीमतों के नित्य नये पक्वान्न, बाग, बंगले, गाड़ी, वाड़ी व लाड़ी की मौज कर रहे हैं।

विज्ञान के पहले का जमाना—विज्ञान

प्रभु महावीर के युग में भारत में गाय के दस, बछड़े के चार, बैल के ६ और भैंस के आठ पैसे कीमत थी। उस वक्त १ पैसे १५ मन दूध और पैसे का चार सेर घी मिलता था। राजा चन्द्र गुप्त के जमाने में १ पैसे का २५ सेर दूध और २ सेर घी मिलता था। ये भाव वैज्ञानिक पाठको को लेखक की मनोकल्पना मानकर हास्य करावेगा। और विचारकों के नेत्र में से अश्रुधारा बहावेगा। जैनों के मंदिरों में घी की बोली बुलाई जाती है। उसमें भी २॥ रुपये मन का भाव गिना जाता है। मुगल जमाने में २॥ रुपये मन का भाव था। यह इतिहास प्रसिद्ध है।

जिस भारत में घी और दूध बेचना पाप माना जाता था। उस देश की वर्तमान स्थिति विचित्र होगई है।

विज्ञान का प्रताप—पूर्व काल में जिस भाव से घी मिलता था उस भाव का दूध, दूध के भाव की छाछ, गुड़ के भाव खल, शक्कर के भाव के नमक और अनाज के भाव का घास आज नहीं मिलता है। यह किसका प्रताप? मात्र विज्ञान युग का।

भारत का आध्यात्मिक और नैतिकपतन—विज्ञान प्रतिदिन बढ़ रहा है। जिसके प्रताप से भारत भूखमरा, असत्य, अन्याय, ईर्ष्या, निन्दा और कलहमयी जीवन जीकर मरण संख्या बढ़ा रहा है। भारत का मरण प्रमाण देखने से २३ वर्ष की औसत आती है।

विज्ञान जल, स्थल, आकाश के मार्ग मे अपने राक्षसी पंखो के द्वारा कत्लेआम करता हुआ आगे बढ़ रहा है।

वैज्ञानिक लूट और त्रास—पानी निकालना, पीस ने

खांडना पकाना, धोना, सीना, कातना, बुनना, लकड़ी पत्थर और घास काटना, उठाना, आदि गरीब स्त्री पुरुषों के मजदूरी के धन्धो को विज्ञान ने छीन लिया है। जिससे गरीबो को वेकारी से मरना पड़ता है। इस त्रास को जुलम या बलात्कार समझने की बुद्धि भी मानवों मे नही रही है।

दर्जी, घोबी, तेली, सुनार, लुहार, कुम्हार, नाई, धोवी, खाती, चमार आदि कारीगरो के धन्धे भी यन्त्रो ने वैज्ञानिक कारखाने करके छीन लिये हैं। बड़े शहरों में भिष्टा उठाने का मेहतरों का रोजगार भी वैज्ञानिक यन्त्रो ने छीन लिया है। जिससे वे लोग मारे भूख के आर्य धर्म से भ्रष्ट होकर अनार्य और मांसाहारी बन रहे हैं। पीसने और दलने की मिलो ने लाखों अनाथ भाइयों की तथा विधवा बहनों की रोटी छीनली है। इस प्रकार हजारों और लाखों की रोटी छीन कर थोड़े श्रीमन्त और कारखाने वालों का सीरा पुड़ी का भोजन होता है।

निःसत्व पदार्थ--घी, मक्खन आदि पदार्थ अमृत तुल्य हैं। किन्तु उसका विशेष मन्थन किया जाय तो विष बनता है। रोटी या घास को अग्नि पर मर्यादा से पकाया जाय तो वे खाद्य पदार्थ होते है अन्यथा अखाद्य (फैकने योग्य) बनते हैं। पहले जब से भारत में दूध में से मक्खन निकालने के यन्त्र आये है तभी से Separate (बचा हुआ निःसत्व दूध) को फैंका जाता था परन्तु आज उस निःसत्व दूध से खीर, रबड़ी, श्रीखंड, दही आदि बनाकर जनता को खिलाया जाता है। उसी प्रकार जो पदार्थ .कृतिक साधनों के स्थान पर यान्त्रिक साधनों से खांडने, पीसने

कातने, बुनने में आते हैं। इन से पदार्थों की सात्विकता नष्ट होती है जिससे आटा दाल चावल कपड़ा आदि Separate दूध की तरह बिना सत्व के हो जाते हैं और ऐसे निःसत्व खान पान से पशु और मनुष्य पोषक तत्व के अभाव से निःसत्व होते जाते हैं।

भारत की अज्ञानता-स्वास्थ्य तथा धर्म का नाश

चीन देश पाकशास्त्र में अधिक चतुर है। वहां के पाकशास्त्री रसोइयों को यहां धारा शास्त्री जितना-बारह वर्ष तक अभ्यास करना पड़ता है। बाद में उन्हे पाकशास्त्री का प्रमाण पत्र मिलता है। चीन मे चांवल का पानी (ओसायण मांड) का उपयोग राजा व श्रीमन्तों मे होता है और निःसत्त्व चांवल घास रूप में गरीबों को या पशुओ को दिये जाते हैं अथवा फैंके जाते हैं। कवि सम्राट टागोर ने चीन की सफर में मांडके बाद चांवल मांगे, जब उस देश में मांड निकाले चावलों की बेकद्र समझकर उन्हें आश्चर्य हुआ। भारत मे तो मांड निकाले हुए चावल खाने का ही रिवाज हो गया है जो प्रायः निःसत्व होगये होते हैं। मांड निकाले हुये खुले हुये चांवल खाने में श्रीमन्ताई व स्वाद प्रियता समझी जाती है। भूल से कोई बहिन चांवल का मांड न निकाल कर पकावे तो उसे रसोई बनाना न आने का प्रमाणपत्र मिल जाता है। सद्भाग्य से महात्मा गांधी ने गृह उद्योग का विषय उठाया है और इस पर विचार हो रहा है। इससे कुछ लोग हाथ से खांडे हुये चांवल और हाथचक्की से पीसे आटे की कदर करने लगे हैं। मशीनों से काम कराने में कम खर्च होता है और हाथों से अधिक खर्च होने की मान्यता भी मिथ्याभ्रम है।

मशीन में पीसाने पर आटा उड़ जाता है। फी मन ढाई सेर की घट लगती है। दूसरे के कंकर अपने आटे मे आते है। मांसाहारी आदि के अशुद्ध वर्तनों का नाज अपने धान्य के साथ मिलता है। जन्तु वाला नाज भी उसी में पीसा जाता है और विटामिन (सात्विक तत्वों) का नाश होने से आटा निःसत्व हो जाता है, जिसको खाने से अनेक प्रकार के रोग भी होते हैं। रोग होने से नौकरी धन्धे छोड़ने पड़ते हैं, आय बंद होती है, डाक्टरों के या वैद्यों के बिल चढ़ते हैं, खुशामद करनी पड़ती है, धर्म भ्रष्ट करने की औषधियाँ लेनी पड़ती है। पीसने खांडने के व्यायाम के अभाव से स्त्रियो की निर्माल्यता बढ़ कर अनेक प्रकार की बीमारियाँ बढ़ती हैं। हिस्टोरिया आदि भी स्थान स्थान पर बढ़ गये हैं। इस प्रकार वैज्ञानिक शस्त्रों को स्नेहि (सुभीते के) समझकर सत्कार किया जाता है, उतना ही भारत की तन, मन, धन जनकी आध्यात्मिक और बौद्धिक शक्ति का नाश होता है।

विज्ञान द्वारा व्यापक लूट—घास, लकड़ी बेचने का धंधा श्रीमन्तों ने अपने हाथों लेकर लाखो घास बेचने वाले और लकड़ी बेचने वालो का धन्धा छीन लिया है और इससे प्रसन्न होते हैं।

हेअरकटिंग सैलूनो और वासिंग कम्पनियों ने और होटलों ने लाखों नाई, धोबी और हलवाइयो के धंधे छीन कर चोरी करना सिखाया है।

ऑइल मीलों ने लाखो तेलियों को बेकार बना कर रुलाये हैं। कपड़े के मिल मालिको ने करोड़ो धुनकने वाले, कातने वाले, बुनने वालो को बेकार बनाया है।

कुम्हारो का रोजगार भी पोटेरी कु ०ने छीन लिया है। विज्ञान पूजक श्रीमन्तों के त्रासका, निर्दयता का, क्रूरता का घातकता का वर्णन कहां तक करें ? 'आकाश फाटे वहां कारी कहां लगावें समुद्र में आग लगे तो कैसे बुझावे ? एक-एक यंत्र लाखो मानवो के विनाश और संहार का शस्त्र है तो सैकड़ो प्रकार के यंत्रों का और करोड़ो मनुष्यो की पीड़ा का वर्णन कैसे संक्षेप में किया जाय ?

यह तो सिन्धु में से विन्दुरूप विज्ञान पूजक श्रीमन्तों के त्रास का नमूना मात्र बताया है।

कारखाना या कसाई खाना—विज्ञान पूजक दयालु श्रीमन्त कभी चींटी आदि की दया पालते हैं, कीड़ी नगरे आटा, घी, शक्कर से भरते है और मनुष्य के मुख की सूखी रोटी छीनकर यंत्रालयों में कार्य करा कर यंत्रों की रज से मानवों के फेफड़ों को बिगाड़ कर अकाल मृत्यु कराते हैं। रात दिन यंत्र चलाकर चा कॉफी, बीड़ी आदि पदार्थों का सेवन करना पड़ता है। मिलो मे स्त्री:पुरुष एक साथ काम करने से व्यभिचार आदि अनेक जीवन विनाशक दोष उत्पन्न होते है।

दूध के स्थान पर दारू—पहिले गरीब वर्ग गायें पालता था, आज खुराक के लिए मुर्गे बतकें पाली जाती हैं। दूध के स्थान पर दारू पीते है। मंदिरों मे जाने की बजाय विलास व विकारवर्धक नाटक, सिनेमा मे जाते है। ऐसा जीवन बिताकर अपने वंश मे से मानवता और आर्यता के तत्वों का नाश करते हैं।

पाप के पांतिदार—इस महाभारत पाप का पांतिदार प्रत्येक भारती है, कि जो विज्ञान का पूजक है। चोरी करे, चोर को सहायता दे, चोर को उत्तेजन देवे, चोर को सत्कार करे, चोर की वस्तु खरीदे, चोर को घर में रक्खे, चोर का बचाव करे, और चोर के यशोगान करे, सो चोर समझा जाता है। इसी तरह विज्ञान पूजक धन के महा लोभी श्रीमंत जो कि भारत की वेकारी के जन्मदाता तथा उत्पादक है। वे क्रोड़ो निराधाप अनाथ दुःखी मनुष्यो के मुख का सूखी रोटी छीन लेते है। उनमें से दया के अँकुर सर्वथा नष्ट हुए है। उनके मानव शरीर में पशुता का रक्त बह रहा है। पशु के माँस के स्थान मे मानव की कठोर हड्डियाँ है। उनका प्रत्येक कवल गरीबो के जीवन धन का बना हुआ है। उनके महल, निवास और यंत्रालयों में इटों के स्थान पर मनुष्य की हड्डियाँ चूने की स्थान में मानव के मांस पिंड और पानी के स्थान मानव का रक्त लगा है। किंबहुना।

यंत्रालयों को आवाज सुनो—बंबई, अहमदाबाद, और करांची के भव्य भवन और विशाल यन्त्रालयों में से निकलती आवाज सुनने के लिए जिसको कान है, देखने के लिये आँख है, सूंघने के लिये नांक है, स्पर्श करने के लिये त्वचा है वे अपने अंगों पांग द्वारा करोड़ो मनुष्यों के हाय रुदन और आक्रन्दन सुन सकेंगे, देख सकेंगे, छू सकेंगे। जो बिना चैतन्य के जड़वादि विज्ञान पूजक है, उन्हे सिवाय जड़ता के अन्य क्या भाव हो सके? उनसे क्या शुभाशा रखी जासके।

सत्य दया—गौशाला, पिंजरापोल, अनाथालय आदि के

दयालु देव ? कीड़े मकोड़े को पालने वाले ? आपकी धर्म भावना तभी श्रेष्ठ मानी जायेगी जबकि आप करोड़ो मनुष्यो को विज्ञान के कत्ल खाने से कटते बचायेंगे। उनके लिए पूर्ववत् पशुशाला के स्थान पर गृह उद्योग रूप मानव शाला, अनाथालय के स्थान पर आर्यालय खोलकर विज्ञान के कत्ल खाने से मनुष्य को बचाओ। तब ही आपके जीवन की और आपके जीव दया की सार्थकता होगी।

धर्मोपदेशक छोटे जीवों की दया का उपदेश देते हैं किन्तु उसके साथ रातदिन चलने वाली कपड़े की तेल की, आटे की, चावल की, दाल की, वर्तनो की, मानव संहारक मीलें बनाकर पाप के विशेष भागीदार न बनें। महारम्भ और महा परिग्रह रूप नार-कीय स्थान का सेवन न करें। इसके लिए उपदेश द्वारा मनुष्यो की तन मन और जन की सम्पति में वृद्धि हो ऐसे कल्याणकारी गृह उद्योग में अपनी सम्पत्ति का सदुपयोग करावे तो लाखं और करोड़ों मनुष्य अकाल मृत्यु से बचें। आर्य से अनार्य मार द्वारो नही। इस प्रकार उपदेश दाता और श्रोताओं को कितना महान् लाभ हो सके।

आशा है कि जीव दया के प्रचारक उपदेशक और श्रोतागण अपने उपदेश तथा प्रवृत्ति का प्रवाह वदलेंगे तो उनके खुद के श्रेय के साथ लाखों और करोड़ो मनुष्यों का श्रेय हो सकेगा और जीवन सफल होगा।

ॐ शान्ति